अशोक कुमार गौड़ प्रणीत

# यज्ञ-रहस्यम्

[इन्दू हिन्दी टीका से अलंकृत]

प्रकाशक
ठाकुर प्रसाद एण्ड संस बुकसेलर
राजादरवाजा, वाराणसी

मूल्य [illegible]०/

वेदाचार्य पं० दौलतराम गौड़ स्मारक ग्रंथमाला की २५ वीं पुष्पलता

अशोक कुमार गौड़ प्रणीत—

# यज्ञ - रहस्यम्

[ "इन्दु हिन्दी टीका से अलंकृत" ]

लेखक- टीकाकार

**श्री अशोक कुमार गौड़**

अध्यक्ष

भारतीय कर्मकाण्ड मंडल

वाराणसी

प्रकाशक —

**ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर**

राजादरवाजा, वाराणसी-२२१००१

[प्र]थम संस्करण ] सन् १९८५ ई० [ मूल्य : [illegible]) रुपये

# समर्पित

वैदिक शास्त्र के अद्वितीय ज्ञाता

वैदिक वाङ्मय के जन्म सिद्ध अधिकारी

धर्मप्राण-पर दुःख कातर

यज्ञ मीमांसा; मृत्युरहस्य, दुर्गापूजा पद्धति

आदि

शताधिक वैदिक ग्रंथों के लेखक

उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा संमानित

ऐसे मेरे पितृव्य

याज्ञिकसम्राट

**स्व० पं० वेणीराम गौड़ वेदाचार्य**

के

पुनीत चरण कमलों में

सादर-समर्पित

विनीत–

—अशोक कुमार गौड़

लेखक–टीकाकारके पितृव्य—
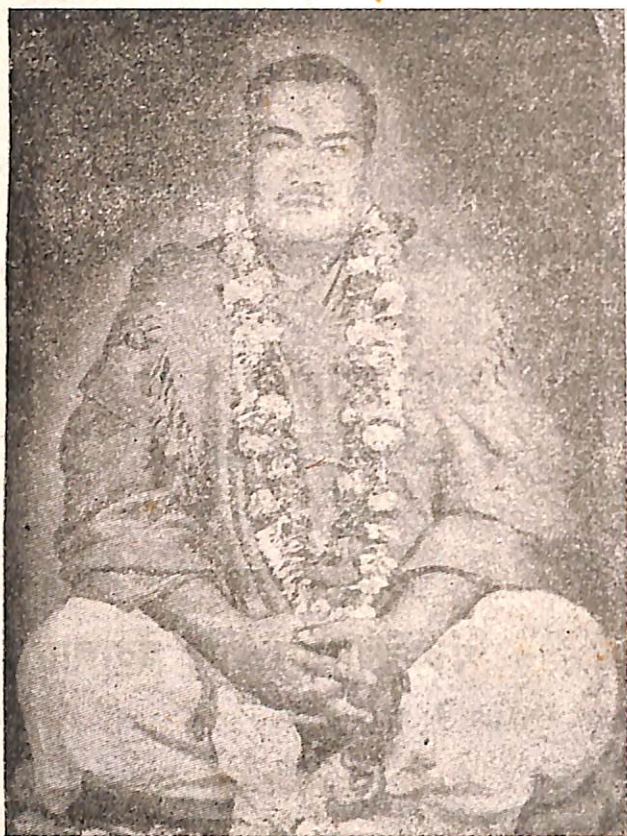
स्व० पं० वेणीराम गौड़ वेदाचार्य
भूतपूर्व-वेदविभागाध्यक्ष व प्राचार्य
गोयनका संस्कृत कालेज
वाराणसी

# शुभ कामना संदेश

काशी के सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान स्वर्गीय पं० दौलत राम गौड़ वेदाचार्य के सुपुत्र श्री अशोक कुमार गौड़ ने इन्दू टीका से अलंकृत 'यज्ञ रहस्यम्' नामक ( चार सौ पचीस ) पृष्ठों की इस पुस्तक में यज्ञ की समस्त क्रियाओं को अत्यधिक सरलता से प्रस्तुत किया है।

इस पुस्तक के माध्यम से समस्त यज्ञ की क्रियाओं को निष्पन्न कराया जा सकता है । इस प्रकार की पुस्तक की आवश्यकता चिर-काल से बनी हुई थी, जिसे अपने अथक परिश्रम से श्री अशोक कुमार गौड़ ने पूर्ण किया है ।

मैं श्री गौड़ के इस प्रयास का स्वागत करते हुए उनके आगामी उज्जवल भविष्य की कामना करता हूँ ।

शुभ कामनाओं सहित–

**श्यामलाल यादव**
संसद सदस्य

# संक्षिप्त जीवन-परिचय

## याज्ञिकसम्राट स्व० पं० वेणीराम गौड़ वेदाचार्य—

काशी के वैदिक विद्वान श्री पं० वेणीराम गौड़ महामहोपाध्याय पं० विद्याधरजी गौड़ के तृतीय सुयोग्य पुत्र थे। आपके बड़े भाइयों में हिन्दी के ख्यातिलब्धसाहित्यकार स्व० बलदेव प्रसाद मिश्र तथा वेद व धर्मशास्त्र के मूर्द्धन्य विद्वान स्व० पं० दौलतराम गौड़ वेदाचार्य थे, आपके दो छोटे भाईयों में हिन्दीसाहित्य के प्रसिद्ध पत्रकार श्री माधव प्रसाद मिश्र हैं। सबसे छोटे भाई वरिष्ठपत्रकार तथा नगर संवाददाता स्व० दीनानाथ मिश्र थे।

प्रशस्तललाट, चमकतेनेत्र, गौरवर्ण, पुष्टदेहयष्टि पर घुटनेतक धोती और कन्धेपर दुशाला या रेशमीदुपट्टा रखें, गौड़ जी को नियमित रुप से गोयनका संस्कृत कालेज जाते हुए देखा जा सकता था।

वैदिकशास्त्र के मूर्द्धन्य विद्वान पं० वेणीराम गौड़ का जन्म सन् १९१६ ई० में हुआ था-जो समय संस्कृत और भारतीयसंस्कृति के लिये संक्रान्तिकाल था, भारतवर्ष में विदेशी शासन होने के कारण उस समय अंग्रेजी को प्रधानता दी जाती थी, किन्तु पण्डितप्रवर-विद्याधरजी गौड़ ने युग प्रवाह के प्रतिकूल अपने पुत्रों को वेद, धर्मशास्त्र, मीमांसा तथा कर्मकाण्ड की ओर प्रवृत किया।

लगभग सातवर्ष की अवस्था में उपनयन संस्कार हो जाने पर, वेद व कर्मकाण्ड का सुविस्तृत सम्पूर्णज्ञान पं० वेणीराम गौड़ को अपने विद्वन्मूर्धन्य पिता की विरासत में मिला था।

लगभग १९ वर्ष की अवस्था में आपका पाणिग्रहणसंस्कार रुड़की के सुप्रसिद्ध रायसाहब ललिताप्रसाद जी की पुत्री से समपन्न हुआ।

गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज काशी से 'वेदाचार्य' परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त कलकत्ते से "काव्यतीर्थ" किया तथा आप अपने पिताश्री के समक्ष ही सन् १९३९ ई० में गोयनकासंस्कृतकालेज में वेदके प्राध्यापक नियुक्त हुए, सन् १९७२ ई० में वेदविभागाध्यक्ष तथा उसके पश्चात् दो वर्षोतक प्राचार्य पद पर भी रहे।

स्व० वेणीराम गौड़ मृदुभाषी, मिलनसार वैदिक विद्वान थे-उनका जीवन अत्यन्तसादगी का रहा, वेद के अर्थज्ञ विद्वान होने के साथ ही अंगो

सहित चारों वेदों के मर्मज्ञ विचारक एवं श्रौत-स्मार्त वैदिक यज्ञीय प्रक्रिया के प्रमाणिक टीकाकार भी थे, जिसके फलस्वरूप उत्तरप्रदेशसरकार ने सन् १९७५-७६ ई० में आपको ' वेद पंडित'' का पुरस्कार व सम्मान प्रदान किया ।'

वैदिक समारोह, यज्ञों के मंच से उनकी गुरुगम्भीर वाणी अपने अकाट्य तर्कों, विचारों की मौलिकता के कारण श्रोताओं के मानस में पैठ जाती थी । आपने अपने जीवनकाल में हजारों यज्ञों का आचार्यत्व किया ।

स्व० पं० वेणीराम गौड़ ने वैदिक शास्त्र पर शताधिक ग्रंथों की रचना व हिन्दी टीका की, जिसमें यज्ञ-मीमांसा, मृत्यु-रहस्य, नित्यकर्म विधिः, दुर्गापूजापद्धतिः आदि ऐसे ग्रंथ हैं, जिनकी भूमिका, परिशिष्ट और टिप्पणियों में उन्होंने अपनी छाप लगा दी है ।

इसी प्रकार दण्डकसंहिता, यज्ञमंत्रसंग्रह, श्रौतयज्ञपरिचय, यज्ञमाहात्म्य आदि ऐसे ग्रंथ हैं– जो उनकी अध्ययन शीलता और कुलपरम्परागत विद्वता के परिचायक हैं ।

यज्ञादि में अधिक जाने के कारण तथा वैदिकग्रथों के लेखन सम्पादन व हिन्दी अनुवाद करने में अतिव्यस्त रहने के कारण आपको अपने सामाजिक लोगों के परस्पर व इष्ट-मित्रों से सम्पर्क करने का कम अवसर ही मिलता था ।

७ सितम्बर सन् १९८३ ई० रात्रि के ११ बजे मात्र ६७ वर्ष की अवस्था में हृदयाघात से आपका नश्वरशरीर पंचतत्व में विलीन हो गया ।

आपके दो पुत्रों में प्रथमपुत्र डा० नरेश कुमार शर्मा ( अलीनगर ) मोगलसराय में डाक्टर हैं ।

आपके द्वितीयपुत्र पं० उमेश मिश्र गौड़ वेदाचार्य, शास्त्रार्थ महाविद्यालय वाराणसी में वेदाध्यापक हैं । ये समस्त यज्ञादिक क्रियाओं में बड़े निष्णात हैं ।

आपकी दोनों ही पुत्रियों का विवाह हो चुका है । आप अपने पीछे अपनी धर्मपत्नी, पौत्रादि छोड़ गये हैं ।

२४२ शहर दक्षिणी
वाराणसी

**डा० रजनी कान्त दत्त**
विधायक

# शुभकामना संदेश

वेद व धर्मशास्त्र के मूर्द्धन्य विद्वान स्व० पं० दौलतराम जी गौड़ वेदाचार्य के सुपुत्र श्री अशोक कुमार गौड़ ने वैदिक कर्मकाण्ड और श्रौत-स्मार्त यज्ञ कराने वाले याज्ञिक-पण्डितों के लिये इन्दु टीका से युक्त "यज्ञ-रहस्यम्" नामक इस पुस्तक का निर्माण किया है।

वैसे तो यज्ञादि से सम्बन्धित विषयों को लेकर अनेकानेक पुस्तकों का प्रकाशन हुआ है। किन्तु लगभग ४२५ पृष्ठों की इस "यज्ञ-रहस्यम्" नामक पुस्तक में अथ से इति पर्यन्त तक यज्ञ से सम्बन्धित सभी विषयों का समावेश टीकाकार श्री अशोक कुमार गौड़ ने अद्वितीय रूप से किया है।

मैं टीकाकार तथा सम्पादक श्री अशोक कुमार गौड़ को उनकी इस २५ वीं कृति के प्रकाशन के उपलक्ष्य में हार्दिक बधाई देते हुए, उनके आगामी सुन्दर भविष्य की कामना करता हूँ।

२४२ शहर दक्षिणी,
वाराणसी

**डा० रजनी कान्त दत्त**
विधायक

काशी के विद्वानों की दृष्टि में यज्ञ रहस्यम्-

'यज्ञ रहस्यम्' नामक इस पुस्तक का आश्रय लेकर समस्त यगादि कर्म को विधिवत् कराया जा सकता है।

— वंशीधर मिश्र वेदाचार्य

'यज्ञ रहस्यम्' नामक इस पुस्तक की रचना अद्वितीय रूप से की गयी है।

द्वारका प्रसाद शर्मा 'ज्यौतिषाचार्य'
भृगु संहिता भवन, वाराणसी

यज्ञों के विषय पर लिखी गयी यह पुस्तक अपने आप में अद्वितीय है।

—देवकीनन्दन शास्त्री ज्यौतिषाचार्य 'स्वर्णपदक प्राप्त'
भृगु ज्यौतिष कार्यालय, वाराणसी

# भूमिका

वैदिक धर्म में यज्ञ को वेद का प्राण और आत्मा कहा गया है। 'यज्ञ' शब्द 'यज' धातु के योग से निष्पन्न होता है।

## यज्ञ क्या है ?

आज के इस वैज्ञानिक युग में पाश्चात्य संस्कृति की ओर आकर्षित लोग कहते हैं कि-यज्ञ क्या है ? इसका प्रमाण हमारे ग्रंथों में इस प्रकार है।

श० ब्रा० १।७।१।५ में लिखा है कि—

यज्ञो वै श्रेष्ठतरं कर्म

तैत्तिरीय संहिता १।७।४ में लिखा हैं कि—

यज्ञो वै विष्णुः

गोपथ ब्रा० पू० २।१८ में लिखा है कि—

प्रजापतिर्वै यज्ञः

मै० शा० ४।३।७ में लिखा है कि—

इन्द्रो वै यज्ञः

## अथर्ववेद के अनुसार यज्ञ

"अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः"।

अर्थात्—संसार का उत्पत्ति स्थान यही यज्ञ है।

क्योंकि—यज्ञ को ईश्वर और धर्म का साक्षात् प्रतीक कहा गया है।

## यज्ञ तथा महायज्ञ

शास्त्रों के मतानुसार यज्ञ के दो भेद है—यज्ञ और महायज्ञ। जो स्वयं के लिए तथा पारलौकिक कल्याण के लिए किया जाता हैं, उसे यज्ञ कहते हैं। जो विश्वकल्याणार्थ किया जाता है, उसे महायज्ञ कहते है।

## वैदिक यज्ञों के दो भेद

१ः—श्रौतयज्ञ—श्रुतिप्रतिपादित यज्ञों को श्रौत यज्ञ कहा जाता है। इसमें श्रुतिप्रतिपादित मंत्रों का ही मात्र प्रयोग होता है।

२ः—स्मार्तयज्ञ- स्मृतिप्रतिपादित यज्ञों को स्मार्त यज्ञ कहा जाता है। इसमें वैदिक, पौराणिक एवं तान्त्रिक मंत्रों का ही प्रयोग होता है।

## पंचमहायज्ञ

ब्रह्मयज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ और मनुष्य यज्ञ इनको पंचमहायज्ञ की संज्ञा से विभूषित किया गया, 'पंच सूनाजन्य' दोषों की निवृत्ति के लिए प्रत्येक गृहस्थाश्रमी व्यक्ति को इन 'पंचमहायज्ञों' को प्रतिदिन करना चाहिये।

## यज्ञ की प्राचीनता तथा इसकी आवश्यकता

समस्त हिन्दूवर्ग व सनातनधर्मियों का प्रमुखधर्मग्रंथ वेद ही है। वेदों में ही कर्मकांड, ज्ञानकाण्ड तथा उपासना कांड का विस्तृत विवरण प्राप्त होता है क्योंकि—इसपवित्र भारतभूमिपर यज्ञ आज से नहीं अपितु प्रत्येक युग से होते आ रहे है।

क्योंकि गीता में कहाँ गया है—

नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरु सत्तम। गीता ४।३०

अर्थात्—हे अर्जुन यज्ञ न करने वाले को यह मृत्युलोक भी प्राप्त नहीं हो सकता फिर अन्य सुन्दर लोक की तो बात ही क्या है? प्रत्येक युग में समय-समय पर यज्ञादि होते रहे है—मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम ने स्वयं अश्वमेघ यज्ञ किया तथा धर्मराजयुधिष्ठिर ने स्वयं राजसूय यज्ञ किया तथा दुर्योधन ने स्वयं विष्णु याग किया।

उपरोक्त प्रमाणों से पूर्णतः सिद्ध होता है कि, जब से इस पृथ्वी का निर्माण हुआ है, उसी समय से यज्ञ होते चले आ रहे है।

जिस प्रकार से 'यज्ञ' हिन्दू जाति का अति प्राचीन वैदिक कर्म है। उसी प्रकार मनुष्य जाति भी अत्यन्त प्राचीन है। प्रत्येक युग में लोगोंने यज्ञ के द्वारा ही अपने मनोरथों को पूर्ण किया है। इसका कारण-कि उनके जीवन का यज्ञ एक उद्देश्य पूर्ण अंग बन चुका था, रामायण, महाभारत, गीता तथा वेदादि में यज्ञ क्यों होते थे, उनकी क्या आवश्यकता थी, इसके सम्बन्ध में अनेकानेक प्रमाण इस समय भी उपलब्ध हैं, जिसके कारण ही, आज के इस कलियुग में भी यज्ञ हो रहे हैं, क्योंकि यज्ञ की आवश्यकता आजके कलियुग में भी है।

## यज्ञ का महत्त्व

यज धातु से निष्पन्न 'यज्ञ' शब्द का महत्त्व प्रत्येक युग में चरम-सीमापर रहा है, क्योंकि यज्ञ ही समस्त मनोवांछित इच्छाओं तथा कार्यों का पूरक रहा है।

सनातन हिन्दूधर्म में यज्ञों का बड़ा महत्त्व माना गया है। इस धर्म में वेदों का जो महत्त्व है, वही महत्त्व यज्ञों को भी प्राप्त है, क्योंकि वेदों का प्रधान विषय ही यज्ञ है।

जैसे कि इस पर न्यायदर्शन (४।१।६२), मनुस्मृति (१।२३), सिद्धान्तशिरोमणि (गणिताध्याय, मध्यमाधिकारस्थ कालमानाध्याय ९ पद्य) गोपथब्राह्मण (१।४।२४), भगवद्गीता (४।३२)।

आदि में यज्ञ के महत्त्व का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

क्योंकि-यज्ञ से ही देवताओं ने स्वर्ग प्राप्त कर, असुरों को परास्त कर अमरत्व प्राप्त किया, यज्ञ से शत्रु भी मित्रवत् हो जाते है। यज्ञ से समस्त कष्टों का विनाश होता है। तथा स्वर्गकी प्राप्ति भी होती है। यज्ञ से ही वृष्टि होकर मनुष्यों का पालन-पोषण होता है।

यज्ञ के महत्त्व में निम्न प्रमाण—
यज्ञाः कल्याण हेतवः। (विष्णु पुराण ६।१।८)
यज्ञाः पृथिवीं धारयन्ति। (अथर्ववेद)
यज्ञैश्च देवानाप्नोति। (मतस्यपुराण १४३।३३)
यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः (अथर्ववेद ९।१०।१४)

## यज्ञ का प्रयोजन व कामना सिद्धि

यज्ञ के बहुत से प्रयोजन हुआ करते है, उनमें स्वर्ग की प्राप्ति भी एक पारलौकिक प्रयोजन है।

जैसे कि—अथर्ववेद संहिता में कहा है—
'यैरीजानाः स्वर्गं यान्ति लोकम्' (१८।४।२)।

इसी प्रकार न्यायदर्शन (१।१।३) ऐतरेय ब्राह्मण (१।२।१०) शतपथ ब्राह्मण (१२।४।३।७) तथा महाभाष्य (६।१।८४) में भी कहा है। यज्ञ में प्रत्येक देवता के नाम से आहुति दी जाती है, तथा देवताओं की पूजा होती है। तब उनकी प्रसन्वता से स्वर्ग की प्राप्ति स्वाभाविक है।

तभी भगवद् गीता में कहा है—
'देवान् देवयजो याज्ञि' (७।२३)। देवताओं का निवास होता है-स्वर्ग में। जैसे कि वेद में कहा है—
'दिवि देवाः' (अथर्व ११।७।२३), और अथर्ववेद (१८।४।३)।

यज्ञ का प्रयोजन केवल स्वर्ग की प्राप्ति नहीं होती, अपितु विविधकामनाओं की पूर्ति भी प्रयोजन हुआ करती है, उसके भी कारण देव पूजा ही हुआ करती है,

क्योंकि—देवता विविध कामनाओं को पूर्ण किया करते हैं।

तभी तो ऋग्वेद सं० में कहा है—
'यत्कामास्ते जुहुयः, तन्नो अस्तु' (ऋ० १०।१२१।१०)।

इस मन्त्र में भी हवन से विविध कामनाओं की पूर्ति सूचित की गई है।

'वयं स्याम पतयो रयीणाम्' इस उक्त मन्त्र के अन्तिम अंश से यज्ञसे विविध ऐश्वर्यों की प्राप्ति बताई गई। इस मन्त्र में प्रजापति देवता का वर्णन है, इसीलिए हवन में 'प्रजापतये स्वाहा' यह कहा जाता है।

## यज्ञ से विविध कामनाओं की पूर्ति

यज्ञों द्वारा विविध कामनाओं को पूर्ण करने वाले होने से ही महाभाष्य ( १।१।६३ ) में 'चक्षुष्कामं या जपाञ्चकार' इस उदाहरण में यज्ञ द्वारा नेत्रशक्ति दान रूप फल भी सूचित किया गया है।

न्यायदर्शन के ( २।१।६८ सूत्र के भाष्य में 'ग्रामकामा यजेत' यह वैदिक प्रमाण देकर यज्ञविशेष का फल ग्रामाधिपति हो जाना भी कहा है। (२।१।५७) सूत्र के न्याय दर्शन के भाष्य में 'पुकाम: पुत्रेष्टया यजेत' इस वैदिक प्रमाण से यज्ञ विशेष का फल पुत्र प्राप्ति भी सूचित किया गया है। इस प्रकार वृष्टि की कामना से कारीरी इष्टि ( यज्ञ ) भी हुआ करते है । इस भाँति शतपथ ( १३।२।६।३ ) में अश्वमेघ का फल तेज, इन्द्रिय, पञ्चब्रह्महत्या दूर होनी तथा लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। राजसूय यज्ञ का फल अकालमृत्यु का निवारण है।

जिन यज्ञों से विविध प्रकार के लाभ व कामना सिद्धि होती हैं, उन्हीं यज्ञों से संबन्धित 'यज्ञ-रहस्यम्' इन्दू हिन्दी टीका से अलंकृत पुस्तक आप सभी के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ–

वर्तमान समय में यज्ञों के विषय को लेकर विविध प्रकार की पुस्तकें उपलब्ध हैं और उनका उपयोग भी हो रहा है, किन्तु इस 'यज्ञ-रहस्यम्' नामक पुस्तक में मैंने तीन भागों का समावेश कर यज्ञ के महत्त्व पूर्ण विषयों का प्रतिपादन किया है।

जिसके द्वारा यज्ञ की समस्त क्रियाओं को अथ से इति पर्यन्त सुगमता से कराया जा सकता है।

आज स्मृति ही जिनकी अवशेषबची हैं । उन सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र शिवतुल्य अपने पितृव्य याज्ञिक सम्राट-स्व० पं वेणीराम गौड़ वेदाचार्य के पुनीत चरण-कमलों में इस पुस्तक को श्रद्धा सहित समर्पित करता हूँ ।

इसके लेखन व सम्पादन में मुझे जिन-जिन पुस्तकों से सहायता प्राप्त हुई है, तदर्थ उन विद्वानों का मैं आभारी हूँ। अपने गुरुवर श्रीद्वारका प्रसाद शर्मा ज्यौतिषाचार्य व मेरे ज्येष्ठ भ्राता तुल्य श्री पं० देवकी नन्दन जी ज्यौतिषाचार्य तथा अपने प्रियबन्धु आनंद शंकर शर्मा एम.ए ( हिन्दी, संस्कृत ) प्रवक्ता-गहमरइन्टरकालेज, गाजीपुर का मैं विशेष आभारी हूँ। जिन्होंने लेखन व हिन्दी टीका में अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया ।

इस पुस्तक के सभी फर्मों का संशोधन अत्यधिक व्यस्तता के कारण स्वयं नही कर सका अतः इस पुस्तक में जो भी कमी व अशुद्धि रह गयी है, उसे द्वितीय संस्करण में दूर करने का प्रयास करूँगा ।
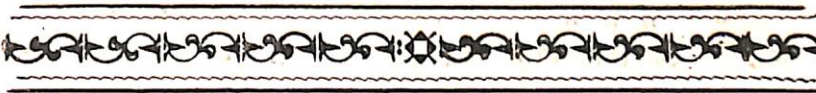
भारतीय कर्मकाण्ड मंडल<br>महामहोपाध्याय पं० विद्याधर गौड़ लेन<br>डी ७।१५ सकरकंदगली, वाराणसी

भवदीय<br>अशोक कुमार गौड़

# यज्ञ रहस्यम्

॥ प्रथमो भागः ॥

# विषय-सूची

## प्रथमो भागः


| अनुक्रमणिका | पृष्ठ संख्या |
|---|---|
| लक्ष्मी नारायण याग पद्धतिः | १ |
| गणेश याग पद्धतिः | ३८ |
| शिव शक्ति याग पद्धतिः | ६६ |
| वैष्णव याग पद्धति | ९१ |
| यज्ञों में आवश्यक गणेश आदि का अर्चन प्रकार | ९८ |
| योगिनी का स्थापन विष्णु-यागादि यज्ञों में | १२० |
| वास्तु पूजन महारुद्रादि यज्ञों में | १५१ |


## द्वितीयो भागः


| अनुक्रमणिका | पृष्ठ संख्या |
|---|---|
| विष्णु याग स्वाहाकार मंत्राः | १७७ |
| लक्ष्मी याग ,, ,, ,, | १८१ |
| रुद्र याग ,, ,, ,, | १९५ |
| सूर्य याग ,, ,, ,, | १९८ |
| प्रजापति याग ,, ,, ,, | १९९ |
| नवग्रह याग ,, ,, ,, | २०१ |
| विश्व शांति याग ,, ,, ,, | २०४ |
| सन्तान याग ,, ,, ,, | २०७ |
| राम यज्ञ ,, ,, ,, | २०९ |
| गोयज्ञे स्वाहाकार मंत्राः | २११ |
| पर्जन्य मंत्र न्यास ,, ,, | २१३ |
| वृष्टयर्थं पर्जन्य स्वाहाकार मंत्रा | २१५ |
| विष्णु सहस्र नामावली स्वाहाकारः | २२४ |
| लक्ष्मी सहस्रनामावली स्वा० मंत्राः | २४८ |
| गायत्री ,, ,, ,, | २७[illegible] |
| विष्णु याग मंत्र न्यास विधिः | ३०२ |
| रुद्र याग ,, ,, ,, | ३०४ |
| लक्ष्मी याग ,, ,, ,, | ३०६ |
| गणेश याग ,, ,, ,, | ३०८ |
| विश्व शांति याग ,, ,, ,, | ३१० |
| नवग्रह याग ,, ,, ,, | ३११ |
| विविध देवी - देवताओं के गायत्री मंत्र | ३१[illegible] |


## तृतीयो भागः


| अनुक्रमणिका | पृष्ठ संख्या |
|---|---|
| विविध प्रकारके कुण्डोंका निर्माण | ३१८ |
| ग्रहपीठ व ग्रहकुण्ड आदि के निर्माण का प्रकार | ३७० |
| परिशिष्ट भागः- | |
| यज्ञ सम्बन्धित विषयों पर विवेचन | ३९४ |
| महत्त्वपूर्ण यज्ञों की हवन सामग्री | ४०८ |
| महत्त्वपूर्ण यज्ञों की आहुति का विधान | ४१० |
| यज्ञ सामग्री | ४११ |

# यज्ञ - रहस्यम्

## होमात्मको [१]लक्ष्मीनारायणयाग पद्धतिः

यज्ञ मुहूर्त से पूर्वदिन यथाशक्ति सर्वप्रायश्चित्त करके सपत्नीक यजमान मांगलिकस्नान कर तिलक लगाकर एवं अपनी शिखा का बन्धन कर कम्बलादि के शुद्ध आसन पर पूर्वाभिमुख बैठ, रक्षादीप प्रज्वलितकर हाथ में पवित्री धारण कर स्मार्तविधि से दो बार आचमन एवं प्रणाम करके पूजनसामग्री एवं स्वयं को पवित्रजल छिड़क कर पवित्र करे, तत्पश्चात् अपने दाँये हाथ में अक्षत और पुष्प लेवें, उस समय आचार्य सहित अन्य ब्राह्मण इन मंत्रों से शांति पाठ करें।

शांतिपाठ—

हरि÷ ॐ आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु व्विश्वतोऽदब्धासोऽअपरीतासऽ उद्भिद÷ । देवा नो यथा सदमिद् वृधेऽअसन्न प्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे ॥ १ ॥

देवानांभद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्त्तताम् । देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा व्वयन्देवा नऽआयुः प्प्रतिरन्तु जीवसे ॥ २ ॥

---

१. लक्ष्मीनारायणं यागं पुत्र, पौत्र विवर्धनम् ।
सर्वारिष्टहरं पुण्यमेव, युक्तं मनीषिभिः ॥ [ कर्मविपाके ]

तान्पूर्व्वया निविदा हूमहे व्वयंभगम्मित्रमदितिन्दक्षम-स्रिधम्। अर्यमणं व्वरुणꣳ सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥ ३ ॥

तन्नो व्वातो मयोभुव्वातुभेषजन्तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः। तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणु तन्धिषण्या युवम् ॥ ४ ॥

तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्व मवसे हूमहे व्वयम् पूषा नो यथाव्वेदसा मसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥५॥

स्वस्ति नऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्द्दधातु ॥६॥

पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभंयावानो व्विदथेषु जग्मय अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो व्विश्वे नो देवाऽअवसा गमन्निह ॥ ७ ॥

भद्रङ्कर्णेभि शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्य्यजत्राः। स्थिरै रङ्गैस्तुष्टुवाꣳ सस्त नूभिर्व्यशे महि देवहितं य्यदायुः ॥८॥

शतमिन्नु शरदो अन्तिदेवा यत्रा नश्चका जरसन्तनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मद्ध्या रीरिषता युर्गन्तोः ॥९॥

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। व्विश्वे देवा ऽअदितिः पञ्चजना ऽअदितिर्ज्जातमदितिर्ज-नित्वम् ॥ १० ॥

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षर्ठ॰ शान्ति÷पृथिवी शान्ति रापः शांतिरोषधयः शान्तिः। व्वनस्पतयः शान्ति र्व्विश्वे देवाः शान्ति र्ब्रह्म शान्तिः सर्व्वर्ठ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधिः ॥ ११ ॥

यतोयतः समीहसे ततो नो ऽअभयङ्कुरु शन्न÷कुरु प्रजाभ्योऽभयन्न÷पशुभ्य÷ ॥१२॥ ॐ शान्तिः सुशान्तिः ॥

उपरोक्त वैदिक मंत्रोंके पठनान्तर आचार्य यजमान से निम्न नामोच्चारण द्वारा देवतागणों को प्रणाम करवाये—

ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः। ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। ॐशचीपुरन्दराभ्यां नमः। ॐमातापितृचरणकमलेभ्यो नमः। ॐइष्टदेवताभ्यो नमः। ॐकुलदेवताभ्यो नमः। ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः। ॐ स्थान देवताभ्यो नमः। ॐवास्तुदेवताभ्यो नमः। ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ॐ सर्वेभ्योब्राह्मणभ्यो नमः।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री सिद्धिबुद्धिसहिताय श्रीमन्महागणाधिपतये नमः ॥

ॐसुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥ १ ॥
धूम्रकेतुः गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥ २ ॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नः तस्य न जायते ॥ ३ ॥

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ ४ ॥
अभीप्सितार्थ सिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः ।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये ! नमः ॥ ५ ॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे ! सर्वार्थ साधिके ! ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषांऽमङ्गलम् ।
येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनं हरिः ॥ ७ ॥

तदेव लग्नं सुदिनं तदेव,
ताराबलं चन्द्रबलं तदेव ।
विद्याबलं दैवबल तदेव,
लक्ष्मीपते ! तेऽङ्घ्रियुगंस्मरामि ॥ ८ ॥

लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः ।
येषांमिन्द्रीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥ ९ ॥
यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीविजयो भुतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥१०॥
अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥११॥
स्मृते सकल कल्याणं भाजनं यत्र जायते ।
पुरुषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम् ॥१२॥
सर्वेष्वारम्भ कार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः ।
देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः ॥१३॥

विश्वेशं माधवं दुण्डि दण्डपाणिं च भैरवम् ।
वन्दे काशी गुहां गंगा भवानी मणिकर्णिकाम् ॥१४॥
विनायकम् गुरुं भानु - ब्रह्म - विष्णु - महेश्वरान् ।
सरस्वती प्रणम्यादौ सर्व कार्यार्थ सिद्धये ॥१५॥

## प्रधान संकल्पः

देशकालौ सङ्कीर्त्य—सपत्नीकोहं सर्वेषां भारतवर्षीयद्विजात्यादिस्त्रीपुंसानां नित्यकल्याणप्राप्त्यर्थम्, कायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिक चतुर्विधपापक्षयपूर्वकमाध्यात्मिकाधिदैहिकादि भौतिक त्रिविधतापोय शान्तिसकल दुःखशेषनिवृत्तिपुत्रपौत्राद्यभिवृद्धिपूर्वकजन्मवर्षमासकुण्डलीस्थविषमस्थानस्थितसूर्याद्यन्यतमग्रह सूचितसूचयिष्यमाणतज्जन्मान्तरोपार्जितसकलबाधानिवृत्तये जगद्बीजपुरुषोत्तम लक्ष्मीनारायण प्रीत्यर्थं पुरुषसूक्तेन च प्रत्यृचं [1]षष्टिसहस्राधिकैकलक्ष संख्यं सनवग्रहमखहोमात्मकं श्री लक्ष्मी-

---

१. नागरकृतविष्णुयागे प्रामाण्यलवे कल्पस्मृत्यन्तरे ज्येष्ठनारदपञ्चरात्रे च ।

यत्र होमात्मको यागो वैष्णवः पापनाशनः ।
तत्र लक्ष सहस्राणि षष्टिश्चाहुतयो मताः ॥
लक्षत्रयं सहस्राणां विंशति जुहुयाद्यदा ।
तं महाविष्णुयागं वै प्रवदन्ति विपश्चितः ॥

यत्राशीतिसहस्राणि तथा लक्षचतुष्टयम् ।
आहुतीनां मताः सङ्ख्या अतिविष्णु ब्रुवन्ति तम् ॥

तत्रैव—

एकलक्षं द्विलक्षं च त्रिलक्षं च ततः परम् ।
मोक्षार्थीक्रमतो जप्त्वा द्वादशाक्षरसंयुतम् ॥
अर्काक्षरयुक्तेन पुरुषसूक्तं समाचरेत् ।
तथैव चाहुतिर्देया ग्रहयज्ञपुरःसरम् ॥

नारायणयागमेभिर्द्विजैः शमदमादिनिखिलगुणगणभरितैः सहाद्यारभ्य करिष्ये। तदङ्गत्वेन [1]स्वस्तिपुण्याहवाचनं, मातृकापूजनं, वसोर्द्धारापूजनं, आयुष्यमन्त्रजपं, नान्दीश्राद्धमाचार्यावरणानि च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनं करिष्ये॥

संकल्प के पश्चात्—

विष्णुयागप्रयोग नामक पुस्तक के अनुसार वरणपर्यन्त सब विधि करे।

अगर मण्डप निर्माण किया गया हो तो मण्डप प्रवेश, वास्तुपूजन, मंडपपूजन कुण्ड में अग्निस्थापन, ग्रहस्थापन, असंख्यातरुद्रस्थापन, विष्णुयाग की तरह से करे।

## अथ सर्वतोभद्रपूजनम्

यजमान मध्य वेदी के पश्चिम की ओर कुशा के आसन पर बैठकर आचमन व प्राणायाम एवं शान्तिपाठ करे, पश्चात् हाथ में जल लेकर निम्न संकल्प देश और कालका स्मरण करते हुए करे।—

संकल्पः—

ततः देशकालौ सङ्कीर्त्य— अस्मिन् सनवग्रहमखहवनात्मकलक्ष्मीनारायणयागकर्मणि लक्ष्मी[2]नारायणपूजां करिष्ये।

---

१. गणेशाम्बिकापूजन, स्वस्तिपुण्याहवाचन, मातृकापूजन, वसोर्द्धारा पूजन, आयुष्यमंत्रजप, नांदीश्राद्ध आदि कर्म विष्णुयाग अथवा ग्रहशांति से करें।

२. कर्मविपाके—लक्ष्मीनारायणौ कार्यौ संयुक्तौ दिव्यरूपिणौ। दक्षिणस्था विभोर्मूर्तिर्लक्ष्मीमूर्तिस्तु वामगा। दक्षिणः कण्ठलग्नोऽस्य वामो हस्तः सरोजधृक्। विभोर्वामकरो लक्ष्म्याः कुक्षिभागस्थितः सदा॥ सर्वावयवसम्पूर्णा सर्वालङ्कारशोभिता। सिद्धिः कार्या समीपस्था चामरग्राहिणी शुभा॥ उक्तप्रकारा कर्तव्या

तदङ्गत्वेन आसनविधि विघ्नोत्सारण दिग्बन्धनं शिखाबन्धनं सर्वतोभद्रदेवतास्थापनं तत्र कलशस्थापनं यन्त्रविलखनमधः पीठादौ लक्ष्मीनारायणप्रतिमास्थापनम्, मण्डपादिध्यानं द्वारपालपूजां, स्वशरीरे लक्ष्मीसूक्तपुरुषसूक्तादिन्यासं पूजाकलशार्चनं शङ्खार्चनं भूम्यर्चा पुरुषसूक्तलक्ष्मीसूक्ताभ्यां स्वशरीरे मार्जनं अघमर्षणम् उपस्थानं स्वात्मनि भगवत्पूजां पाद्यार्घ्याचमनीयमधुपर्कद्रव्याद्यभिमन्त्रणं पूजाद्रव्योपकल्पनं पीठपूजाम, अग्न्युत्तारणम्, आवाहनं–प्रतिष्ठापनं, देवशरीरेलक्ष्मी सूक्तपुरुषसूक्तयोर्न्यासम, आसनाद्यर्पणं लक्ष्मीसूक्तपुरुषसूक्ताभ्यां मूर्त्यभिषेकं जलादेर्वहिर्निष्काष्य यन्त्रे समुपवेशन वस्त्राभरणोपवीतोपवस्त्रगन्धाक्षतपुष्पमालातुलसीदलार्पणं गन्धाक्षतपुष्पैरावरणपूजां धूपादिपुष्पाञ्जल्यन्तपूजनं न्याससहितं लक्ष्मीसूक्तपुरुषसूक्तयोर्जपं द्वादशाक्षरमन्त्रजपं प्रसादोदकपानं प्रसादनैवेद्यभक्षणं 'ॐ जितन्त' इति स्तवनं च करिष्ये ।

तत्पश्चात् गणेश जी का पूजन कर उपरान्त निम्न श्लोक व नाम मंत्रों से आसन को पूजा करे

---

पलेनार्धार्धमानतः । सौवर्णी प्रतिमा सूत राजती वा यथोक्तवत् । तन्मन्त्रेण च सम्पूज्य षोडशैरुपचारकैः । देया वेदविधिज्ञाय सर्वकार्यप्रसाधिनी ॥ योऽर्चयेन्नित्यमव्यक्तं लक्ष्मीनारायण विभुम् । मन्त्रैः पुरुषसूक्तैश्च स याति परमाङ्गति ॥ हिरण्मयं च यो दद्याल्लक्ष्मीनारायणं त्विह । सम्पूज्य विधिवद्यं मन्त्रैस्तल्लिङ्गजैरलम् ॥ वातपित्तोद्भवाद्रोगान्मुच्यते नात्र संशयः । लक्ष्मीनारायणं दानं पुत्रपौत्रविवर्धनम् । सर्वारिष्टहर पुण्यमेतदुक्तं मनोषिभिः ॥

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवित्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां देवि ! पवित्रं कुरुचासनम् ॥

ॐ अनन्तासनाय नमः।

ॐ विमलासनाय नमः।

ॐ परमसुखासनाय नमः।

इस श्लोक का उच्चारण कर भैरव जी की आज्ञा ग्रहण करे।

ॐ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्त दहनोपम।
भैरवाय नमस्तुभ्यनज्ञाम् दातुमर्हसि ॥

इस मंत्र से दिग्बन्धन करके—

ॐ ये भूता नाम्

इस नाम मंत्र से भूमि में तीन बार बाये पैरको पटके—

ॐ भैरवाय नमः

इस मन्त्र से शिखा बांधे—

ॐ उर्ध्व केशी विरूपाक्षि०

सर्वतोभद्रपीढ़ पर ब्रह्मादि देवताओंका आवाहन एवं स्थापन करें।

वेदी के मध्य में कलश स्थापन विधि से कलश की स्थापना कर उस पर सोना, चांदी या तांबे के पात्र या रेशमी वस्त्र पर लक्ष्मी नारायण यंत्र लिखे

### लक्ष्मीनारायण यंत्र लिखने का क्रमः

अष्टगंध अथवा चन्दनसे एक बिन्दू बनावें, उसके बाहर एक त्रिकोण लिखें त्रिकोण के बाहर एक अष्टकोण बनावें, उसके बाहर एक वृत्त बनावें फिर अष्टदल बनावे, फिर षोड़श दल बनावे, फिर तीन वृत देवे। फिर

चतुस्र बनावे, फिर चारों ओर तीन रेखा चारों दिशाओं में द्वार युक्त बनावे, इस प्रकार 'श्री यन्त्र' लिखने के बाद पीठादि पर स्वर्णमयी 'लक्ष्मी नारायणप्रतिमा' चन्दनादि से लिख उसके सम्मुख, गरूड़ प्रतिमा को प्रत्यङ्मुख स्थापित कर, स्वर्णमय चतुरद्वार विमल सुशोभित मण्डप का ध्यान कर उसमें नानारत्नखचित मुक्ता अलंकृत सिंहासन का स्मरण करें।

तत् पश्चात पूर्व दिशा में—

ॐ गं गणपतये नमः।

दक्षिण दिशा में—

वां वटुकाय नमः।

पश्चिम दिशा में—

ॐ क्षां क्षेत्रपालाय नमः।

उत्तर दिशा में—

ॐ यां योगिनिभ्यो नमः।

मंडप के दाहिने भाग की ओर—

ॐ गां गंगायै नमः।

बाँयी ओर—

ॐ यं यमुनायै नमः।

ऊपर की ओर—

ॐ सं सरस्वत्यै नमः।

तथा नीचे की ओर—

अस्त्राय फट्।

कहते हुए, गंधाक्षत, पुष्प चढ़ावें, तथा अपने शरीर में निम्न प्रकार से न्यास करे।

## न्यास विधि

सर्व प्रथम हाथ में जलादि लेकर निम्न विनियोग पढ़ते हुए अन्त में जल छोड़े,

### विनियोग का क्रम

अस्य श्री लक्ष्मीनारायण पूजा मन्त्रस्य श्रीशिव ऋषिः, त्रिष्टुप्छन्दः लक्ष्मीनारायणदेवता, श्रीं बीजं, ह्रीं शक्तिः, ॐ कीलकं, भोगापवर्ग सिद्धध्यर्थे लक्ष्मीनारायणपूजायां न्यासे विनियोगः।

ॐ लक्ष्मीनारायणाय विद्महे पर ब्रह्मणे धीमहि। तन्नः विष्णु प्रचोदयात्॥

ॐ शिवऋषये नमः—शिरसि।

ॐ त्रिष्टुप्छन्दसे नमः—मुखे।

ॐ लक्ष्मीनारायण देवतायै नमः—हृदि।

ॐ श्रीं बीजाय नमः—गुह्ये।

ॐ ह्रीं शक्तये नमः—पादयोः।

ॐ कीलकाय नमः—सर्वाङ्गेषु।

ततः—

ॐ ह्रां श्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।

ॐ ह्रीं श्रीं तर्जनीभ्यां नमः।

ॐ ह्रूं श्रूं मध्यमाभ्यां नमः।

ॐ ह्रैं श्रैं अनामिकाभ्यां नमः।

ॐ ह्रौं श्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः।

ॐ ह्ः श्रः करतलरपृष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रां श्रां हृदयाय नमः ।

ॐ ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा ।

ॐ ह्रूं श्रूं शिखायै वौषट् ।

ॐ ह्रैं श्रैं स्वः कवचाय हुम् ।

ॐ ह्रौं श्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।

ॐ ह्ः श्रः अस्त्राय फट् ।

पुनः—ॐ कामरूप पीठाय नमः—अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रीं जालन्धर पठीय नमः—तर्जनीभ्यां नमः ।

ॐ ह्ः सौः पूर्णगिरिपीठाय नमः—मध्यमाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रीं अवन्तीपीठाय नमः—अनामिकाभ्यां नमः ।

ॐ श्रीं सप्तपुरीपीठाय नमः—कनिष्ठिाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रीं ह्ः सौः ह्रीं श्रीं वाराणसीपीठाय नमः—
करतलपृष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ कामरूपपीठाय नमः—हृदयाय नमः ।

ॐ ह्रीं जालन्धर पीठाय नमः—शिरसे स्वाहा ।

ॐ ह्ः सौः पूर्णगिरिपीठाय नमः—शिखायै वषट् ।

ॐ ह्रीं अवन्तीपीठाय नमः—स्वः कवचाय हुम् ।

ॐ श्रीं सप्तपुरीपीठाय नमः—नेत्रत्रयाय वौषट् ।

ॐ ह्रीं हसौः ह्रीं श्रीं वाराणसीं पीठाय—अस्त्राय फट् ।

न्यास करने के पश्चात् विष्णुयाग के सदृश लक्ष्मीनारायण' न्यास करके अपने वामभाग में पूजा कलश स्थापित कर ।

पश्चात् [1]इमम्मेवरुण इस मंत्र के द्वारा वरुण का पूजन कर गायत्री से दस बार अभिमंत्र करे।

'ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वती।
नर्मदे सिन्धुकावेरी जलेऽस्मिन्सन्निधिं कुरु ॥
सर्वे समुद्राः सरितः तीर्थानि जलदानदाः।
आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः ॥

इति तीर्थान्यावाह्य 'ॐ कलशस्य मुखे विष्णुः' इति विष्णवादीनामावाहयेत्। ततः आवरणात् प्राक् सर्वं विष्णुयागवत् कुर्यात्। ततः—

[2]लक्ष्मीनारायण पूजनयन्त्रमारभेत्—

बाह्यद्वारेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ वज्राय नमः वज्रमा०। ॐ शक्तये० शक्तिमा०। ॐ दण्डाय० दण्डमा०। ॐ खड्गा० खड्गमा०। ॐ पाशाय० पाशमा०। ॐ यष्टिने० यष्टिमा०। ॐ ध्वजाय० ध्वजमा०। ॐ शूलाय० शूलमा०। पुनस्तत्रैव—ॐ इन्द्राय० इन्द्रमा०। ॐ अग्नये० अग्निमा०। ॐ यमाय० यममा०। ॐ नैर्ऋतये० नैर्ऋतिमा०। ॐ वरुणाय० वरुणमा०। ॐ सोमाय० सोममा०। ॐ कुबेराय० कुबेरमा०। ॐ ईशानाय० ईशानमा०। ॐ ब्रह्मणे० ब्रह्माणमा०। ॐ अनन्ताय० अनन्तमा०।

आग्नेये—ॐ हृदयाय नमः। ईशाने— ॐ शिरसे स्वाहा। नैर्ऋतये ॐ शिखायै वषट्। वायव्ये-ॐ कवचाय हुम्। पुनराग्ने ॐ नेत्रत्रयाय वौषट्। सर्वदिक्षु—ॐ अस्त्राय फट्। ततः प्राग्दले—ॐ वासुदेवाय०। दक्षिणे—ॐ

---

१ इमं में वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके
ऋ० १।२५।१९

२—पुत्रकामश्चेदष्टदले अशक्तौ शालग्रामशिलायां वा पूजनम्।

सङ्कर्षणाय० । पश्चिमे---ॐ प्रद्युम्नाय० । उत्तरे---ॐ अनिरुद्धाय० । आग्नेयादिविदिक्षु ॐ शङ्खाय० । ॐ चक्राय० । ॐ गदायै० । ॐ पद्माय० । पूर्वादिक्रमेण---ॐ कौस्तुमाय० । ॐ खन्नाय० । ॐ खङ्गाय० । ॐ मुसलाय० । ॐ बनमालायै० । प्राग्दिक्---ॐ ध्वजाय० । ॐ गरुडाय० । ॐ शङ्खनिधये० । ॐ पद्मनिधये० । ॐ गणपतये० । ॐ आचार्याय० । ॐ दुर्गायै० । ॐ विश्वक्सेनाय० । प्रागादिक० ॐ इन्द्राय० । ॐ अग्नये० । ॐ निर्ऋतये* । ॐ वरुणाय० । ॐ वायवे० । ॐ कुबेराय० । ॐ ईशानाय० । ऊर्ध्वम्-ब्रह्मणे० । अधः-अनन्ताय० । प्रागादिक० ॐ वज्राय० । ॐ शक्तये० । ॐ दण्डाय० । ॐ खङ्गाय० । ॐ पाशाय० । ॐ अकुशाय० । ॐ ध्वजाय० । ॐ शूलाय० । ॐ पद्माय० । ॐ चक्राय० । देवस्य दक्षे ॐ अर्जुनाय० । ॐ प्रह्लादाय० । ॐ नारदाय० । ॐ पुण्डरीकाय० । ॐ पराशराय० । ॐ व्यासाय० । ॐ शुकाय० । ॐ अम्बरीषाय० । ॐ वसिष्ठाय० । ॐ दालभ्याय० । ॐ शौनकाय० । ॐ बलये० । ॐ विभीषणाय० । ॐ भीष्माय० । ॐ रुक्माङ्गदाय० । ॐ मार्कण्डेयाय० । ॐ भृगवे० । देवस्य वामे ॐ सनकाय० । ॐ सनन्दनाय० । ॐ वसुदेवाय० । ॐ शुकाय० इति पूजयेत् ।

वृत्तत्रये---ॐ स्वगुरुभ्यो० स्वगुरुमा० । ॐ परमगुरुभ्यो० परमगुरुमा० । ॐ परापरगुरुभ्यो० परापरगुरुमा० । ॐ असिताङ्गाय० असिताङ्गमा० । ॐ हंसकेतवे० हंसकेतुमा० । ॐ वंशपाणिने० वंशपाणिमा० ।

षोडशारे---उत्तरक्रमेण---ॐ केशवाय० केशवमा० । ॐ माधवाय० माधवमा० । ॐ कृष्णाय० कृष्णमा० । ॐ गोविन्दाय० गोविन्दमा० । ॐ मधुसूदनाय० मधुसूदनमा० । ॐ गङ्गाधराय० गङ्गाधरमा० । ॐ शङ्खधराय० शङ्खधरमा० । ॐ चक्रपाणिने० चक्रपाणिमा० । ॐ चतुर्भुजाय० चतुर्भुजमा० । ॐ पद्मायुधाय० पद्मायुधमा० । ॐ कैटभारिणे० कैटभारिणमा० । ॐ घोरदंष्ट्राय० घोरदष्ट्रमा० । ॐ जनार्दनाय० । जनार्दनमा० । ॐ वैकुण्ठाय० वैकुण्ठमा० । ॐ वामनाय० वामनमा० । ॐ गरुडध्वजाय० गरुडध्वजमा० ।

अष्टदले—ॐ संहाराय० संहारमा० १ ॐ रुरुकाय० रुरुकमा० २ ॐ चण्डाय० चण्डमा० ३ ॐ भूतेशाय० भूतेशमा० ४ ॐ कालभैरवाय० कालभैरवायमा० ५ ॐ कपालाय० कपालमा० ६ ॐ भीषणाय० भीषणमा० ७ ॐ श्मशानाय० श्मशानमा० ८।

वसुकोणे—

ॐ लक्ष्मीविष्णवे० लक्ष्मीविष्णुमा०

ॐ लक्ष्मीवासुदेवाय० लक्ष्मीवासुदेवमा०

ॐ लक्ष्मीदामोदराय० लक्ष्मीदामोदरमा०

ॐ लक्ष्मीनृसिंहाय० लक्ष्मीनृसिंहमा०

ॐ लक्ष्मीमहादेव्यै० लक्ष्मीमहादेवीमा०

ॐ लक्ष्मीसङ्कर्षणाय० लक्ष्मीसङ्कर्षणमा०

ॐ लक्ष्मीत्रिविक्रमाय० लक्ष्मीत्रिविक्रममा०

ॐ लक्ष्मीविश्वक्सेनाय० लक्ष्मीविश्वक्सेनमा०।

त्रिकोणे—ॐ गङ्गायै० गङ्गामा० १ ॐ यमुनायै० यमुनामा० २ ॐ सरस्वत्यै० सरस्वतीमा० ३।

विन्दौ—

ॐ लक्ष्मीनारायणाय० लक्ष्मीनारायणमा०।

ॐ महालक्ष्म्यै० महालक्ष्मी०।

ॐ राज्यलक्ष्म्यै० राज्यलक्ष्मीमा०।

ॐ सिद्धलक्ष्म्यै० सिद्धलक्ष्मीमा०।

ॐ शङ्खाय० शङ्खमा०।

ॐ चक्राय० चक्रमा०।

ॐ गदायै० गदामा० ।
ॐ पद्मायै० [1]पद्मामा० ।

## अथ छन्दः पुरुषन्यासः

( १ ) ॐ तिर्यग्बिलाय छन्दः पुरुषायोर्ध्वबुध्नाय छन्दः पुरुषाय नमः शिरसि ।
( २ ) ॐ गौतमभरद्वाजाभ्यां नमः नेत्रयोः ।
( ३ ) ॐ विश्वामित्रयमदग्निभ्यां नमः श्रोत्रयोः ।

---

१ — यन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि सर्वाशासिद्धिदं परम् । सर्व सम्मोहनं यन्त्रं— वाञ्छितैकप्रदायकम् ॥ बिन्दुत्रिकोण वस्वश्रं वृत्ताष्टदलमण्डितम् । शोडशारं वृत्तत्रयं भूगृहेणोपशोभितम् ॥ लक्ष्मीनारायणस्यैतच्छ्रीश्चक्रं परमार्थदम् । लयाङ्ग देवि वक्ष्यामि भोगयोगफलप्रदम् ॥ वेदागमरहस्याढ्यं पूजाकोटिफलप्रदम् । वज्रशक्तिदण्डखड्गपाशमष्टिध्वजास्ततः ॥ शूलं पूज्याः शिवे चैते बाह्यद्वारेषु सर्वदा । इन्द्राग्नियममांसादवरुणानिलवित्तदाः ॥ सेश्वराः साधकैः पूज्या ब्रह्मानन्तादयस्ततः । तत्रार्चयेन्महादेवि मन्त्री गुरुचतुष्टयम् ॥ असिताङ्गं हंसकेतुं वंशपाणिं च पूजयेत् । वृत्तत्रयेषु देवेशि साधको गन्धपुष्पकैः ॥ केशवं माधवं कृष्णं गोबिन्दं मधुसूदनम् । गङ्गाधरं शङ्खधरं चक्रपाणिं चतुर्भुजम् ॥ पद्मायुधं कैटभारिं घोरदंष्ट्रं जनार्दनम् । वैकुण्ठं वामनं चैव पूजयेद्गरुडध्वजम् ॥ षोडशारेषु देवेशि वामावर्तेनसाधकः । संहारं रुरुकं चण्ड भूतेश कालभैरवम् ॥ कपालं भीषणं चैव तथा श्मशानभैरवम् । पूजयेत्साधकः सिद्ध्यै वसुपत्रे महेश्वर ॥ विष्णुं च वासुदेवं च देवं दामोदरं तथा नृसिंहं च महादेवि देव सङ्कर्षणं तथा ॥ त्रिविक्रमं चानिरुद्धं विश्वक्सेनं च साधकः । लक्ष्मीशब्दाङ्कितं देवि वसुकोणेषु पूजयेत् ॥ गङ्गां च यमुनां चैव त्र्यश्रे सरस्वतीं तथा । पूज्येदग्रवह्नीशक्रमयोगेन पार्वती ॥ लक्ष्मीनारायणं देवं पूजयेद्बिन्दुमण्डले । महायक्ष्मी राज्यलक्ष्मीं सिद्धलक्ष्मीं च पूजयेत् ॥ शङ्खं चक्रं गदां पद्मं पूजयेद् विन्दुमण्डले ।

( ४ ) ॐ वसिष्ठकश्यपाभ्यां नमः नासापुटयोः ।
( ५ ) ॐ अत्रये नमः वाचि ।
( ६ ) ॐ गायत्र्यै छन्दसे नमः अग्नये नमः शिरसि ।
( ७ ) ॐ उष्णिहे छन्दसे नमः सवित्रे नमः ग्रीवायाम् ।
( ८ ) ॐ बृहत्यै छन्दसे नमः बृहस्पतये नमः अनूके ।
( ९ ) ॐ बृहद्रथन्तराभ्यां नमः द्यावापृथिवीभ्यां नमः बाह्वोः ।
(१०) ॐ त्रिष्टुभे छन्दसे नमः इन्द्राय नमः मध्ये ।
(११) ॐ जगत्यै छन्दसे नमः आदित्याय नमः श्रोत्योः ।
(१२) ॐ अतिछन्दसे नमः प्रजापतये नमः लिङ्गे ।
(१३) ॐ यज्ञायज्ञियाय छन्दसे नमः वैश्वानराय नमः गुदे ।
उदकोपस्पर्शः ।
(१४) ॐ अनुष्टुपे नमः विश्वेभ्यो नमः ऊर्वोः ।
(१५) ॐ पङ्क्त्यै छन्दसे नमः मरुद्भ्यो नमः जान्वोः ।
(१६) ॐ द्विपदायै छन्दसे नमः विष्णवे नमः पादयोः ।
(१७) ॐ विच्छन्दसे नमः वायवे नमः नासापुटस्थप्राणेषु ।
(१८) ॐ न्यूनाक्षराय छन्दसे नमः अद्भ्यो नमः ।

इति हस्तद्वयविपर्यासेन मस्तकादिपादान्तम् ।

## अथ गोविन्दादिकरन्यासः

( १ ) ॐ गोविन्दाय नमः अङ्गुष्ठाग्रे ।
( २ ) ॐ महीधराय नमः तर्जन्याम् ।

( ३ ) ॐ हृषीकेशाय नमः मध्यमायाम् ।
( ४ ) ॐ त्रिविक्रमाय नमः अनामिकायाम् ।
( ५ ) ॐ विष्णवे नमः कनिष्ठिकायाम् ।
( ६ ) ॐ माधवाय नमः करतलमध्ये ।

---

## अथ देहन्यासः

( १ ) ॐ केशवाय नमः मस्तके ।
( २ ) ॐ नारायणाय नमः भाले ।
( ३ ) ॐ माधवाय नमः कर्णयोः ।
( ४ ) ॐ गोविन्दाय नमः अक्ष्णोः ।
( ५ ) ॐ विष्णवे नमः नासयोः ।
( ६ ) ॐ मधुसूदनाय नमः मुखे ।
( ७ ) ॐ त्रिविक्रमाय नमः कण्ठे ।
( ८ ) ॐ वामनाय नमः बाह्वोः ।
( ९ ) ॐ श्रीधराय नमः हृदि ।
(१०) ॐ हृषिकेशाय नमः नाभौ ।
(११) ॐ पद्मनाभाय नमः कट्याम् ।
(१२) ॐ दामोदराय नमः पादयोः ।

## अथ [१]पुरुषसूक्तन्यासः

| | | |
|---|---|---|
| (१) | ॐ सहस्रशीर्षा० | वामकरे । |
| (२) | ॐ पुरुषऽएव० | दक्षिणकरे । |
| (३) | ॐ एतावानस्य० | वामपादे । |
| (४) | ॐ त्रिपादूर्ध्व० | दक्षिणपादे । |
| (५) | ॐ ततो विराट्० | वामजानौ । |
| (६) | ॐ तस्माद्य० सर्वहु० | दक्षिणजानौ । |
| (७) | ॐ तस्माद्य०सर्व० ऋ० | वामकट्याम् । |
| (८) | ॐ तस्मादश्वा० | दक्षिणकट्याम् । |
| (९) | ॐ तं यज्ञं बर्हि० | नाभौ । |
| (१०) | ॐ यत्पुरुषं व्य० | हृदि । |
| (११) | ॐ ब्राह्मणोऽस्य मु० | कण्ठे । |
| (१२) | ॐ चन्द्रमा मन० | वामबाहौ । |
| (१३) | ॐ नाभ्याऽआसी० | दक्षिणबाहौ । |
| (१४) | ॐ यत्पुरुषेण ह० | मुखे । |
| (१५) | ॐ सप्तास्यासन्प० | नेत्रयोः । |
| (१६) | ॐ यज्ञेन यज्ञम० | मूर्ध्नि । |

(१) करयोः पादयोर्जान्वोः कट्योर्नाभौ हृदि क्रमात् ।
कण्ठे बाह्वोर्मुखे नेत्रे मूर्ध्नि वामादितो न्यसेत् ।।
ॐकारपूर्वकैर्मन्त्रैः षोडशभिः पृथक्-पृथक् ।
न्यासेनैव भवेत्सोऽपि स्वयमेव जनार्दनः ।।
यथात्मनि तथा देवे न्यासं च परिकल्पयेत् ।
( संस्कारगणपतौ मु० पृष्ठ ८३४ )

अथ [1]पञ्चाङ्गन्यासः

( १ ) ॐ चन्द्रमा मन० हृदयाय नमः ।
( २ ) ॐ नाभ्याऽआसीदन्त० शिरसे स्वाहा ।
( ३ ) ॐ यत्पुरुषेण हवि० शिखायै वषट् ।
( ४ ) ॐ सप्तास्यासन्परिध० कवचाय हुम् ।
( ५ ) ॐ यज्ञेन यज्ञमय० अस्त्राय फट् ।

( अथवा )

( १ ) ॐ ब्राह्मणोऽस्य मु० हृदयाय नमः ।
( २ ) ॐ चन्द्रमा मनसो० शिरसे स्वाहा ।
( ३ ) ॐ नाभ्याऽआसीदन्त० शिखायै वषट् ।
( ४ ) ॐ यत्पुरुषेण हवि० कवचायहुम् ।
( ५ ) ॐ सप्तास्यासन्परिधय० नेत्रत्रयाय वौषट् ।
( ६ ) ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त० अस्त्राय फट् ।

अथ लक्ष्मीसूक्तन्यासः

( १ ) ॐ हिरण्यवर्णां हरि० वामकरे ।
( २ ) ॐ ताम्मऽ आवह० दक्षिणकरे ।
( ३ ) ॐ अश्वपूर्वां रथम० वामपादे ।
( ४ ) ॐ कांसोस्मितां हिर० दक्षिणपादे ।
( ५ ) ॐ चन्द्रां प्रभासां वामजानौ ।

---

१. पंचाङ्गन्यासपक्षे नेत्रन्यासाभावः इत्यन्तमतै । अत्र पक्षद्वयमपि प्रामादिकमित्यस्मन्मते ।

| | |
|---|---|
| ( ६ ) ॐ आदित्यवर्णे तम० | दक्षिणजानौ । |
| ( ७ ) ॐ उपैतु मां देव० | वामकक्ष्याम् । |
| ( ८ ) ॐ क्षुत्पिपासामलां० | दक्षिणकक्ष्याम् । |
| ( ९ ) ॐ गन्धद्वारां दुरा० | नाभौ । |
| (१०) ॐ मनसः कामका० | हृदि । |
| (११) ॐ कर्दमेन प्रजा० | कण्ठे । |
| (१२) ॐ आपः सृजन्तु० | वामबाहौ । |
| (१३) ॐ आर्द्रां पुष्करणीं० | दक्षिणबाहौ । |
| (१४) ॐ आर्द्रां यष्करणीं० | मुखे । |
| (१५) ॐ तां मऽआवह जात० | नेत्रयोः । |
| (१६) ॐ यः शुचिः प्रयतो० | मूर्ध्नि । |

अथ पञ्चाङ्गन्यासः

| | |
|---|---|
| ( १ ) ॐ आपः सृजन्तु० | हृदयाय नमः । |
| ( २ ) ॐ आर्द्रां पुष्करिणीं० | शिरसे स्वाहा । |
| ( ३ ) ॐ आर्द्रां यष्करिणीं० | शिखायै वषट् । |
| ( ४ ) ॐ तां मऽआवह० | कवचाय हुम् । |
| ( ५ ) ॐ यः शुचिः प्रयतोभू० | अस्त्राय फट् । |

अथ षडङ्गन्यासः

( १ ) ॐ अतो देवाऽ अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे । पृथिव्याः सप्तधामभिः ॥ हृदयाय नमः ।

( २ ) ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाᳬंसुरे ॥ शिरसे स्वाहा ॥

( ३ ) ॐ त्रीणिपदाविचक्रमे विष्णुर्गोपाऽ अदाभ्यः। अतो धर्माणि धारयन् ॥ शिखायै वषट् ॥

( ४ ) ॐ विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो ब्रतानि पस्पशे। इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥ कवचाय हुम् ॥

( ५ ) ॐ तद्विष्णोः परमं पदठं० सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम्॥ नेत्रत्रयाय वौषट्॥

( ६ ) ॐ तद्विप्रासौ विपन्यवो जागृवाठं० सः समिन्धते। विष्णोर्यत्परमं पदम्॥ अस्त्राय फट्॥

## अथात्मरक्षान्यासः

( १ ) त्रातारमिन्द्रस्य गर्गऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः इन्द्रो देवता प्राच्यां दिशि सम्पुटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः। ॐ त्रातारमिन्द्रमवि०। ॐ केशवाय नमः। ॐ प्राच्यै नमः।

( २ ) त्वन्नो ऽअग्ने इत्यस्य हिरण्यस्तूप आङ्गिरसऋषिर्जगतीछन्दोऽग्निर्देवता आग्नेयां दिशि सम्पूटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः। ॐ त्वन्नो ऽअग्ने तव०। ॐ मधूसूदनाय नमः। ॐ आग्नेय्यै नमः।

( ३ ) यमायत्वेत्यस्य प्रजापतिऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः यमो देवता दक्षिणस्यां दिशि सं० न० वि०। ॐयमायत्वा०। ॐगोविन्दाय नमः। ॐ दक्षिणायै न०।

( ४ ) असुन्वन्तमित्यस्य प्रजा० त्रि०निर्ऋतिर्देवता नैर्ऋत्यां सं०न० वि०। ॐ असुन्वन्तमयज्व० ॐ त्रिविक्रमाय नमः। ॐ निर्ऋतये नमः।

( ५ ) तत्वायामीत्यस्य शुनःशेषऋषिः त्रिष्टुप्छ० वरुणो देवता प्रतीच्यां दि० स० वि०। ॐ तत्वायामि०। ॐ नारायणाय नमः ॐ प्रतीच्यै नमः।

( ६ ) आनोनियुद्भिरित्यस्य वसिष्ठऋ० त्रिष्टु० वायुर्दे० दि० स० न० वि०। ॐ आ नो नियुद्भिः श०। ॐ विष्णवे नमः। ॐ वायव्यै नमः।

(७) वयठं० सोमेत्यस्य बन्धुर्ऋषिगायत्री छ० सोमो देवता उदीच्यां० सं०न०वि०। ॐ वयठं० सोमत्र०। ॐ पद्मनाभाय० उदीच्यै नमः।

(८) तमीशानमित्यस्य गौतमऋषिर्जगतीछन्दः ईशानो देवता ईशान्यां दि० स० न० वि०। ॐ तमीशानं जग०। ॐ श्रीधराय नमः। ॐ ईशान्यै नमः।

(९) अस्मे रुद्रा इत्यस्य प्रगाथऋषिः त्रिष्टु० ब्रह्मा देवता ऊर्ध्वायां स० न० वि०। ॐ माधवाय नमः। ओ ऊर्ध्वायै नमः।

(१०) स्योनापृथिवीत्यस्य मेधातिथिऋषिः गायत्रीछन्दः अनन्तो देवता अधो दिशि सं०न० वि०। ओं स्योना पृ०। ओं हृषीकेशाय नमः। ओं धरायै नमः।

## अथ गायत्रीन्यासः

ओं भूः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
ओं भुवः तर्जनीभ्यां नमः।
ओं स्वः मध्यमाभ्यां नमः।
ओं तत्सवितुर्वरेण्यम् अनामिकाभ्यां नमः।
ओं भार्गोदेवस्य धीमहि कनिष्ठिकाभ्यां नमः।
ओं धियो यो नः प्रचोदयात् करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः।

ओं भूः हृदयाय नमः। ओं भुवः शिरसे स्वाहा। ओं स्वः शिखायै वषट्। ओं तत्सवितुर्वरेण्यम्–कवचाय हुम्। ओं भर्गोदेवस्य धीमहि–नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ धियो यो नः प्रचोदयात्–अस्त्राय फट्।

## अथाष्टाक्षरन्यासः

ओं नमो मूर्ध्नि। ओं न नमो नासिकायाम्। ओं मों नमो ललाटे। ओं नां नमो मुखे। ओं रां नमः कण्ठे। ओं यं नमः हृदये। ओं णां नमः वामदक्षिणहस्तयो। ओं यं नमः नाभौ।

इस प्रकार न्यास करके लक्ष्मीनारायण का ध्यान करें—

ध्यानम्—

पूर्णेन्दुवदनं पीतवसनं कमलासनम् ।
लक्ष्म्याश्रितं चतुर्बाहुं लक्ष्मीनरायणं भजे ॥१॥
किरीटिनं कुण्डलहारमण्डितं,
पद्मासनं श्याममुखं चतुर्भुजम् ।
पीताम्बरं शंखगदाब्जचक्रपाणि,
पुराणं पुरुषं भजे विभुम् ॥२॥

इस प्रकार न्यास करके प्रतिदिन लक्ष्मीसूक्त व पुरुषसूक्त से हवन[1] करे, संभव हो तो, अन्तिम दिन लक्ष्मीनारायणसहस्रनाम से भी हवन करे ।

---

१. 'दीर्घायुरारोग्यैस्वर्याभिवृध्यर्थमष्टोत्तरसहस्रसंख्याकं महामृत्युञ्जयमन्त्रेण पायसहवन कुर्यात्' । आज्यभागानन्तरं 'ओं तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः' इत्यारभ्य ओं यज्ञेन यज्ञमय' इत्यन्तं प्रतिमन्त्रेण स्वाहान्तेन आज्यप्लुतमश्वस्थसमिधया होमः कार्यः । एवम् ओं उपैतु मां देवसखः, इत्यारस्य 'ओं यः शुचिः प्रयतो' इत्यन्तं प्रतिमन्त्रेण पूर्ववत् द्रव्येण होमः कार्यः । ततः स्रुवेणैव पूर्वोक्तविशति-मन्त्रेणाज्याहुतयो होतव्यतयो होतव्याः, सहस्रनामाहुतिश्च समसख्याकं जुहुयात् । इति विष्णुदीपके । 'इच्छाचेत्तदा-कर्मसमृध्यर्थं जपादिहोम करिष्ये ।' प्रयोगसारे 'वसन्ते लभते पुत्रं ग्रीष्मे सम्पत्तिरुत्तमा ।वर्षायां च महत्सौख्यं शारदे धनवर्धनम् । हेमन्ते लभते सर्गं शिशिरे च पराङ्गतिम् । इति ॥

## पूर्णाहुतिः

संकल्प करे—

होमात्मको लक्ष्मीनारायणयाग कर्मणः सम्पूर्ण फल प्राप्त्यर्थं मृडनामाग्नौ पूर्णाहुतिं होष्यामि ।

इस प्रकार संकल्प करने के पश्चात चार अथवा बारह घी को यज्ञीय पात्र स्रुव के द्वारा स्रुचि नामक पात्र में ग्रहण कर शिष्टाचार से उस स्रुचि पर सुपारी-पान-पुष्प-रेशमीवस्त्रसे वेष्टित कर पुष्पमाला से सुशोभित तथा सुगन्धद्रव्य, सिन्दूर आदि द्रव्य से सजा कर स्रुचि पर रख आचार्य इस वैदिक मन्त्र से पूजन करावे—

ॐ पूर्णादर्व्विपरापत सुपूर्णा पुनरापत । व्वस्नेव-व्विक्रीणावहाऽइषमूर्ज्जर्ठ० शतक्रतो ।

तत्पश्चात् अधोमुख स्रुव को रख स्रुचि को हाथ से यथोचित्त रूप से पकड़ कर तथा खड़े होकर, आचार्य इन वैदिक मन्त्रों को पढ़े—

ॐ समुद्द्रादूर्म्मिर्म्मधुमाँ २ उदारदुपार्ठ० शुनासम मृतत्त्वमानट् । घृतस्यनाम गृह्यंय्यदस्ति जिह्वा देवानाम मृतस्यनाभि÷ ॥

ॐ व्वयन्नाम प्रब्व्रवामा घृतस्यास्म्मिन्नयज्ञे धारया-मानमोभिः । उपब्रह्माशृणवच्छस्य मानश्वतु÷ श्रृङ्गो वमीद्गौरऽएतत् ॥

ॐ चत्वारि श्रृङ्गात्रयोऽअस्य पादाद्वेशीर्षे सप्तहस्तासोऽ-अस्य त्रिधाबद्धोव्वृषभोरोरवीति महोदेवा मर्त्याँ २ ऽआविवेश ॥

ॐ त्रिधाहितं पाणिभिर्गुह्य मानङ्ग विदेवोसो घृतमन्न्व-विन्दन । इन्द्रऽएकर्ठ० सूर्य्यऽएकञ्जजानव्वेनादेकर्ठ० स्वधया-निष्टतक्षुः ॥

ॐ एताऽअर्षन्तिहृद्यात्समुद्राच्छत व्व्रजारिपुणानाव चक्षे। घृतस्यधाराऽअभिचाकशी मिहिरण्ण्ययो व्वेतसोमध्यऽआसाम्॥

ॐ सम्म्यक् स्रवन्ति सरितोन धेनाऽअन्तर्हृदामनसा पूयमानाः। एतेऽ अर्षन्त्यूर्म्मयो घृतस्य मृगाऽइवक्षिपणो-रोषमाणाः॥

ॐ सिन्धोरिवप्प्राद्ध्वने शूघनासोव्वात् प्प्रमियः पतयन्ति यह्वाः। घृतस्य धारा अरुषोन ÷ व्वाजीकाष्ठाभिन्दन्नूर्म्मिभिः षिन्वमानः॥

ॐ अभिप्प्रवन्त समनेवयोषाः कल्याण्य ÷ स्मयमानासोऽअग्निम्। घृतस्य धाराः समिधो न सन्तताजुषाणो हर्य्यतिजातवेदाः॥

ॐ कन्या ऽइवव्वहतुमेतवाऽअञ्ज्यञ्जाना ऽअभि-चाकशीमि। यत्रसोम ÷ सूयतेयत्रयज्ञो घृतस्य धाराऽअभित त्पवन्ते॥

ॐ अब्भ्यर्षतसुष्टुतिङ्गव्व्यमाजिमस्म्मासुभद्द्रांद्रविणानि-धत्त। इमं यज्ञन्नयत देवता नो घृतस्यधारा मधुमत्पवन्ते॥

ॐ धामन्ते व्विश्वम्भुवनमधिश्रितमन्तरठ० समुद्द्रेघन्त-रायुषि। अपामनीकेसमिथेयऽआभृतस्तमश्याम मधुन्तन्त-ऽऊर्म्मिम्।

ॐ मूर्द्धानन्दिवोऽअरतिं पृथिव्या व्वैश्वानरमृतऽआजात-

मग्निन् । कविर्ठं०सम्म्राजमतिथिञ्जनानामासन्नापातञ्जयन्त जनयन्त देवाः ॥

ॐ पुनस्त्वा दित्या रुद्रा व्वसवः समिन्धताम्पु न र्ब्रह्माणोव्वसुनीथयज्ञैः । घृतेनत्वन्तन्न्वव्वर्धयस्वसत्यार्ठं० सन्तुयजमानस्य कामाः ॥

ॐ पूर्णादर्व्विपरातपत सुपूर्णापुनरापत । व्वस्नेवव्विक्रीणावहाऽइष मूर्ज्जर्ठं० शतक्रतो स्वाहा ॥

पश्चात् श्रुचि में स्थित नारिकेल को अग्निकुंड में यथोचित् रूप से सिधा रख दे । तदनन्तर स्रुचि स्थित घी के शेष को इस वाक्य से प्रोक्षणी पात्र में त्याग करे।

इदमग्नये वैश्वानराय न मम ॥

## वसोर्धारा होमः

आचार्य इस संकल्प वसोर्धाराहोम के निमित्त यजमान से करावें—

कृतस्य होमात्मकोलक्ष्मीनारायणयाग कर्मणः साङ्गतासिध्यर्थं वसोर्द्धारां होष्यामि ॥

इसके पश्चात् अग्निके ऊपरदोस्तम्भों में धारण की हुई, उदुंवर की सीधी मनोहराबाहुमात्रप्रमाण की वसोर्धारा को प्रागग्र रख, उसके ऊपर शृंखला से परिपूर्ण निर्मल घी से ताम्र आदि द्वारा नीचे यवमात्रछिद्र द्वारा आज्य को छोड़ते हुए, अग्नि के ऊपर वसोर्धारा गिरावे । उसके मुँख में सोने की जिह्वा बांधे, उस घृत धारा के गिरने पर, स्रुचि द्वारा

नाली से अग्नि में गिरती हुई, अतः उस समय आचार्य निम्न मंत्रों का उच्चारण करते हुए इन मन्त्रों से हवन करावें—

ॐ सप्तते ऽअग्ने समिधः सप्तजिह्वाः सप्तऽऋषयः सप्तधामप्रियाणि। सप्तहोत्राः सप्तधात्वायजन्तिसप्तयोनी रापृणस्व घृतेन स्वाहा ॥

शुक्रज्ज्योतिश्च चित्रज्ज्योतिश्च सत्यज्ज्योतिश्च ज्ज्योतिष्मांश्च। शुक्रश्चऋतपाश्चात्यठं॰ हाः ॥

ईदङ्चान्यादङ्च सदङ् च प्रति सदङ् च। मितश्च-सम्मितश्चसभराः ॥

ऋतश्च सत्यश्च ध्रुवश्च धरुणश्च। धर्त्ता च विधर्ता-च विधारयः ॥

ऋतजिच्चसत्यजिच्च सेनजिच्चसुषेणश्च। अन्तिमित्रश्च दूरेऽअमित्रश्च गणः ॥

ईदृक्षासऽएतादृक्षासऽ ऊषुण ÷ सदृक्षासः प्रति सदृक्षासऽ-एतन। मितासश्च सम्मितासोनोऽअद्यसभरसोमरुतोयज्ञेऽ-अस्मिन्।

स्वतवांश्च प्रधासीचसान्तपनश्च गृहमेधीच। क्रीडीच शाकीचो ज्जेषी। इन्द्रन्दैवीर्वि शोमरुतो नुवर्त्मानो भवन्त्य-थेन्द्रन्दै विंशोमरुतो नुवर्त्मानो भवन्। एवमिमंयजमानन्दैवी-श्चविशोमानुषीश्चानुवर्त्मानो भवन्तु ॥

इमंठं॰ स्तनमूर्ज्ज स्वन्तन्ध यापां प्रपीनमग्नेसरिरस्य-मद्धे। उत्सञ्जुषस्वमधुमन्तमर्व्वन्तसमुद्रियठं॰ सदनमाविशस्व ॥

व्यसोः पवित्रमसिशत धारंव्व सोः पवित्रमसिसहस्त्र-धारम् । देवस्त्वा सविता पुनातुव्वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वाकामधुक्षः स्वाहा ।

हवन के पश्चात् जो घृतादि शेष हो उसे प्रोक्षणी पात्र में इस वाक्य का उच्चारण करके छोड़ दें

इदमग्नये वैश्वानराय न मम ।

## अग्निप्रदक्षिणा कर्म

अग्नि देव की प्रदक्षिणा कर अग्नि के पीछे-पश्चिम देश में पूर्वाभिमुख बैठ स्रुव के द्वारा कुण्ड से भस्म लेकर इन चार नाम मन्त्रों से क्रमानुसार ललाट, गले, दाहिनेबाहु और हृदय में भस्म लगावें—

ॐ त्र्यायुषञ्जमदग्नेः ।

ललाट् पर इस मन्त्र से लगावे ।

ॐ कश्यपश्यत्र्यायुषम् ।

गले पर इस मन्त्र से लगावे ।

ॐ यद्देवेषुत्र्यायुषम ।

दाहिने बाहु पर इस मन्त्र से लगावे ।

ॐ तन्नोऽअस्तुत्र्यायुषम् ।

हृदय में इस मन्त्र से लगावे ।

तत्पश्चात् प्रोक्षणीस्थित घृत का यजमान प्राशन करे । पुनः प्रणीता में स्थित पवित्री ग्रन्थि को अलग कर, उन पवित्रीयों से प्रणीता के जल को अपने सिर पर छिड़क कर उनदोनों पवित्रीयों को अग्नि में गिरा देवें ।

## पूर्णपात्रदानम्

आचार्य निम्न संकल्प यजमान से करावें—

अद्य कृतस्य होमात्मकोलक्ष्मीनारायणयाग कर्मणः साङ्गतासिद्धये तत्सम्पूर्ण फलप्राप्तये च इदं पूर्णपात्र सदक्षिणं ब्रह्मणे तुभ्यमहं संप्रददे ।

## प्रणीता जलेनसंस्कारादि कथनम्

अग्नि के पीछे जलयुक्तपात्र को लेकर रख दे, तत्पश्चात् उसे उलट दे, पुनः उस जल को इस मंत्र द्वारा 'उपयमनकुशा' आदि से यजमान, धर्मपत्नी और उसके पुत्र के सिर पर सेचन करें—

ॐ आपः शिवा शिवतमाः शान्ताः शान्त तमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ॥

उपरांत उपयमन कुशा को अग्नि में फेंक दे ।

## श्रेयोदानम्

निम्न संकल्प श्रेयोदान के निमित्त करे—

अथ होमात्मकोलक्ष्मीनारायणयाग कर्मणः श्रेयोदानं करिष्ये ।

निम्न वाक्यों का उच्चारण करे—

ॐ शिवा आपः सन्तु । सौमनस्यमस्तु । अक्षतं चारिष्टं चास्तु । दीर्घमायुः शान्तिः पुष्टि तुष्टिश्चास्तु ॥

उपरोक्त वाक्योंका क्रमानुसार उच्चारण कर जल, पुष्प, अक्षत, सुपारी एवं नारिकेल आदि लेकर पुनः यह वाक्य कहें—

भवन्तियोगेन मया अस्मिन् होमात्मकोलक्ष्मीनारायण-याग कर्मणि तदुत्पन्नं यच्छ्रेयस्तत्तुभ्यमहं संप्रददे ।

आचार्य फल आदि यजमान को दे देवें, यजमान उसे सुगुप्तस्थान में रख दे एवं अवसर मिलने पर भक्षण करे ।

## आचार्यकर्तृकश्रेयोदानम्

निम्न संकल्प करे—

भवन्नियोगेन मया एभि ब्राह्मणैः सह कृतं यदाचार्यत्वं ब्रह्मत्वं-सदस्यत्वं-गाणपत्यमुपद्रष्टृत्वं जपहोमादिकं च बहूत्पन्नं यच्छ्रेयस्तदमुना फलादिना तुभ्यमहं संप्रददे ।

## [1]अभिषेकः

आचार्य सहित सभी ब्राह्मण उत्तर की ओर मुख कर पूर्वाभिमुख बैठे यजमान एवं उसकी धर्मपत्नी तथा कुटुम्ब के सदस्यों का पूर्वस्थापित स्वच्छ कलशों के जलको शुद्ध ताँबे के चौड़े मुख के पात्र में थोड़ा-थोड़ा लेकर दुर्वा एवं पंचपल्वादि से निम्न वैदिक मंत्रों का उच्चारण कर अभिषेक करें—

देवस्यत्वासवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रिये दधामि बृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ ॥ १ ॥

---

१—विस्तृत अभिषेक के लिए दुर्गोपासन प्रयोग देखें ।

देवस्यत्वासवितुः प्रसवेऽश्विनोर्व्वाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै व्वाचो यन्तुर्यन्त्रेणाऽग्नेः साम्राज्येनाभिषिञ्चामि ॥ २ ॥

देवस्यत्वासवितुः प्रसवेऽश्विनोर्व्वाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्च्चसायाभिषिञ्चामि सरस्वत्यै भैषज्येनव्वीर्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेऽभिषिञ्चामि ॥ ३ ॥

पश्चात् इस वाक्य का उच्चारण करे—

अमृताभिषेकोऽस्तु—यजमान कहें ।

तथास्तु—ब्राह्मण कहें ।

अभिषेक कर्म के लिए यह संकल्प करके दक्षिणा देवें—

ततः—कृतस्याभिषेक कर्मणः समृद्धयर्थं दक्षिणां दातु महऽत्सृज्ये ।

दक्षिणाप्रदान करने के पश्चात् यजमान की धर्मपत्नी एकबार आचमन करे, एवं अपने पति के दाहिने बैठ जाये ।

## आचार्यादिनां दक्षिणासंकल्पः

संकल्प करे—

कृतस्य होमात्मकोलक्ष्मीनारायणयाग कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तत्सम्पूर्ण फलप्राप्त्यर्थं च आचार्यादिभ्यो, महर्त्विग्भ्यः, सूक्तपाठकेभ्यो, मन्त्रजापकेभ्यो, हवनकर्तृभ्योऽन्येभ्यो देवयजनमागतेभ्यश्च दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये ।

## पीठदानादिसंकल्पः

संकल्प करे—

कृतस्य होमात्मकोलक्ष्मीनारायणयाग कर्मणः समृद्ध्यर्थमिमानि सोपस्करसहितानि प्रधानपीठादीनि आचार्याय संप्रददे। कृतैतत्पीठ दानकर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं यथाशक्तिदक्षिणामाचार्याय संप्रददे।

## ध्वजापताकादिदानसंकल्पः

संकल्प करे—

कृतस्य होमात्मकोलक्ष्मीनारायणयाग कर्मणः समृद्ध्यर्थमिमं मंडप ध्वजपताकाद्युपस्करयुतामाचार्याय संप्रददे।

कृतस्य मंडपदान सांगतासिद्ध्यै यथाशक्तिद्रव्यमाचार्याय संप्रददे॥

कृतस्य होमात्मको लक्ष्मीनारायणयाग कर्मणः समृद्ध्यर्थमिमानि यज्ञपात्राणि यज्ञ पूजोपकरणानि आचार्याय संप्रददे।

## ब्राह्मणभोजनसंकल्पः

कृतस्य होमात्मकोलक्ष्मीनारायणयाग कर्मसमृद्ध्यै यथाशक्तिब्राह्मणान् भोजयिष्यामि।

## छायापात्रदानम्

सभी विघ्नों एवं कष्टों तथा नवग्रहों की पीड़ा के निवित्यर्थं यजमान कासे के चौड़े मुख के पात्र में घी गेरकर व अपनी शक्ति अनुसार दक्षिणादि उसमें गेरकर अपने मुँखकी छाया को देखकर ब्राह्मणको देवें, उसके पूर्व यह संकल्प करे—

संकल्प :—

देशकालौ संकीर्त्य—अमुक गोत्रः ( शर्मा, वर्मा ) मम आत्मनः श्रुतिस्मृति पुराणोक्त फलप्राप्त्यर्थं कायिक-वाचिक मानसिक-सासर्गिकचतुर्विध दुरितक्षय द्वारा धर्म-अर्थ-काम मोच्च प्राप्त्यर्थं श्रीमहामृत्युंजय देवता प्रीत्यर्थं दैहिक, दैविक भौतिक, तापत्रय निवारणार्थं आयुः आरोग्यैश्वर्य प्राप्त्यर्थं सर्वारिष्ट निवारणार्थं इदं ।

घृतपूरितकास्य पात्रं, सदक्षिणाकं मुखमवलोकितं अमुक-गोत्राय अमुक शर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यंमह संप्रददे ॥

उपरांत प्रार्थना करे—

याऽलक्ष्मीर्यच्च मे दौस्थ्यं सर्वांग समुपस्थितम् ।
तत्सर्वं नाशयाऽऽज्य ! त्वं श्रियमायुश्चवर्द्धय ॥
आज्यं सुराणामाहारः सर्वमाज्ये प्रतिष्ठितम् ।
आज्यपात्र प्रदानेन शांतिरस्तु सदामम ॥

## भूयसीदक्षिणासंकल्पः

भूयसीदक्षिणा के निमित्त यह संकल्प करे—

कृतेऽस्मिन्न होमात्मको लक्ष्मीनारायणयाग कर्मणिः

न्यूनातिरिक्तदोष परिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो, ब्राह्मणेभ्यो, नटनर्तक, गायकेभ्यो, दीनानाथेभ्यश्च यथाशक्ति भूयसींदक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये ।

## अथोत्तरपूजनम्

उत्तरपूजन के लिए यह संकल्प करे –

कृतस्य होमात्मको लक्ष्मीनारायणयाग होम कर्मणः साङ्गतासिद्धये आवाहितदेवानांमुतर पूजां करिष्ये ।

उपरांत विधि-विधान से गणपत्यादि देवताओं की पूजा करे ।

## देवविसर्जनम्

इस वैदिक मंत्र एवं पौराणिक श्लोक का उच्चारण कर देवताओं का विसर्जन करे—

ॐ उतिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे ।
उपप्रयन्तुमरुत ÷ सुदानवऽइन्द्रप्राशूर्भवासचा ॥
यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामिकीम् ।
इष्टकामार्थसिद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च ॥

इस मंत्र एवं श्लोक का उच्चारण कर अग्नि का विसर्जन करे—

ॐ यज्ञयज्ञं गच्छयज्ञ पतिङ्गच्छ स्वां योनिङ्गच्छ स्वाहा ।
एषते यज्ञो यज्ञपते सहसूक्तवाकः सर्व्व वीरस्तञ्जुषस्व स्वाहा ॥

गच्छ-गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर ।
यत्र ब्रह्मादयो देवस्तत्र गच्छ हुताशन ॥

## क्षमापनम्

चतुर्भिश्च-चतुर्भिश्च द्वाभ्यां पंचभिरेव च।
हूयते च पुनर्द्वाभ्यां तस्मैयज्ञात्मने नमः ॥ १ ॥
मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरः।
यन्मम त्रुटितं देव परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ २ ॥
अपुत्राः पुत्रिणः सन्तु पुत्रिणः सन्तु पौत्रिणः।
निधनाः सधना सन्तु जीवन्तु शरदां शतम् ॥ ३ ॥
अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व पमेश्वर ॥ ४ ॥
जपच्छिद्रं-तपच्छिद्रं यच्छिद्रं - यज्ञ कर्मणि।
सर्वं भवतु मे ऽछिद्रं ब्राह्मणानां प्रसादतः ॥ ५ ॥
काले वर्षतु पर्जन्यः पृथिवी सस्यशालिनी।
देशोऽयं क्षोभरहितो ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः ॥ ६ ॥
सर्वे च सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मां कश्चिद् दुःखमाप्नुयात् ॥ ७ ॥
अज्ञानात् विस्मृते भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम्।
विपरीतं तु तत्सर्वं क्षमस्व परमेश्वर ॥ ८ ॥
न्यूनातिरिक्तं यत्कर्म जप होमार्चनादिकम्।
कृतमज्ञानतो देव तन्मम क्षन्तु महर्षि ॥ ९ ॥
पापोऽहं पापकर्माऽहं पापात्मा पापसंभवः।
त्राहिमां पुण्डरीकाक्षं सर्वपापहरोहरिः ॥१०॥

प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवे ताध्वरेषु यत् ।
स्मरणा देवतद्विष्णो सम्पूर्ण स्यादिति श्रुतिः ॥११॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपो-यज्ञ-क्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातिसद्यो वन्दे तमच्युतम ॥१२॥

इन वाक्यों का तीन बार उच्चारण करे--

ॐ विष्णवे नमः ।

ॐ विष्णवे नमः ।

ॐ विष्णवे नमः ।

## आशीर्वादः

पौराणिक श्लोकों का उच्चारण कर आचार्य एवं यज्ञस्थल पर उपस्थित सभी ब्राह्मण, यजमान एवं उसके परिवार के सदस्यों को आशीर्वाद प्रदान करे—

स्वस्त्यस्तुते कुशलमस्तु चिरायुरस्तु,
गोहस्ति वाजिधनधान्य समृद्धिरस्तु ।
ऐश्वर्यमस्तु विजयोऽस्तु रिपुक्षयोऽस्तु,
कल्याणमस्तु सततं हरिभक्ति रस्तु ॥ १ ॥

त्रिनयनमभि मुखानिः सृता मिमां,
य इह पठेत्प्रयतश्च सदा द्विजः ।
स भवति धनधान्य पशु-पुत्रःकीर्तिमानतुल च,
सुखं समश्नुते दिवीति – दिवीति ॥ २ ॥

श्रीर्वर्चस्व मायुष्य मारोग्य, माविधात्पवमानं महीयते ।
धान्यं धनं पशुं वहु पुत्र लाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः ॥३॥

मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ।
शत्रुणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणा मुदयस्तव ॥४॥

धारण की हुई पवित्री का कर्मान्त में त्याग कर, अवशिष्ट जल को तुलसी आदि में छोड़ दें, तथा इष्ट-मित्र आदि को प्रसन्न कर, अपने बान्धवों के साथ उत्साह पूर्ण हो भोजन करे।

॥ इति होमात्मको लक्ष्मीनारायणयाग पद्धतिः ॥

# गणेशयाग पद्धतिः

यजमान पूर्वाभिमुख शुद्ध आसन पर बैठकर रक्षादीप प्रज्वलित करे, तथा आचार्य, यजमान एवं उसकी धर्मपत्नी का ग्रंथिबधन करे, उपरांत इस वैदिक मंत्र से पवित्री धारण करवाये—

ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्व्व ÷ प्रसवऽउत्पुनाम्य च्छिद्रेण पवित्रेण सूर्य्यस्य रश्मिभि ÷ । तस्य ते पवित्रपते पवित्र पूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् ॥

इन तीन नामों का उच्चारण कर आचमान करावे—

ॐ केशवाय नमः ।
ॐ नारायणाय नमः ।
ॐ माधवाय नमः ।

इस मंत्र से शुद्धि करण हेतु स्वयं के ऊपर एवं समस्त यज्ञसामग्री पर जल छिड़के ।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थांगतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्पुण्डरी काक्षं सबाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥
ॐ पुण्डरी काक्षः पुनातु ।

हाथ में पुष्पादि लेकर आचार्य सहित सभी ब्राह्मण [1]शांति पाठ करे ।

शांतिपाठ की समाप्ति के पश्चात् आचार्य गणेशयाग को आरम्भ करवाने के हेतु इस प्रधान संकल्प को यजमान से करवाये--

---

[1]—शांतिपाठ के लिए पृष्ठसंख्या १ से ५ तक के पृष्ठों को देखें ।

प्रधान संकल्प :—

देशकाल कीर्तनान्ते-गोत्रः शर्मा श्री मन्विनायकोपसर्ग निवृत्ति पूर्वक श्रीमहागणपति प्रीतये गणतांत्वैति मंत्रण सहातून इति सूक्तस्य लक्षसंख्याकरण हवनात्मक गणेशयागं तथा मूलमंत्रेण सहाथर्वशीर्षस्य पुरश्चरणात्मकयागं च सहैक तंत्रेण ब्राह्मण द्वारा कारयिष्ये । तदंगत्वेन [1]स्वस्तिपुण्याहवाचनं, मातृकापूजनं, नान्दीश्राद्ध, आचार्यादिवरणं, कर्म करिष्ये । तत्रादौ निर्विघ्नता सिद्धयर्थं गणेशाम्बिकापूजनं करिष्ये ॥

पश्चात् [2]पंचाङ्गपूजन से मण्डपप्रवेश पर्यन्त सभी कर्म करके गणपतिभद्र अथवा सर्वतोभद्रपीठ की रचना कर उसमें ब्रह्मादि देवताओं का आवाहन एव पूजन कर मंडल के मध्य में कलश का स्थापन एवं पूजन करे, उपरांत कलश के ऊपर स्वर्ण, रजत अथवा ताम्रपत्र पर 'गणेशयंत्र' की विधिवत् स्थापना करे ।

तत्र क्रम—

यत्रके मध्यमें ॐ कार, फिर त्रिकोण, फिर षट्कोण, पुनः अष्टदलादि फिर चतुरस्र भूगृह, लालचंदन से बनावें ।

गणेश यंत्रस्य इह प्राणा इह प्राणः ।

गणेश० जीव इह स्थितम् ।

गणेश० सर्वेन्द्रियाणि ।

गणेश० वाङमनः प्राणाः इहायां तु स्वाहा ॥

---

१—स्वस्तिपुण्याहवाचन, मातृकापूजन, नान्दीश्राद्ध, आचार्यवरणादि कर्म 'विष्णुयाग' अथवा ग्रहशांतिप्रयोगपद्धति के द्वारा करावें ॥

२—पंचांग पूजन से मंडपप्रवेश पर्यन्त सभी कर्म ग्रहशांति अथवा विष्णुयाग प्रयोग के द्वारा करावें ।

इति प्रतिष्ठा विधाय द्वारस्य दक्षवाम शाखयो रूर्ध्वभागे च—

श्रीं ह्रीं क्लीं इति बीजत्रयं सर्वत्र प्रयुञ्जीत ।

१-भद्रकाल्यै नमः ।

२-भैरवाय नमः ।

३-लम्बोदराय नमः ।

इस प्रकार द्वार देवताओं की पूजा कर, भीतरप्रवेश करके पूजन सामग्री को दाहिनी ओर रखकर कई दीपक या एक दीपक जलाकर मूल [1]मंत्र से बारह बार मंत्रितजल से प्रोक्षित आसन में इस वाक्य को पढकर—

श्रीं ह्रीं क्लीं आधार शक्ति कमलासनाय नमः ।

पूर्वाभिमुख पद्मआसनादि किसी एक आसन से बैठकरे--

ॐ वक्रतुण्डाय हुम्-इति पुष्पाञ्जलिं भूमौ अकीर्य श्रीगुरु-पादुकेभ्यो नमः-इति मुष्टिर्निबद्धाञ्जलिः ।

एवं स्ववामदक्षिणपार्श्वयोः--ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवदसर्वजनमेवशामानय स्वाहा ।

इत्यष्टाविंशत्यक्षर मनुना देवं प्रणम्य स्वस्यतदैक्यं भावयन् ।
ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं अपसर्पन्तु० शिवाज्ञया--

इस मंत्र का एक बार उच्चारण कर बाये पैर को भूमि पर तीन बार पटके तथा सामने, बायें, दायें, तिरछे देखकर तीन बार ताली बजा कर भौम, अंतरिक्ष व दिव्यदेवाताओं का उत्सारण करे—

---

१. ॐ गं गणपतये नमः । [ मूल मंत्र ]

ततः 'ॐ नमः' इत्यंगुष्ठमन्त्र मुच्चार्य कुशैन शिखां वघ्नीयात्।

[1]भूतशुध्यादि अत्र कृताकृतम्।

करणपक्षे प्राणप्रतिष्ठान्ते विंशतिधा षोडशधा दशधा सप्तधा वा मूलेन २८ प्राणायामः।

ततः तेजो रूप देवानन्यं भावयन् आत्मनं ऐं हः अस्त्राय फट्।

इत्यावृत्यांगुष्ठादिकरतलान्तं कर्पूरयोश्च विन्यस्य देहे च व्यापकं कृत्वा मातृकान्यासे।

श्रीं ह्रीं क्लौं इति बीजत्रयं प्रथमं योज्यमिति विशेषः।

ततः ॐ गां श्रीं गीं २ ह्रीं गूं ३ क्लीं गैं ४ ग्लौं गौं ५ गंगः ६ इत्यंगुष्ठादिषकरादि च न्यस्य मूलेन २८ त्रिव्यापकं कुर्यात्।

ततो हृदब्जे विघ्नेशं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य सामान्यविशेषार्ध्यं आसाद्य तत्र।

ॐ ३ अं अग्निमण्डलाय द्वादशकलात्मनेऽर्घ्यपात्राधाराय नमः।

ॐ ३ सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मनेऽर्घ्यपात्राय नमः।

ॐ ३ मं सोमण्डलाय षोडशकलात्मनेऽर्घ्यमृताय नमः—

---

१—भूतशुद्धि जो करना चाहें वो करें, इस कर्म के विषय में गणेशयाग को संपन्न कराने वाले आचार्य का अपना मत ही उचित होगा।

इति मन्त्रत्रयेणाधारपात्रावस्थजलं पूजनम् । देवगायत्र्या गणानां त्वतित्यर्कगणेश यत्रम् विशेषावविन्दुभिः पूजासामग्री संप्रोक्षणं ततः--

नवरत्नमयं द्वीपं स्मरेद्दिक्षु रसाम्बुधा ।
तद्ववांश्रोतपर्यन्तं मन्दमारुत सेवितम् ।।
उदभासितरत्नछायाभिररूणीकृभूतलम् ।
उद्यद्दिनकरेन्दुभ्याम्रुद्भासितदिगन्तरम् ।।
राज्य मध्ये पारिजातं नवरत्नमयं स्मरेत् ।
क्रतुभिः सेवितं षडखिरनिश प्रीतिवर्द्धनैः ।।

तस्याधस्तान्महापीठे रचिते मातृकाम्बुजे । षट्कोणान्त-स्त्रिकोणाडच्यं महागणपतिं स्मरेत्-इत्येवं पीठं ध्यात्वा अक्षतैः पुष्पैर्वा पीठपूजा ।।

ॐ सर्वत्र मूलप्रकृत्यै० १ आधारशक्तयै० २ कूर्माय० ३ अनन्ताय० ४ वराहाय० ५ पृथिव्यै० ६ क्षीरार्णवाय० ७ श्वेतद्वीपाय० ८ रत्नोज्वलितस्वर्णमण्डपाय० ९ कल्पवृक्षाय० १० स्वर्णवेदिकायै० ११ सिंहासनाय० १२ ।

पादेषु—आग्नेयादि-धर्माय० १ ज्ञानाय० २ वैराग्याय० ३ ऐश्वर्याय० ४ ।

गात्रेष प्रागादि-अधर्माय १ अज्ञानाय० २ अवैराग्याय० ३ अनैश्वर्याय० ४ ।

कार्णिकायाम्-अनन्ताय० १ पद्माय० २ आनन्दकन्दाय०

३ संविन्नालाय० ४ प्रकृतिमयपत्रेभ्यो० ५ विकारमयकेसरेभ्यो० ६ पञ्चाशद्वर्णाढ्यकर्णिकायै–सूर्यमण्डलाय० ७ चन्द्रमण्डलाय० ८ अग्निमण्डलाय० ९ सत्याय० १० रजसे० ११ तमसे० १२ आत्मने० १३ अन्तरात्मने० १४ ज्ञानात्मने० १५ मायातत्वाय० १६ कलातत्वाय० १७ विद्यातत्वाय० १७ परतत्वाय० १८ पूर्वादि— तीव्रायै० १ ज्वालिन्यै० २ नन्दायै० ३ भोगायै० ४ कामरूपिण्यै० ५ उग्रायै० ६ तेजोवत्यै० ७ सत्यायै० ८ मध्ये–विघ्ननाशिन्यै० १ सर्वशक्तिकमलासनाय नमः २ ।

इसप्रकार कर्णिका में पुष्पांजलि देवे—

ॐ सत्यज्ञानानन्तानन्दरूपंपरं धामैव सकलं पीठम् इति चिन्तयेत् ।

इक्कीस पल स्वर्ण की गणेशप्रतिमा तद्ध व तद्ध से भी अर्ध प्रमाण की सिद्धि-बुद्धि लक्ष-लाभ समंत्रित मूषकवाहन सहित का अग्न्युत्तारण करे ।

## अग्न्युत्तारणम्

अग्न्युत्तारण कर्म के लिए यजमान से यह संकल्प करावे :—

कृतेऽस्मिन् गणेशयागकर्मणि न्यूनातिरिक्त दोष परिहारार्थं अथवा धातादि दोष परिहारार्थं अमुकगोत्रः अमुक शर्माहं अस्यां सुवर्णमय अथवा रजतमय श्रीगणेशप्रतिमायाः सान्निध्यार्थं च अग्न्युत्तारणं करिष्ये ।

संकल्प के उपरांत किसी पात्र में सोने की अथवा रजत की गणेश प्रतिमा को पंचामृत लेपन पूर्वक पान के ऊपर रख इन बारह वैदिक मंत्रों का क्रमानुसार उच्चारण कर आचार्य अग्न्युत्तारण कर्म को करवाये–

अग्न्युत्तारणमन्त्रा :—

ॐ समुद्रस्य त्वावकयाग्ने परि व्ययामसि ।
पावको ऽअस्मभ्यर्ठं॰ शिवो भव ॥ १ ॥

हिमस्य त्वा जरायुणाग्ने परि व्ययामसि ।
पावको ऽअस्मभ्यर्ठं॰ शिवो भव ॥ २ ॥

उपज्मन्नुप वेतसेऽवतर नदीष्वा ।
अग्ने पित्तमपामसि मण्डूकिताभिरागहि सेमन्नो
यज्ञं पावकवर्णर्ठं॰ शिवं कृधि ॥ ३ ॥

अपामिदं न्ययनर्ठं॰ समुद्रस्य निवेशनम् ।
अन्न्याँस्ते ऽअस्मत्तपन्तु हेतय÷ पावको
ऽअस्मभ्यर्ठं॰ शिवो भव ॥ ४ ॥

अग्ने पावक रोचिषा मन्द्रया देव जिह्वया ।
आ देवान्वक्षि यक्षि च ॥ ५ ॥

स न÷ पावक दीदिवोऽग्ने देवाँ२॥ इहावह ।
उप यज्ञर्ठं॰ हविश्च नः ॥ ६ ॥

पावकया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामन्रुरुच ऽउषसो न भानुना । तूर्व्वन्न यामन्नेतशस्य नूरण ऽआयो घृणो न ततृषाणो ऽअजर÷ ॥ ७ ॥

नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्ते ऽअस्त्वर्च्चिषे । अन्न्याँस्ते ऽअस्मत्तपन्तु हेतय÷ पावको ऽअस्मभ्यर्ठं॰ शिवो भव ॥ ८ ॥

नृषदे व्वेडप्सुषदे व्वेड व्वर्हिषदे व्वेड् व्वनसदे व्वेट् स्वर्व्विदे व्वेट् ॥ ९ ॥

ये देवा देवानां यज्ञिया यज्ञियानाᳬसंवत्सरीणमुप भागमासते ।

अहुतादो हविषो यज्ञे ऽअस्मिन्त्स्वयं पिबन्तु मधुनो घृतस्य ॥ १० ॥

ये देवा देवेष्वधि देवत्वमायन्ये ब्रह्मणः पुरऽ एतारोऽअस्य ।

येभ्यो न ऽऋते पवते धाम किञ्चन न ते दिवो न पृथिव्या ऽअधि स्नुषु ॥ ११ ॥

प्राणदा ऽअपानदा व्व्यानदा व्वर्च्चोदा व्वरिवोदाः ।

अन्याँस्ते ऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावको ऽअस्मभ्यठं शिवो भव ॥ १२ ॥

अग्न्युत्तारण के पश्चात् इन श्लोकों से ध्यान करे—

एकदन्तं शूर्पकर्णं गजवक्त्रं चतुर्भुजम् ।
पाशांकुशधरं देवं मोदकान्वितं च करैः ॥
रक्तपुष्पमयी मालां कंठे हस्ते परांशुभाम् ।
भक्तानां वरदां सिद्धिबुद्धिभ्यां सेवित सदा ॥
तथा च लक्षलाभाभ्यां लक्षलाभप्रदंसदा ।
सिद्धिबुद्धिप्रदातॄणां धर्मार्थकाममोक्षदम् ॥
ब्रह्मरुद्रहरीन्द्राद्यैः संस्तुत परमर्षिभिः ॥

गणेशगायत्री—

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नोदन्तिः प्रचोदयात्॥

गणानात्वा०—इति मन्त्राभ्यां मूलेन चावाह्य महागणपतये ससुपुत्राभ्यामन्वितायासुवाहनयुताय नम इति। ततः आवाहनसं स्थापनसन्निधापनसन्निरोधनसम्मुखीकरणवगुण्ठनानि कृत्वा।

ॐ गां हृदयाय नमः। श्रीं गीं शिरसे०। ह्रीं गूं शिखायै व०। क्लीं गैं कव०। ग्लौंगंनेत्र०। गंगः अस्त्राय फट् इति। सकलीकृत्य वन्दनधेनुयोनिमुद्राश्च प्रदर्यं पुरुषसूक्तेनं गणानां इति मन्त्रेण च पूजयेत्।

तत्र विशेषः-गजास्याय नमः—आवाहयामि।

विघ्नराजाय०—आसन० १ लम्बोदराय०—पाद्य० ३ शिवात्मजाय०—अर्घ्यम्० ४ वक्रतुण्डाय०-आचमनीय० ५ शूर्पकर्णाय-पञ्चामृतस्नानम्० ६ कुब्जाय० — स्नान० विनायकाय०--वस्त्र० ७ विघ्ननाशिने०--उपवस्त्र० ८ यज्ञोपवीतं च ९ विकटाय०--अक्षतान्० १० वामनाय० गन्ध० ११ सर्वविघ्नविनाशिने०--पुष्पं० १२।

अथावरणार्चनम्—कर्णिकायां पूर्वादि गणाधिपतये० गणेशाय० गणनाथकाय० गणक्रीडाय०।

केसरेषुपूर्वादि हृदयाय० शिरसे। शिखायैंवषट् कवचाय-हुम्। नेत्रत्रयाय वौषट् इत्याग्नेये अस्त्राय फट् इतीशान्ये। नमोन्ता पूजनीयाः।

पत्रेषु-पूर्वादि वक्रतुंडाय० १ एकदन्ताय० २ महोदराय० ३ गजाननाय० ४ लम्बोदराय० ५ विकटाय० ६ विघ्नराजाय० ७ धूम्रवर्णाय० ८ दलाग्रेषु।

ब्रह्मादिक, इन्द्रादिदेवता और उनके अस्त्रों को एकाक्षर मूलमंत्र एवं गणपत्य अथर्वशीर्ष के अन्तर्गत आवरण देवता ये हैं—

---

## अथाष्टाविंशत्यक्षरमूलमन्त्रस्यावरण देवताः

त्र्यस्रषडस्रयोरन्तराले प्रागादि क्रमेण विल्ववृक्षस्याधस्थितां लक्ष्मीं पद्महस्तां चक्रशंखहस्तं वासुदेवं ध्यात्वा—

लक्ष्मीवासुदेवाभ्यां नमः--इति सम्पूज्य एवं।

दक्षिणे वटवृक्ष० तां पाशांकुशधरां गौरीं टङ्कशूलधरं हरम्—इति ध्यात्वा-गौरीगौरीपतिभ्यां०।

पश्चिमे पिप्पलवृक्ष० तामुत्पलद्वयहस्तां रतिथिइक्षुकोदण्ड-वाडधरं रतिपतिं ध्यात्वा रतिरतिपतिभ्या। उत्तरे-प्रियंगुवट० तांशुकव्रीहिवल्लिधरां भूमिं गदाचक्रधरंवराहम्' ध्यात्वा मही-वराहाभ्यां०। इतिप्रथमावरणम्। षडस्रेषु-गंऋद्धि० मोदाभ्यां० गंसमृद्धिप्रमोदाभ्यां० गंकान्तिसुमुखाभ्यां० गंमदनावती-दुर्मुखाभ्यां० गंदेपामद्रविघ्नाभ्यां० गंद्राविणीविघ्नकर्तृभ्यां० इति। दक्षपार्श्वे—वसुधाराशङ्खनिधिभ्यां०। वामपार्श्वे वसुमती-पद्मनिधिभ्यां० इतिद्वि०। केसरेषु षडस्रसन्धिषट्केष्वित्यर्थः। ॐ गांहृदयाय० श्रींगीशिर० हृं गुंशिखा० क्लींगैं कव० ग्लौंगौनेत्रत्रया० गंगः अस्त्रा० इतितृ० अष्टपेत्रेषु पश्चिमादि आंब्राह्म्यै० इंमाहेश्वर्यै० उँकौमार्यै० ऋं वैष्णव्यै० ४ वायव्यादि लृंवाराह्यै० ऐंमाहेन्द्र्यै० औंचामुण्डायै० अःमहालक्ष्म्यै० इतिचतु०।

पत्राग्रेषु चतुरस्त्ररेखायाम्–इन्द्राय नम इत्यादि ८ दिक्पालान् तदस्त्राणि च वज्राय० शक्तये० दण्डाय० खङ्गाय० पाशाय० ध्वजाय० शङ्खाय० त्रिशूलाय० इतिपञ्च०।

सर्वा अप्यावरणदेवता देवस्याभिमुखासीनाः स्वयं तत्तदभिमुखः पूजयामीति भावयेत् ।

## अङ्गपूजनम्

गणेश्वराय० पादौ पू० १ विघ्नराजाय० जानुनीपू० २ अखूवाहनाय नमः उरूपू० ३ हेरम्बाय० कटीपू० ४ कण्ठहारिसूनवे० नाभिं पू० ५ लम्बोदराय० उत्तरं पू० ६ गौरीसुताय० पू० ७ गणनायकाय० हृदयं पू०८ स्थूलकण्ठाय० कंठं पू०९ स्कन्दाग्रजाय० स्कन्धौ० १ पाशहस्ताय० हस्तौ०। गजवक्राय० वक्रपू० विघ्नहन्त्रे०-ललाटं पू० सर्वेश्वराय० शिरः पू० गणाधिपाय० सर्वाङ्गंपू०। अथैकविंशतिपत्रार्पणम् गणाधिपाय० भृङ्गराजपत्रं समर्प्य० १ उमापुत्राय० बिल्वपत्रं स० २ गजाननाय० दूर्वाप० ३ लम्बोदराय० बदरीप० ४ हरसूनवे० मधुप० ५ इभवक्राय० तुलसीप० ६ गुहाग्रजाय० अपामार्गप०७ एकदन्ताय० बृहतीप० ८ शमीप० १० विकटाय० ९ करवीरप० विनायकाय अश्वत्थप० कपिलाय० अर्कप० वटपा० चंपकप० अभदाय०अर्जुनप०पत्नीहिताय० विष्णुक्रान्ताप० सुराधिपतये० देवदारुप० भालचन्द्राय० अगरुप० हेरम्बाय० श्वेतदूर्वाप०

शूर्पकर्णा० जातीप० सुरनाथाय० धत्तूरप० एकदन्ता० केतकीपत्रं समर्पयामि ।

नामपूजा

गन्धाक्षतपुष्पैः—गजाननाय० विघ्नराजाय० लम्बोदराय० शिवात्मजाय० वक्रतुण्डाय० शूर्पकर्णाय० कुब्जाय० विनायकाय० विघ्ननाशनाय० विकटाय० वामनाय४ सर्वार्त्तिनाशिने० भगवते० विघ्नहर्त्रे० धूम्राकाय० सर्वदेवाधिदेवाय० एकदन्ताय कृष्णपिङ्गाय० भालचन्द्राय० गणेश्वराय० गणपाय० ।

ततः—

हरिताः श्वेतवर्णा वा पञ्चत्रिपत्रसंयुताः ।
दूर्वाङ्कुरा मया दत्ता एकविंशतिसम्मिताः ॥

गंगाधिपाय० दूर्वाङ्कुरान्समर्पयामि । एवं सर्वत्र—उमापुत्राय० अभयप्रदाय० एकदन्ताय० मूषकवाहनाय० विनायकाय० ईशपुत्राय० मोदकप्रियाय० विघ्नविध्वंसकर्त्रे० विश्ववन्द्याय० अमरेशाय गजकर्णाय० नागयज्ञोपवीतिने० भालचन्द्राय० विश्वाधिपाय० विद्याप्रदाय० २१ ततः भगवते नमः धूपं० विघ्नहर्त्रे० ।

दीपं नैवेद्येत्रिकोणवृत्तचतुरस्रमण्डलकरणं मूलेन प्रोक्ष्य धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य मूलेन सप्तवाराभिमन्त्र्यधूम्रकाय नमः । नैवेद्यं सर्वदेवाधिदेवाय० आचमनीयं एकदन्ताय० फलं० कृष्णपिङ्गाय० ताम्बूलं० ।

न्यूनातिरिक्त पूजायां सम्पूर्ण फलहेतवे।
दक्षिणां काञ्चनीं देव स्थापयामि तवाग्रतः॥
भालचन्द्राय० दक्षिणां० अत्र वा एकविंशतिदूर्वार्पणम्।
सितपीतैस्तथारक्तैर्जलजैः कुसुमैः शुभैः।
ग्रथितां सुन्दरां मालां गृहाण परमेश्वर॥

श्रीमहागणपतये० मालां समर्प्य दूर्वाभिरर्चयेदितिविशेषः गणेश्वराय०—इति हृदि ध्यात्वा एकविंशतिप्रदक्षिणः कार्याः। ततः पञ्चार्त्तिपञ्चदीपैः कृत्वा यज्ञेनयज्ञं० देवाः गणपाय नमः—मन्त्रपुष्पं प्रदक्षिणानमस्कारौ च कृत्वोपविश्य।

स्तुत्वा—

दीनानाथ दयानिधेपुरजणेः संसेव्यमानो।
द्विजैर्ब्रह्मेशानमहेन्द्रशेषगिरिजागन्धर्वसिद्धैस्तुतः॥
सर्वारिष्टनिवारणे कनिपुणस्त्रैलोक्य नाथप्रभो।
भक्तिं मे सफलांकुरुष्व सकलां क्षत्वा पराधान्मम॥

अस्य श्रीमहागणपतिमन्त्रस्य गणकऋषि निचृद्गायत्रीछन्दः महागणपतिदे० गं बीजं स्वाहा शक्तिः ग्लां कीलकं सकलाभिष्टसिद्धये जपे विनियोगः। ॐ गां हृ० श्रींगींशिर० ह्रीं गूँ शि० क्लीरौं कव० ग्लोंगौं नेत्र० गंगः अस्त्राय फट्।

दक्षिणःकरमारभ्य पूरगदेक्षुकार्मुकपरशुचक्राणिध्येयानि। वामोपरितनमारभ्यांकुरपाशांकशशकलकमाग्रस्वविषाणकलशानि ध्येयानि। एवं दशभुजात्मको गणपतिः।

अथ ध्यानम्—

बीजापागदे २ क्षुकर्मुकरुजा ३ चक्रा ४ ऽब्जाशा-
ऽङ्कुशाव्रीह्यग्रस्वविवरण ३ रत्नकलश ४ प्रोद्यत्कराम्भोरु ।

ध्येया वल्लभयाचपद्मकरयाश्लिष्टोज्वलद्भूषया ।
विश्वोत्पत्तिविनाशसंस्थितिकरोविघ्नोविशिष्टार्थदः ॥
गण्डपाली-गलद्दान-पूरमान्न-सलाकसान् ।
द्विरेफान्कर्ण तालाभ्यां वारयन्तं मुहुर्मुहुः ॥
कराग्रधृत माणिक्यं कुम्भवक्त्रविनिसृतैः ।
रत्नवर्षैः प्रीणयन्तं साधकान्मदविह्वलम् ॥



इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा कर मूलमंत्र का १०८ बार जाप करें।

इत्थं पूजां विधाय सूक्तजपपक्षे गणानांत्वा० आतूनइन्द्र इति सूक्ताभ्यां च दशलक्षं जपः । मूलमन्त्रस्य द्वादशसहस्राधिकैकलक्षं जपः ।

गणपत्यथर्वशीर्षस्य मोदकहवनद्रव्ये दशसहस्रं जपः । दशांशहोमः । मोदकैः पृथुकैर्लाजैः सक्तुभिश्चेक्षपर्वभिः । नारिकेरैस्तिलैःशुद्धैः सुपक्कैः कदलीफलौ–इत्यष्टद्रव्यैर्मूलेन होमः ११२००

मोदकैः सहस्रसंख्याको होमोथर्वशीर्षस्य । अनयोर्होमदशांशेन तर्पणं तद्दशांशेन मार्जनं तद्दशांशेन विप्रभोजनमिति ।

नित्यजाप के अंग होने से बलिदान या होम में से किसी भी पक्ष में बलिदान का प्रकार इसप्रकार है। अपनेसंमुख, अपनेवाम भाग में त्रिकोणवृत और चतुरस्रयुक्त मंडल करके—

ॐ ऐं व्यापकमण्डलाय नमः—

गंधादि से पूजन कर, भात या घृताक्त, चिउडा, या दूध एवं जल से भरे हुए तीन पात्र वहाँ रखे—

ॐ ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यो हुं स्वाहा। इतित्रिः पठित्वा दक्षकरार्पितं वामकरतत्वसंस्पृष्टं क्षीरं बल्युपरि दत्वा नाणमुद्रया बलिं भूतैर्ग्राहितं विभाव्य प्रणमेदिति।

इसके पश्चात् हाथ, पैर धोकर आचमन कर गणेश देवता के पास अंजलि बाधकर इन श्लोकों को पढ़ें—

श्रीगणेशस्तवं वक्ष्ये कलौ झटितिसिद्धिम्।
न न्यासो न च संस्कारो न होमो न तर्पणम् ॥ १ ॥

न मार्जनं च पञ्चाशत्सहस्रजपमात्रतः।
सिध्यत्यर्चनतः पञ्चशतब्राह्मणभोजनात् ॥ २ ॥

अस्य भगवान् श्रीसदाशिवऋषिः उष्णिक्छन्दः गणपतिदेवता तत्प्रसादसिध्यर्थे जपे विनियोगः।

ध्यान करे—

चतुर्भुजं रक्ततनुं त्रिनेत्रं पाशांकुशा मोदकपात्रदन्ता।
करैर्दधानं सरसीरुहस्तं गुह्याधिनाथं शशिचूडमीडे ॥

विनायकैक भावनासमर्चनासमर्पितं,
प्रमोदकैःप्रमोदकैः प्रमोदमोदमोदकम्।
यदर्पितं सदर्पितं नवान्य धान्यनिर्मितं,
न कण्डितं न खण्डितं न खण्डमण्डनं कृतम् ॥१॥

सजाति कृद्विजाति कत्स्वनिष्ठभेदवर्जितं,
निरञ्जनं च निर्गुणं निराकृतिप्रनिष्क्रयम् ।
सदात्मकं चिदात्मकं सुखात्मकं परं पदं,
भजामि तं गजाननं स्वमाययाऽत्तविग्रहम् ॥ २ ॥

गणाधिप त्वमष्टमूर्त्तिरीशसूनुराश्वर,
स्वम्बरं च शेखरं धनंजयः प्रभञ्जनः ।
त्वमेव दीक्षितः क्षितिर्निशाकरः प्रभाकरश्च,
राचरप्रजारहेतुरन्तराय शान्तिकृत् ॥ ३ ॥

अभेकदं तमालनीलमेकदन्तसुन्दरं,
गजाननं नमोऽगजाननामृताब्धिमन्दिरम् ।
समस्तवेदवादसत्कलाकलापमन्दिरं
महान्तरायकृत्तमोर्कमाश्रितेन्दुसुन्दरम् ॥ ४ ॥

सरत्नहेम घण्टिकानिनादनूपुरस्वनै,
मृदङ्गतालनादभेदसाधनानुरूपतः ।
धिमिद्धिमित्तथोङ्गथोङ्गथेयि शब्दतो विनायकः,
शशाङ्कशेखरो ऽग्रतः प्रनृत्यति ॥ ५ ॥

प्रहृष्य नमामि नाकनायकैकनायकं
विनायकं कलाकलापकल्पनानिदानमादिपूरुषम् ।
गणेश्वरं गुणेश्वरं महेश्वरात्मसंभवं,
स्वपादपद्मसेविनामपारवैभवप्रदम् ॥ ६ ॥

भजे प्रचण्डतुं दिलं सदंदशूकभूषणं,
सनन्दनादिवन्दितं समस्तसिद्धसेवितम् ।
सुरासुरौघयोः सदा जयप्रदं भयप्रदं भगप्रदं,
समस्तविघ्न घातिनं स्वभक्तपक्षपातिनम् ॥ ७ ॥

कराम्बुजातकङ्कणः पदाब्जकिङ्किणीगणो,
गणेश्वरो गुणार्णवःफणीश्वराङ्गभूषणः ।
जगत्त्रयान्तराय शान्तिकारकोऽस्तु तारको,
भवार्णवस्थघोरदुर्ग्रहा चिदेकविग्रहः ॥ ८ ॥

यो भक्तिप्रणवः परात्परगुरोः स्तोत्रं गणेशाष्टकं,
शुद्धः संयतचेतसा यदि पठेन्नित्यं त्रिसन्ध्यं पुमान् ।
तस्य श्रीरतुला स्वसिद्धिसहिता श्रीशारदा सर्वदा,
स्यातां तत्परिचारिके किलतदाकाः कामनानां कथाः ॥९॥

इस सदाशिवप्रोक्तअष्टक से स्तुति कर शीघ्रकामनापूर्त्ति के लिए प्रतिदिन एक सधवास्त्री एवं एक बटुक की पूजाकर उन्हें भोजन करावें, इस प्रकार पूजा करके सूक्तजप पक्ष में न्यास पूर्वक लक्षसंख्या जपकर्म के अन्तर्गत याथांश संख्या में जप करूँगा ऐसा कहें।

इति प्रतिज्ञाप्यै कविंशतिब्राह्मणाः प्रत्यहं यथा लक्षसंख्यापूर्त्तिः, स्याद्यावत्कालेन तथा विभज्य जपेयुः । नात्रजपदशांशहोमः । लक्षसख्याहुनेत्सूक्तं गणानां त्वेति वा सहेति वचनात् । अतएवागमसिद्धान्तिकायां जपसम एव होम उक्तः । जपसंख्याप्रमाणस्तु होमः संपूर्ण उच्यते । जपकर्मफलावाप्त्यै कर्त्तव्यो मुख्य संमत इति ।

मूलमन्त्रस्याष्टाचत्वारिंशत्सहस्राधिकं चतुर्लक्षंपुरश्चरणमितिमन्त्राधनदीपिकायाम् नित्योत्सवनिबन्धे तु अष्टाविंशतिसहस्रसंख्याकं पुरश्चरणजपं प्रकृते कलियुगात्तच्चतुर्गुणितमिति । मूलमन्त्रं न्यासध्यानपूर्वकं पूर्वमुक्तम् ।

ततः-ॐ नमस्तेगणपतये । त्वमेव प्रत्यक्षं तत्वमसि । इत्यादिदशखण्डानि वरदमूर्त्तये नमः, इत्यन्तोजपः । यो मोदकसहस्रेण यजति इत्यनेन मोदकहोमे दशहस्रिको जपः । कलौचतुर्गुणं प्रोक्तमितिवचनात्—

चत्वारिंशत्साहस्रिको जपः । अस्य गणपत्यथर्वशीर्षस्योपनिषद्रूपत्वात्ऋष्यादिकं नास्त्येव ।

ब्राह्मणभागत्वे मन्त्रत्वभावात् । तन्मनस्कजपेत्सदा

इति वचनादेवमनस्कत्वमावश्यकम् ।

अद्य यद्यत्कृतं कर्म मया च स्वाम्यनुज्ञया ।

सर्वगणपदे वेश संगृहाण नमोस्तुते ॥

इस प्रकार जप निवेदित कर, पंचोपचार से पूजा कर, जप, आरती व पुष्पांजलि समर्पित करे, इस प्रकार प्रत्येक दिन करे, अगर पहले मंडप न बनाया हो तो होमसंख्या के अनुसार मंडप बनाकर होम करे। मध्यभाग में चतुरस्त्र वेदी या एक कुंड बनाकर होम करे, अगर मध्य भाग में कुंड बनवाये तो ईशानकोण में दो वेदी प्रधान 'नवग्रह' की बनेगी, सर्वकामप्रद होनेसे पद्माकार या चतुरस्त्र कुण्ड बन सकते है।

कर्ता—गोत्रः शर्मा मत्पूर्वप्रतिज्ञातकर्मसमृध्यै श्रीमन्महागणाधिराजप्रीतये हवनाख्ययं कर्म करिष्ये । ब्राह्मणद्वारा वा कारयिष्ये । तदङ्गत्वेन स्वस्तिवाचन० श्राद्धानि करिष्ये ।

**इत्याद्यङ्गसङ्कल्पः पूर्वमकृतश्चेत् कौस्तुभे दर्शनात् । तत्रादौ निर्विघ्नकर्मपरिसमाप्त्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजां करिष्ये ।**

इस प्रकार संकल्प करके गणेशाम्बिका पूजनकर आचार्यादि का वरण एवं प्रार्थना करके जलयात्रा के पश्चात्, मंडप निर्माण किया गया हो तो, यज्ञीय मण्डपविधि से मण्डप प्रवेश करे, अन्यथा केवल 'सर्षपविकिर्ण' से पंचगव्य से भूमि प्रोक्षणांत कर्म करके सर्वतोभद्र मण्डल बनाकर, अग्निप्रतिष्ठापन ग्रहोंकाहोम प्रधानवेदी पर अग्न्युतारण पूर्वक स्वर्ण प्रतिमा प्रतिष्ठित कर चरु, श्रपण आज्य-भागांत आहुति देकर ग्रहहोम के पश्चात् ऋत्विक् या स्वयं न्यास करके आहुति देवे ।

**गणानां त्वातूनस्त्वमिंद्रानुत इति मन्त्राणां प्रजापतिवाम-देवनृमिधाऋषयः यजुर्गायत्रीपंक्त्याबृहतीसतोबृहत्यश्छन्दांसि गणपतिर्देवता न्यासादौ विनियोगः ।**

**ॐ गणानान्त्वागणपतिर्ठ० हवामहे अंगुष्ठाभ्यां०**
**प्रियाणान्त्वाप्रियपतिर्ठ हवामहे तर्जनीभ्यां०**
**निधिनान्त्वानिधिपतिर्ठ हवामहे मध्यमाभ्यां०**
**व्वसोमम अनामिकाभ्यां० ।**
**आहमजानिगर्भधम् कनिष्ठिकाभ्यां०**
**आत्वमजासि गर्भधम् करतलकरपृ० एवं हृदयादि ।**
**आतूनइन्द्रवृत्रहन् आमोदाय नमः शिरसि**
**अस्माकमर्द्धभागहिप्रमादाय० शिखायाम्**
**महान्महीभिरूतिभिः संमोदाय० भुजद्वये**
**त्वमिन्द्रप्प्रतूर्त्तिषुगणाधिपाय० भ्रूमध्ये**

अभिवि॰ाऽअसिस्पृधः गणक्रीडाय॰ चक्षुषोः
अशस्तिहाजनिताविश्वरसिगणनायकाय॰ नासिकायाम्
त्वन्तूर्यतरुर्यतरुष्यतःगणक्रीडाय॰-हृदिचित्तस्थानम्
अनुतेशुष्मन्तुरयन्तमीयतुः सर्वसिद्धये॰ वदने
क्षोणीशिशुन्नमातरासुमुखाय॰ जिह्वायाम्
विश्वास्तेस्पृधःश्नथयन्तमन्यवे दुर्मुखाय ग्रीवायाम्
वृत्रं यदिन्द्रतूर्वसि विघ्नेशाय॰ हृदि
आतूनइन्द्रवृत्रहन्न विघ्ननाशाय॰वक्षसि
अस्माकमर्द्धभागहिगणनाथाय॰ बाह्वोः
महान्महीभिरूतिभिः विघ्नकर्त्रे॰ उदरे
त्वमिन्द्रप्रतूर्त्तिषु विघ्नहर्त्रेलिङ्गे
अभिविश्वाऽअसिस्पृधगजवक्त्राय॰ कट्योः
अशस्तिहाजनिताविश्वतूरसिएकदन्ताय॰ नितम्बे
त्वन्तूर्यतरुष्यतःलम्बोदराय॰गुह्ये
अनुतेशुष्मन्तुरयन्तमीयतुः व्यालयज्ञोपवीतिने॰ पादयोः
क्षोणाशिश्रुन्नमातरा॰ गणाधिपाय॰ जान्वोः
विश्वास्तेस्पृधःश्नथयन्तवेहारिद्राय॰ जङ्घयोः
वृत्रंयदिन्द्रतूर्वसिगणेश्वराय॰ सर्वाङ्गे

अत्र गणनांत्वाग॰ अयं मन्त्रः सर्वत्रन्यासादौ योज्यः। यथा गणानां. आतूनइंद्रइत्यादि ।

अथ ध्यानम्—

सिन्दूराभं त्रिनेत्रं पृथुतरजठरं हस्तपद्मैर्दधानं दन्तं ।
पाशांकुशेटाभयकरविलसद्बीजपूराभिरामम् ।
बालेन्दुद्योतमलिं करिपतिवदनं दानपूरार्द्रगंडं ।
भोगीन्द्रावद्धभूषं भजतगणपतिं रक्तवस्त्राङ्गरागम् ।

इतिमूलमन्त्रजापिनस्तु पूर्वोक्तन्यासादिकं कृत्वोक्तसंख्यार्कं जपं कृत्वा तद्दशांशं जुहुयुः । एवं गणपत्यथर्वशीर्षस्यापि रक्ताक्षतामोदकसमिच्चरव इति सूक्तहोमद्रव्याणि । अथवा शाकलैस्तिलैर्वा सर्पिषान्वितैः केवलैःमोदकैर्वा अतिप्रीतिकरत्वाद्गणेशस्य । मूलमन्त्रद्रव्याणि तु पूर्वमुक्तम् तत्राष्टद्रव्याणां प्रमाणम् । यथा-मोदका अखण्डिताग्रासमिताः पृथुकलासक्तवो मुष्टिपरिमिताः । इक्षुप्रमाणं पर्वमात्रं तस्यैव ॥

नारिकेरमष्टधाखंडितम् । तिलाश्चुलुकप्रमाणाः शतसंख्याका वा । कदलीफलमल्पं यद्यखण्डितम् । पृथुचेद्यथारुचिखण्डितम् अमीषां द्रव्याणां प्रत्येकं होमसंख्यापिण्डाष्टमभागमिता वा श्लोकपाठक्रमेण । गणपत्यथर्वशीर्षहोमद्रव्याणिकामनापरत्वेन तत्रैव यो दूर्वांकुरैर्यजतीत्यादि ।

अथ होम क्रमः

ॐ गणानांत्वागण० धम् स्वाहा ॥ १ ॥

आतूनइन्द्रवृत्र० स्वाहा ॥ २ ॥

त्वमिन्द्रप्रतू० स्वाहा ॥ ३ ॥

अनुतेशूष्मन्तू० स्वाहा ॥ ४ ॥

अट्ठाइसअक्षर का मूलमंत्र पहले ही कह दिया गया है। अथर्वशीर्ष के प्रतिखण्ड का होम होता है। उसके दशखण्ड ये हैं—

ॐ नमस्ते गणपतये इत्यादि त्वं साक्षादात्मासि नित्य १ स्वाहा।

ऋतं वच्मि ' सत्यं वच्मि २ स्वाहा।

अव त्वं मां० पाहि समन्तात् ३ स्वाहा।

त्वं वाङ्मय० विज्ञानमयोसि ४ स्वाहा ॥

सर्वं खल्विदं त्वं चत्वारि वाक्पदानि ५ स्वाहा।

त्वं गुणत्रया० वः स्वरोम् ६।

गणादीं पूर्वं० गं गणपतये ७ स्वाहा।

एकदन्ताय० दद्यात् ८ स्वाहा।

एकदन्तं चतुर्हस्तं० योगिनां वरः ९ स्वाहा।

नमो व्रातपतये० वरमूर्त्तये नमः १० स्वाहा।

एवं सहस्रावृत्तिः। अथवा समाग्राथर्वशीर्षस्यैक एव मन्त्रो वरदमूर्त्तये नम इत्यन्तः। होमसमये सूक्तजपोप्यावश्यको द्वारपालाभावेऽपि तत्रर्त्विजो निवेशनीयाः।

प्रधानहोमान्ते सिद्धिबुद्धिभ्यां स्वाहा—इति लक्षार्द्धं होमः।
एवं लक्षलाभाभ्यां स्वाहा इति होमः।

मूषकाय स्वाहा-इति सहस्रहोमः। ततः पीठावरणमण्डल-देवतानां होमः। ततोऽग्निपूजाद्युत्त[1]रतन्त्रं[2]पूर्णाहुतिसहितम्।

सङ्कल्पः—

अस्य सांगगणेशयागकर्मणः समृध्यर्थमितिदक्षिणादानादौ।

अभिषेकान्तेऽवमृथस्नाने कृते देवं संपूज्य स्तुवीत—

जयदेव गजाननप्रभोजयसर्वासुरगर्वभेदक।
जयसङ्कटपाशमोचनप्रणवाकार विनायकत्वमाम्।
जय सङ्कटसर्पदर्पभिद्गरुड श्रीगणनायकावमाम् ॥ १ ॥
तवदेव जयन्ति मूर्त्तयः कलितागण्यसुपुण्यकीर्त्तयः।
मनसा भजतांहतार्तयः कृतशीघ्राधिककामपूर्त्तयः ॥ २ ॥
तवरम्यकथास्वनादरः सनरोजन्मलयैकमन्दिरम्।
नपरत्र न चेह सौख्यभाङ्निजदुष्कर्मवशाद्विमोहभाक् ॥३॥
गजवक्त्रतवांघ्रिपङ्कजेध्वजवज्राङ्कयुते सदा भजे।
तवमूर्तिमहं परिष्वजेस्त्वयिहृन्मेऽस्तु सुमूषकध्वजे ॥ ४ ॥
त्वदृतेहिगजाननप्रभोनहि भक्तौघसुखौघदायकः।
सुदृढाममभक्तिरस्तुते चरणाब्जेबिबुधेशविश्वपाः ॥ ५ ॥

---

१—सर्वप्रायश्चित से अग्नि पूजन के पूर्वतकके कर्म को पूर्वतन्त्र एवं अग्निपूजन से पूर्णाहुति तक के कर्म को उत्तरतन्त्र कहते है।

२—पूर्णाहुति पर्यन्त आदिकर्मो के लिए इस पुस्तक की पृष्ठ संख्या २४ से ३७ तक के पृष्ठों को देखें।

फलपूरगदेक्षुकार्मुकैयुतरुक्चक्रधराब्जपाशधृक् ।
अववारिजशालिसंजरीरदधृरत्नघटाढयशुण्डमाम् ॥ ६ ॥
करयुग्मसहेमशृङ्खलद्विजराजाढयकतुन्दिलोदर ।
शशिसुप्रभविद्यायायुतस्तत्भारानमितेडयरक्षमाम् ॥ ७ ॥
शशिभास्करवीतिहोत्रदृक्शुभसिन्दूररुचेद्विनायक ।
द्विपवक्त्रमहाहि भूषणत्रिदिवेशसुरवन्द्य पाहि माम् ॥८॥
सृणिपाशवरद्विजैर्युतद्विजराजार्धकमूषकध्वज ।
शुभलोहित चदनोक्षितश्रुतिवेद्याभयदायकावमाम् ॥ ९ ॥
स्मरणात्तवशंभुविध्यजेन्द्विनशक्रादि सुराः कृतार्थताम् ।
गणपाऽऽपुरद्याधभंजनद्विपराजास्यसदैवपाहिमाम् ॥ १० ॥
शरणंभगवान्विनायकः शरणंमे सततंचसिद्धि का ।
शरणं पुन रेवतावुभा शरणंनान्यदुपैमिदैवतम् ॥ ११ ॥
गलद्दानगंडंमहाहस्ति तुण्डं
सुपर्वप्रचण्डंधृतार्द्धेन्दु खण्डम् ।
करास्फोटिताण्डं महाहस्तदण्डं
हताढयारिमुण्डंभजेवक्रतुण्डम् ॥ १२ ॥
गणनाथनिबन्धसंस्तवाकृपयाङ्गाकुरुमत्कृताविभा ।
इदमेव सदाप्रदीयताङ्करुणामय्यतुलाऽस्तुसर्वदा ॥ १३ ॥

स्तुति के पश्चात् गणेशजी के गजाननआदि नामों से इक्कीस ब्राह्मणों की पूजा कर, उन्हें अलग-अलग वायन प्रदान करे ।

ततो होमाङ्गभूयसीसंङ्कल्पान्ते कृतंकर्मेश्वरार्पणं कृत्वा देशकालादिसंकीर्त्य—

महागणपति मन्त्रस्याथर्वशीर्षस्य च होमदशांशेन तर्पणं करिष्ये–इति संकल्पः।

विस्तीर्णपात्रेशुद्धजलं प्रक्षिप्य तत्र चतुरस्र मण्डलं परिगृह्य,
ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करैस्पृष्टानि ते रवे।
ते वसत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर॥

इति सूर्यमभ्यर्च्य—

आवाहयामी त्वां देवि तर्पणार्थेह सुन्दरी।
एहि गङ्गे नमस्तुभ्यं सर्वतीर्थसमन्विता॥
इति गङ्गां प्रार्थ्य।
ह्रॉं ह्रीं ह्रूँ ह्रैं ह्रा ह्रः–इत्युचार्य।
'क्रों' इत्यंकुशमुद्रया तीर्थान्यावाह्य वं— इति

सप्तवारमभिमन्त्र्य तत्र चतुरस्राष्टदलषट्कोणत्रिकोणात्मकं यन्त्रंविचिंत्य स्वदेहे अस्य— श्रीमहागणपतिमहामन्त्रस्य गणकायर्षतये नमः–शिरसि।

निचृद्गायत्र्यैछन्दसे मुखे। महागणपतये देवतायै हृदि। गं बीजाय गुह्ये। स्वाहा शक्तये० पादयो। ग्लौं कीलकाय० नाभौ। ममाभीष्टसिध्यै तर्पण विनियोगः--इति कृताञ्जलिर्वदेत्। ॐ गां अंगु०। हृद० श्रीं गीं तर्ज० शिर० ह्रींगूं मध्य० शिखा०

क्लीं गै अना० कव० ग्लौं गों कमि० ने० गंगः करत० अस्त्रा० । एवं हृदयादि ॥

ततो हृदब्जे शोणाङ्गं वामोत्सङ्गविभूषया ।
सिद्धलक्ष्म्यासमाश्लिष्टं पार्श्वमर्द्धेन्दुशेखरम् ॥ १ ॥
वामाधः करतो दक्षाधः करान्तेषु पुष्करे ।
परिष्कृतं मातुलिङ्गं गदापुण्ड्रेक्षुकार्मुकैः । २ ॥
भूवनेन चक्रशंखाभ्यां पाशोत्पलयुगेन च ।
शालिमुञ्जरिकास्वीयदन्तानालमणीघटैः ॥ ३ ॥
स्रवन्मन्दं च सानन्दं च श्री श्रीपन्यादिसंवृतनम् ।
अशेषविघ्नविध्वंसनिघ्नं विघ्नेश्वरं स्मरेत् ॥ ४ ॥

एवं मूर्तिं ध्यात्वा यन्त्रे आधारशक्त्यादिपरतत्वान्तपीठ-देवताभ्यो नमः—इति ।

पीठं संपूज्य तत्र साङ्ग सावरणं महागणपतिमावाहयामीत्यावाह्य–श्रीं ह्रीं क्लीं महागणपतये लंपृथिव्यात्मकं गन्धमित्यादि-मानसोपचारैरभ्यर्च्य यथाशक्त्युपचारैः पूजयेत् । ततो २८ मूलमुच्चार्य महागणपतिं तर्पयामीतिहोमदशांशेन सन्तर्प्याभ्य-र्च्यात्मिन्युद्वासयेदिततर्पणविधिः ।

मत्प्रतिज्ञातमहागणपतिमूलमन्त्रस्य गणपत्यथर्वशीर्षस्य च तर्पणदशांशेन मार्जनं करिष्ये ।

आवाहनम्–

विमार्जनायेह सुन्दरि । हृदयादिन्यासांते ।

मुक्ताकाञ्चनीलकुंदघुसृणाच्छायं त्रिनेत्रान्वितं ॥
नागास्यं हरिवाहनं शशिधरं हेरम्बमर्कप्रभम् ।

ध्यानम्—

दृप्तंदानमभीतिमोदकरदान कण्ठं शिरोऽक्षात्मिकां ॥
मालामुद्गरमंकुशं त्रिशिखकंदोभिर्दधानं भजे ॥

मूलमंत्र के पाठके पश्चात् 'अभिषिचांमि' इस प्रकार कहकर तर्पण संख्या से दशांश संख्या का मार्जन करे, अन्य सब कृत्य तर्पण की तरह करे ।

ततः मत्प्रतिज्ञातगणेशयजनकर्मणि मार्जनदशांशेन ब्राह्मणान् यथा संपन्नेनान्नेनाहं भोजयिष्ये—इति सङ्कल्प्य सद्यस्तान्भोजयेत् ।

ततः गणेशयाग कर्मणः साङ्गतासिद्धये सहस्राधिकब्राह्मण भोजनम् । महायागावसाने च येन तर्पयतिद्विजान् । निरर्थकं तस्य कर्म प्रयासफलमात्रकमिति भविष्ये दोषश्रवणादावश्यकम् । मार्जनदशांशेन यद्ब्राह्मणभोजनं तत्पुरश्चरणाङ्गमेवेतिविवेकः । ततः साङ्गकर्म गणेशार्पणं कृत्वाऽच्छिद्रतां वाचयित्वा स्वस्तिवाचनं कृत्वा सुहृन्मित्रादि युतः सोत्साहो भुञ्जीत ।

इति गणेशयाग पद्धतिः

# शिवशक्तियाग पद्धतिः

सपत्नाकयजमान मंगलस्नान कर तिलकादिसे अलंकृत हो शिखा का बंधनकर यज्ञस्थल अर्थात् मंडप या मंदिर में सपत्नीक आकर दोनों अपने-अपने आसन पर बैठे, रक्षादीप जलाकर पवित्र धारण कर प्राणायाम करके 'पर्षदावेशेन सर्वं प्रायश्चित' कर यज्ञसामग्री एवं अपने शरीर पर पवित्रता हेतु जल छिड़के, उस समय आचार्य यजमानको तिलक करे तथा अन्य ब्राह्मण शांन्ति पाठ करें।

ततः देशकालौ संकीर्त्य—सर्वेषां स्त्रीपुंसानां त्रिविधतापोपशान्ति-सकलदुःखशेषनिवृत्तिपुत्रपौत्राद्यभिवृद्धिपूर्वकःजन्मजन्मातरसकलबाधानि-वृत्तये लक्षसंख्याकं सनवग्रहमखं (क) हवनात्मकं शिवशक्तियज्ञं १)

---

(क) आयुः क्षयी यवाधिक्ये यवसाम्ये धनक्षयः।
धनधान्यसमृद्धिः स्यात्तिलाधिक्ये न संशयः॥
चतुर्भागं तिलानां च द्विभागमाज्यमेव च।
त्रिभागाश्चयवाः कार्या भागमेकं तु तण्डुलाः॥

(१) रुद्रादिदेवताः सर्वास्तथा वैकुण्ठवासिनः।
परिवारगणैर्युक्ता भद्रं कुर्वन्तु नित्यशः॥
शिवयागे विष्णुयागे वास्तुकर्मणि सर्वदा।
इष्टापूर्ते महादाने तान्देवान् संस्मरेच्चिरम्॥

करिष्ये। तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धमाचार्यादिवरणानि च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनं करिष्ये।

ततः मण्डपप्रवेशः, वास्तुपूजनम्, मण्डपूजनम्, ग्रहपूजनम्, असंख्यात पूजनम्, मत्कृत विष्णुयागपद्धत्यनुसारेण कुर्यात्।

ततः प्रधानवेदिसमीपे उपविश्य लिङ्गतोभद्रमण्डले ब्रह्मादिदेवान् संस्थाप्य कलशस्थापनविधिना कलशं संस्थाप्य शिवशक्तियन्त्रमालिखेत्।

---

ततस्तु कर्मारम्भः स्यान्निर्विघ्नेन विशेषतः।
ये चैव न स्मरन्त्येतान् तेषां नैव फलं भवेत्॥

(२) साम्राज्यलक्ष्मीपीठिकायाम्—पलेन वा तदर्धेन तदर्धार्धेन वा पुनः।
सुवर्णेन वरारोहे ग्रहाणां प्रतिमाः शुभाः॥

विशेष—मंडपपूजनसे असंख्यात पूजन तक के सभी विषयों अर्थात् वैदिक कर्मों को विष्णुयाग प्रयोग से ही करें।

## अथ पीठपूजा

पीठस्याधोभागे—

ॐ आधारशक्त्यै नमः १ कूर्माय नमः २ अनन्ताय नमः ४ वराहाय नमः ४ पृथिव्यै नमः ५ विचित्रदिव्यमण्डनाय नमः ६ मण्डपपरितः—ॐ कल्पवृक्षेभ्यो नमः १ सुवर्णवेदिकायै नमः रत्नसिंहासनाय नमः २ सिंहासनपादेषु—आग्नेयकोणे—ॐ धर्माय नमः १ नैऋत्यकोणे-ज्ञानाय नमः २ वायव्यकौणे—वैराग्याय नमः ३ ईशानकोणे ऐश्वर्याय नमः ४ गात्रेषु पूर्वदिशि—ॐ अधर्माय नमः १ दक्षिणे अज्ञानाय नमः २ पश्चिमे अवैराग्याय नमः ३ उत्तरे—अणैश्वर्याय नमः ४ सिंहासनोपरि—तल्पाकारायानन्ताय नमः १ पद्माय नमः २ आनंदकन्दाय नमः ३ संविन्नालाय नमः ४ प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः विकारमयकेसरेभ्यो नमः ६ पञ्चाशद्वर्णाद्यकर्णिकायै नमः ७ पद्मदलकेसरकर्णिकासु ॐ सं सत्वाय नमः ८ काणकासु—ॐ मं तमसे नमः १ ॐ द्वादशकलात्मने अर्कमण्डलाय नमः २ ॐ उं षोडशकलात्मने सोममण्डलाय नमः ३ ॐ मं दशकलात्मने अग्निमण्डलाय नमः ४ ॐ अं ब्रह्मणे नमः ५ ॐ वि विष्णवे नमः ६ ॐ मं महेश्वराय नमः ७ ॐ जां आत्मने नमः ८ ॐ अं अन्तरात्मने नमः ९ ॐ मं परमात्मने नमः १० ॐ ज्ञानात्मने नमः ११ सर्वपद्मार्चनम् । अथ पूर्वादियन्त्रेषु- ॐ वामाय नमः १ ज्येष्ठायै नमः २ रौद्रयै नमः ३ काल्यै नमः ४ कलविकरण्यै नमः ५ बलविकरण्यै नमः ६ बलप्रमथिये नमः ७ सर्वभूतदमन्यै नमः ८ ॐ मनोन्मन्यै नमः ९ ॐ इति कर्णिकायाम् । ततः- ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठात्मने नमः । इति कर्णिकायां पुष्पाञ्जलिना पीठं संपूज्य—'सत्यज्ञानन्तानन्दरूपं परंधामैव सकलं पीठम्' इति चिन्तयेत् ।

इति पीठपूजा ।

ततः विधानप्रकाशोक्तप्रकारेण शिव[1]पूजनं कुर्यात् ।

आवरणम्—

( १ ) विन्दौ—शिवशक्तिभ्यां नमः । ( २ ) त्रिकोणे—पार्वत्यै नमः १ अप्रर्णायै नमः २ दुर्गायै नमः ३ ( ३ षट्कोणे--मृडायै नमः १ अम्बिकायै नमः २ चण्डिकायै नमः ३ गंगायै नमः ४ जयायै नमः ५ विजयायै नमः ६ ( ४ ) अष्टदले - उमायै नमः १ सत्यै नमः २ ललितायै नमः ३ अश्वदायै नमः ४ ज्येष्ठायै नमः ५ जगन्मङ्गलायै नमः ६ आत्मायै नमः ७ परायै नमः ८ ( ५ ) दशदले—श्रुत्यै नमः १ स्मृत्ये नमः २ कल्याण्यै नमः ३ मंगलायै नमः ४ प्रीत्यै नमः ५ लक्ष्म्यै नमः ६ अपराजितायै नमः ७ ब्राह्म्यै नमः ८ वागीश्वयै नमः ९ देव्यै नमः १० द्वादशदले--बुध्यै नमः १ विद्यायै नमः २ सरस्वत्यै नमः ३ दानायै नमः ४ भद्रायै नमः ५ सुभगायै नमः ६ सौम्ये नमः ७ वरदायै नमः ८ भयवाशिन्यै नमः ९ अजितायै नमः १० जयायै नमः ११ शान्त्यै नमः १२ ( ६ चतुर्दशदले—सावित्र्यै नमः १ परमेश्वयै नमः २ कामायै नमः ३ रूपायै नमः ४ ध्रुवायै नमः ५ वृत्यै नमः ६ सुरूपायै नमः ७ विश्वरूपायै नमः ८ प्रकृत्यै नमः ९ व्याधिन्यै नमः १० सूक्ष्मायै नमः ११ सिनीवाल्यै नमः १२ कूलायै नमः १३ गुह्यायै नमः १४ ( ७ ) षोडशदले—कात्यायन्यै नमः १ अन्नपूर्णायै नमः २ ईश्वर्यै नमः ३ रक्षायै नमः ४ विन्ध्यवासिन्यै नमः ६ भगवत्यै नमः ७ शच्यै नमः ८ कुमायै नमः ९ ब्रह्मचारिन्यै नमः १० माहेश्वयै नमः ११ गणाध्यक्षायै नमः १२ भवान्यै नमः १३ शिवायै नमः १४ शर्वाण्यै नमः १५ नियतायै नमः १६ ( ८ ) अष्टादशदले शान्तायै नमः १ ईशान्यै नमः २ त्रिदशेश्वयै नमः · महाभुजायै नमः ४ महादेव्यै नमः ५ महानादायै नमः ६ विशालाक्ष्यै नमः ७ असुरभक्ष्यै नमः ८ महादेवायै नमः ९ करालयै नमः १० ज्वालिन्यै नमः ११ काल्यै नमः १२

---

१—शिवपूजन के लिए विधान प्रकाश देखें या स्वयं करावें ।

भद्रकाल्यै नमः १३ कपालिन्यै नमः १४ चामुण्डायै नमः १५ भैरव्यै नमः १६ भीमायै नमः १७ शुष्क्यै नमः १८ ( ९ )।

विंशतिपीठदले—असिताङ्गभैरवाय नमः १ रुरुभैरवाय नमः २ चण्डभैरवाय नमः ३ क्रोधभैरवाय नमः ४ उन्मत्तभैरवाय नमः ५ कालभैरवाय नमः ६ भीषणभैरवाय नमः ७ संहारभैवाय नमः ८ अघोराय नमः ९ पशुपतये नमः १० शर्वाय नमः ११ विरूपाक्षाय नमः १२ विश्वरूपिणे नमः १३ त्र्यम्बकाय नमः १४ कपर्दिने नमः १५ भैरवाय नमः १६ शुलपाणये नमः १७ ईशानाय नमः १८ महेश्वराय नमः १९ धनाध्यक्षाय नमः ( २० ) द्वाविंशतिदले अनन्ताय नमः १ सूक्ष्माय नमः २ शिवाय नमः ३ एकपदे नमः ४ एकभद्राय नमः ५ त्रिमूर्तये नमः ६ एकरुद्राय नमः ७ श्रीकण्ठाय नमः वामदेवाय नमः ९ ज्येष्ठाय नमः १० रुद्राय नमः ११ कालाय नमः १२ कलविकरणाय नमः १३ बलाय नमः १४ शर्वाय नमः १८ ईशानाय नमः १९ पशुपतये नमः २० रुद्राय नमः २१ जटाधराय नमः २२ ( ११ ) चतुर्विंशतिदले भीमाय नमः १ महते नमः २ शेषाय नमः ३ अनन्ताय नमः ४ वासुकये नमः ५ तक्षकाय नमः ६ कुलीराय नमः ७ कर्कोटकाय नमः ८ शंखपालाय नमः ९ कंबलाय नमः १० चैतन्याय नमः ११ पृथवैनमः १२ हैहयाय नमः १३ अर्जुनाय नमः १४ शाकुन्तलाय नमः १५ भरताय नमः १६ नलाय नमः १७ रामाय नमः १८ हिमवते नमः १९ निषधाय नमः २० विन्ध्याय नमः २१ माल्यवते नमः २२ पारिजाताय नमः २३ मलयाय नमः २४ हेमकूटाय नमः २५ ( १२ ) ततश्चतुकोणं भूगृहं कृत्वा–दशदिक् पालानां स्थापनम्--इन्द्राय नमः १ अग्नये नमः २ यमाय नमः ३ नैर्ऋतये नमः ४ वरुणाय नमः ५ वायवे नमः ६ कुवेराय नमः ७ ईशानाय नमः ८ ब्रह्मणे नमः ९ अनन्ताय नमः १० एवम् वज्राय नमः १ शक्तये नमः २ दण्डाय नमः ३ खड्गाय नमः ४ पाशाय नमः ५ अंकुशाय नमः ६ गदायै नमः त्रिशूलाय नमः ८ ॥ इत्यावरणम् ॥

आवरण पूजा के उपरांत धूपादि मूर्तिके समक्ष प्रज्वलित कर दिखा दे।

## अथ न्यासः

पवित्रधारणम्—

ॐ ऊर्ध्वकेशि विरूपाक्षि मांसशोणितभोजने ।
तिष्ठ देवि शिखामध्ये चामुण्डे चापराजिते ॥

सद्योजातमित्यस्य सद्योजातऋषिः, त्रिष्टुप्छन्दः ब्रह्मादेवता, वामदेवायेत्यस्य वामदेवऋषिः, जगतीच्छन्दः, विष्णुर्देवता, अघोरेभ्य इत्यस्य अघोरऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, रुद्रो देवता, तत्पुरुषायेत्यस्य तत्पुरुषऋषिः, गायत्रीछन्दः, रुद्रोदेवता, ईशान इत्यस्य ईशानऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, रुद्रो देवता सर्वेषां भस्म परिग्रहणे विनियोगः ।

ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः ।
भवे भवे भवेनाति भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥१॥

ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मना नमः॥२॥

---

(१) बिल्वपत्र–बिल्वफल–बिल्वमूल–इक्षु–दधि–दुग्ध–मधु–शर्करा–पायस–गुड–गुग्गुल–सर्षप–स्वक्पत्र–जातीपत्र–चन्दन–रक्तचन्दन–पलाश पुष्पार्क-मधुक-पुष्प–धत्तूरपुष्प–कदम्बपुष्प–वकुलपुष्प–कमलपुष्प–शंखपुष्पी पुष्प–पनसफल-आम्र-फल–कदलीफल–प्रियाफल अलक्षवृक्षफल–जम्बू-पील बदरराज–आमफल–जाती-फल–लवंग–एल–करवीरफल–केसर–नागकेसर–यक्षकर्दम–सोमवल्ली–शिवलिङ्गी शतावरी–कमलिनी–द्राक्षावल्ली–नागवल्ली–गडूची–इत्यादीनि शिवहोमद्रव्याणि यथा संभवं जुहुयात् । सर्वकामः पायसेनाज्येन वा जुहुयात् ॥ इति रुद्रकल्पद्रुमे ॥

ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः । सर्वेभ्यः सर्व-सर्वेभ्यो नमस्तेऽअस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥३॥

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥४॥

ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपति-ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे ऽअस्तु सदा शिवोम् ॥५॥

दक्षिणहस्तेन आच्छादनम्—

अग्निरित्यादिभस्माभिमन्त्रण मन्त्राणां पिप्पलाद ऋषिः, गायत्रीछन्दः, कालाग्निरुद्रो देवता, भस्माभिमन्त्रणे विनियोगः ।

ॐ अग्निरितिभस्म, वायुरितिभस्म, जलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्वं हवा इदं भस्म मन इत्येतानि चक्षूंषि भस्मानि तस्माद् व्रतमेतत्पाशुपतं यद् भस्मनाङ्गानि संस्पृशेत्तस्माद् व्रतमेतत्पाशुपतं पशुपाशविमोक्षाम् । आपोज्योतिरित्यस्य प्रजापतिऋषिः, यजुश्छन्दः, ब्रह्माग्निवायुसूर्योदेवता भस्मनि अप आसेचने विनियोगः ।

इस मंत्र से जल सेचन करे—

ॐ आपोज्योतीरसोमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् ।

'ॐ नमः शिवाय' इति संमर्दनम् ।

ईशान इत्यस्य ईशान ऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, रुद्रोदेवता शिरसि भस्मोद्धूलने विनियोगः ।

ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां । ब्रह्माधिपति-र्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदा शिवोम्-शिरसि ।

तत्पुरुषायेत्यस्य तत्पुरुष ऋषिः, गायत्रीछन्दः, रुद्रो देवता मुखे भस्मोद्धूलने विनियोगः ।

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ मुखे ।

अघोरेभ्य इत्यस्य अघोरऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः रुद्रो देवता हृदये भस्मोद्धूलने विनियोगः ।

ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरतरेभ्यः ।

सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥ हृदये ॥

वामदेवायेत्यस्य वामदेवऋषिः, जगतीछन्दः, विष्णुर्देवता गुह्ये भस्मोद्धूलने विनियोगः ।

ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमो कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः ॥ गुह्ये ॥ उदकोपस्पर्शः ।

सद्योजातमित्यस्य सद्योजातऋषिः, त्रिष्टुप्छन्दः, ब्रह्मा-देवता पादयोर्भस्मोद्धूलने विनियोगः ।

ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः । भवे भव नातिभवे भजस्व त्वां भवोद्भवाय नमः ॥ पादयोः । प्रणवेन मस्तकादिपादान्तम् ।

मानस्तोक इत्यस्य कुत्सऋषिः जगतीछन्दः, एको रुद्रो देवता भस्मोद्धरणे विनियोगः ।

ॐ मानस्तोक तनये मा नऽ आयुषि मा नो गोषु मानोऽ अश्वेष रीषिः ॥ मानो वीरान् रुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्वा हवामहे ॥

त्र्यम्बकमित्यस्य वसिष्ठऋषिः अनुष्टुप छन्दः त्र्यम्बको रुद्रोदेवता त्र्यायुषमित्यस्य नारायण ऋषिः उष्णिक्- छन्दः आशीर्देवता भस्मना त्रिपुण्ड्रधारणे विनियोगः ।

यास्य प्रथमा रेखा सा गार्हपत्यश्चाकारो रजो भुर्लोकश्चात्मा क्रियाशक्तिऋग्वेदः प्रातः सवनं महादेवो देवता, यास्य द्वितीया-रेखा सा दक्षिणाग्निरुकारः सत्वमन्तरिक्षमन्तरात्माचेच्छा-शक्तिर्यजुर्वेदो माध्यन्दिनं सवन महेश्वरोदेवता, यास्य तृतीया-रेखा साऽऽहवनीयो मकारस्तमोद्यौः परमात्मा ज्ञानशक्तिः सामवेदस्तृतीयं सवनं शिवो देवता—

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् ।

यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽ अस्तु त्र्यायुषम् । त्रिपुण्ड्रधारणम् !
'ॐ नमः शिवाय' इति रुद्राक्षमालाधारणम् ।

( १ ) त्रातारमित्यस्य गर्गऋषिः, त्रिष्टुप्छन्दः, इन्द्रो देवता प्राच्यां दिशि संपुष्टीकरणे नमस्करे च विनियोगः ।

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र हवे हवे सुहव सूरमिन्द्रम् ।। ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रः ठं० स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः ।। पूर्वे–इन्द्राय नमः ।

( २ ) 'त्वन्नो अग्ने' इत्यस्य हिरण्यस्तूप आङ्गिरस ऋषिः, जगतीछन्दोग्निदेवता आग्नेय्यां दिशि सम्पुटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः । अग्निकोणे—ॐ त्वन्नोऽ अग्ने० अग्नये नमः ।

( ३ ) सुगन्नुपन्थामित्यस्य प्रजापतिऋषिः, त्रिष्टुप्छन्दः, वैवस्वतो देवता दक्षिणस्याँ दिशि सम्पुटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः । ॐ सुगन्नुपन्थां प्रति० दक्षिणदिशि यमाय नमः ।

( ४ ) असुन्वस्तमित्यस्य प्रजापतिऋषिः, त्रिष्टुप्छन्दः नैर्ऋत्यां दिशि सपुटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः । ॐ असुन्वन्तमयजमान-मिच्छस्ते नस्येत्यामन्विहितस्करस्य ।। अन्यमस्मदिच्छसातऽ इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ।। निर्ऋतिकोर्ण-निऋतये नमः ।

( ५ ) तत्त्वायामीत्यस्य शुनःशेपऋषिः, त्रिष्टुप्छन्दः वरुणो देवता प्रतीच्यां दिशि सम्पुटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः । ॐ तत्त्वा यामि० पश्चिमदिशि—वरुणाय नमः ।

( ६ ) आ नो नियुद्भिरित्यस्य वसिष्ठऋषिः, त्रिष्टुप्छन्दः, वायु-देवता वायव्यां दिशि संपुटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः । ॐ आ नो नियु० वायुकाणे—वायवे नमः ।

( ७ ) वय ठं० सोमेत्यस्य बन्धुऋषिः, गायत्रीछन्दः सोमो देवता उदीच्यां दिशि संपुटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः । ॐ वयठं० सोम० उत्तरे—सोमाय नमः ।

( ८ ) तमीशानमित्यस्य गोतमऋषिः, जगतीछन्दः, ईशानो देवता ईशान्यां दिशि सम्पुटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः। ॐ तमीशानं जगतस्त० ईशानदिशि–ईशानाय नमः।

( ९ ) अस्मे रुद्रा इत्यस्य प्रगाथऋषिः, त्रिष्टुप्छन्दः, ऊर्ध्वायां दिशि संपुटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः। ॐ अस्मे रुद्रा० ऊर्ध्वायां दिशि ब्रह्मणे नमः।

(१०) स्योनो पृथिवीत्यस्य मेधातिथिऋषिः, गायत्रीछन्दः अनन्तो देवता अधोदिशि संपुटीकरणे नमस्कारे च विनियोगः। ॐ स्योना पृ० अधोदिशि––अनन्ताय नमः।

## अथ शिवसंकल्पन्यासः

यज्जाग्रत इति षण्णां ऋचां शिवसंकल्पऋषिः, त्रिष्टुप्छन्दः मनोदेवता श्रीशिवप्रीतये न्यासे होमे च विनियोगः।

(क) ( १ ) ॐ यज्जाग्रतो दूरमुदैति–शिरसि।
( २ ) दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति—ललाटे।
( ३ ) दूरं गमञ्जोतिषां ज्योतिरेकम्— नेत्रयोः।
( ४ ) तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु– श्रोत्रयोः।

(ख) ( ५ ) येन कर्माण्यपसो मनीषिणो–नासापुटयोः।
( ६ ) यज्ञे कृण्वन्ति विदथे धीराः–मुखे।
( ७ ) यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानाम्–ओष्ठयोः।
( ८ ) तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु—कण्ठे

(ग) ( ९ ) यत्प्रज्ञानमुतचेतो धृतिश्च —ग्रीवायाम्।
(१०) यज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु – बाह्वोः।
(११) यस्मान्नऽ ऋते किञ्चन कर्म क्रियते–प्रकोष्ठयोः।
(१२) तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु—हस्तयोः।

(घ) (१३) येदेनं भूतं भुवनं भविष्यत्—हृदये।
(१४) परिगृहीतममृतेन सर्वम्—नाभौ।
(१५) येन यज्ञस्तायते सप्त होता—श्रोत्रयोः।
(१६) मन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु— लिङ्गे।

उदकोपस्पर्शः।

(ङ) (१७) यस्मिन्नृचः सामयजूꣳषि यस्मिन्—गुह्ये । उदकोपस्पर्शः ।

(१८) प्रतिष्ठितारथनाभाविवाराः—जङ्घयोः ।

(१९) यस्मिंश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानाम्—ऊर्वोः ।

(२०) तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु—जान्वोः ।

(च) (२१) सुषारथिरश्वा निवयन्मनुष्यान्ने—तृतीयनेत्रम् ।

(२२) नीयते भीशुभिर्वाजिनऽ इव—पादयोः ।

(२३) हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठम्—प्राणेषु ।

(२४) तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु-मस्तकादिपादान्तम् ।

मनोजूतिरित्यस्याङ्गिरसबृहस्पतिऋषिः यजुश्छन्दः विश्वेदेवा देवता हृदय न्यासे विनियोगः—मनो जूतिः । अबोऽध्यग्निरित्यस्य बुधगविष्ठिराऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः अग्निर्देवता शिरसि न्यासे विनियोगः । अबोध्यग्निः । मूर्धानमित्यस्य भरद्वाजऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः वैश्वानरोऽग्निर्देवता शिखायां न्यासे विनियोगः । मूर्द्धानम् । मर्माणि त इत्यस्य विवस्वान् ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः लिङ्गोक्तादेवता कवचन्यासे विनियोगः । मर्माणि त । विश्वतश्चक्षुरित्यस्य विश्वकर्माभौवनऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः विश्वकर्मदेवता नेत्रन्यासे विनियोगः । विश्वतश्चक्षुः मा नस्तोक इत्यस्य कुत्सऋषिः एको रुद्रो देवता अस्त्रन्यासे विनियोगः । मा नस्तोके ।

### अथ षडङ्गन्यासः

१—यज्जाग्रतः—अगुष्ठाभ्यां नमः। २—येन कर्माण्यपसो—तर्जनी० ३—यत्प्रज्ञानम्—मध्या० ४—येनेदम्—अनामिका० ५—यस्मिण्नृचः—कनिष्ठिका० ६—सुषारथिः—करतलकर०।

ध्यानम्—

ॐ मन्दारमालाङ्कुलितालकायै कपालमालाङ्कितशेखराय।
दिव्याम्बरायै च दिगम्बरा नमः शिवायै च नमः शिवाय॥

### अथ शक्तियाग प्रारम्भः

देवीभागवते अध्याय १३ स्क० तृतीये—

'श्रुत्वा विष्णुकृतं यागमम्बिकायाः समाहितः।
यज्ञं कर्तुं मनश्चक्रे अम्बिकाया रमापतिः॥
उत्तीर्य भुवनात्तस्मात्समाहूय महेश्वरम्।
ब्रह्माणं वरणं शक्रे कुबेरं पावकं यमम्॥
वसिष्ठं कश्यपं दक्षं वामदेवं बृहस्पतिम्।
संभारं कल्पयमास यज्ञार्थं चातिविस्तरम्॥
महाविभवसंयुक्तं सात्विकं च मनोहरम्।
मण्डपं विततं तत्र कारयामास शिल्पिभिः॥
ऋत्विजो वरयामास सप्तविंशतिसुव्रतान्।
चिति च कारयामास वेदीश्चैव सुविस्तरा॥

प्रजेपुर्ब्राह्मणा मन्त्रान् देव्या बीजसमन्वितान् ।
जुहुवुस्ते हविः कामं विधिवत्परिकल्पिते ॥
कृते तु वितते होमे वागुवाचाशरीरिणी ।
देवीभागवते तृतीयस्कन्धे अ० १४—जनमेजय उवाच—
श्रुतो वै हरिणाक्लृप्तो यज्ञो विस्तरतो द्विजः ।
महिमानं तथांम्बाया वद विस्तरतो मम ॥
सप्तमकन्धे— हिमालय उवाच— अ० ४०
देव देवि महेशानि ! करुणासागरेऽम्बिके ।
ब्रूहि पूजाविधिं सम्यग् यथावदधुना निजम् ॥
'आवाहयेत्ततः पीठे प्राणस्थापनविद्यया ।
आसनावाहने चार्घ्यं पाद्याद्याचमनं तथा ॥
स्नानं वासोद्वयं चैव भूषणानि च सर्वशः ।
गन्धपुष्पं यथायोग्यं दत्वा देव्यै स्वभक्तितः ।
यन्त्रस्थानामावृत्तीनां पूजनं सम्यगाचरेत् ।
प्रतिवारमशक्तानां शुक्रवारो नियम्यते ॥
मूलदेवीप्रभारूपाः स्मर्तव्या अङ्गदेवताः ।
मत्प्रभापटलव्याप्तं त्रैलोक्यं च विचिन्तयेत् ॥
पुनरावृत्तिसहितां मूलदेवीं च पूजयेत् ।
गन्धादिभिः सुगन्धैस्तु तथा पुष्पैः सुवासितैः ॥
नैवेद्यस्तर्पणैश्चैव ताम्बूलैदक्षिणादिभिः ।
तोषयेन्मां त्वत्कृतेन नाम्नां सहस्रकेण च ॥

कवचेन च सूक्तेनाहं रुद्रैमिरितिप्रभो ! ।
देव्यथर्वशिरो मन्त्रैर्हृल्लेखोपनिषद्भवैः ।
महाविद्यामहामन्त्रैस्तोषयेन्मां मुहुर्मुहुः ॥
क्षमापयेज्जगद्धात्रीं प्रेमार्द्रहृदयो नरः ।
पुलकाङ्कितसर्वाङ्गैर्बाष्परुद्धाक्षिनिःस्वनः ॥
नृत्यगीतादिघोषेण तोषयेन्मां मुहुर्मुहुः ।
वेदपारायणैश्चैव पुराणैः सकलैरपि ॥
प्रतिपाद्या यतोऽहं वै तस्मात्तैस्तोषयेच्च माम् ।
निजं सर्वस्वमपि मे सदेहं नित्यशोऽर्पयेत् ॥
नित्यहोमं ततः कुर्याद् ब्राह्मणांश्च सुवासिनी ।
बटुकान पामरानन्यान्देवी बुध्य तु भोजयेत् ॥
गुरुं संपूज्य भूषाद्यैः कृतकृत्यत्वभावहेत् ।
य एवं पूजयेद्देवी श्रीमद्भुवनसुन्दरी ॥
न तस्य दुर्लभं किञ्चित् कदाचित् क्वचिदस्ति हि ।
देहान्ते तु मणिद्वीपं मम यात्येव सर्वथा ॥
ज्ञयो देवीस्वरूपोऽसौ देवा नित्यं नमन्ति तम् ।
इति कथितं राजन् ! महादेव्याः प्रपूजनम् ॥

देवीभागवते स्कन्धे—१२

कुरु अम्बामखं राजन् ! स्वपित्रोद्धारणाय वै ।
अम्बायज्ञं चकाराऽऽशु वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥

'अम्बामखं सदा भक्त्या कुरु नित्यमतन्द्रितः ।
अनायासेन तेन त्वं मोच्यसे भवबन्धनात् ॥

विद्येश्वरसंहितायाम्—अ० १६

कर्कटे सोमवारे च नवम्यां मृगशीर्षके ।
अम्बां यजेत् भूमिकामः सर्वभोगफलप्रदाम् ॥

ॐ भगवत्यै च विद्महे माहेश्वर्यै च धीमहि ।
तन्नोऽन्नपूर्णा प्रचोदयात् ।

ध्यानम्—

तप्तस्वर्णनिभाशशांकमुकुटारत्नप्रभाभासुरा,
नानावस्त्रविराजिता त्रिनयनाभूमीरमाभ्यां युता ।
दर्वीहाटकभाजनं च दधतीं रम्योच्चपीनस्तनी,
नित्यं तं शिवमाकलय्य मुदिता ध्येयान्नपूर्णेश्वरी ॥

## अथ शक्तिन्यासः

( १ ) अम्बेऽ अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन ।
ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कां पीलवासिनीम् ॥
अपर्णायै: नमः—शिरसि ।

( २ ) ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् ॥ इष्णन्निषाणामुम्मऽ इषाण सर्वलोकं मऽ इषाण ॥

गौर्यै नमः—नेत्रयोः ।

( ३ ) ॐ शिरो मे श्रीर्यशो मुखं त्विषिः केशाश्चश्मश्रुणि। राजा मे प्राणोऽअमृतꣳ सम्राट् चक्षुर्विराट् श्रोत्रम् ॥

भगवत्यै नमः—श्रोत्रयोः ।

( ४ ) ॐ तं पत्नीभीरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्भ्रातृभि रुतवा-हिरण्यैः ॥ नाकं गृभ्णानाः सुकृतस्य लोके तृतीये पृष्ठेऽ अधिरोचने दिवः ।

शक्त्यै नमः नासापुटयोः ॥

( ५ ) ॐ तेऽआचरन्ती समनेव योषा मातेव पुत्रं बिभृता-मुपस्थे ॥ अपशत्रून्विध्यताꣳसंविदानेऽआर्त्नीऽ इमे विष्फुरन्तीऽ-अमित्रान् ॥ कान्तायै नमः—मुखे ।

( ६ ) ॐ समख्ये देव्याधिया सन्दक्षिणयोरुचक्षसा ॥ मामऽ आयुः प्रमोषीर्मोऽअहन्तव वीरं विदेय तव देवि सन्दृशि।

शिवायै नमः—कण्ठे ।

( ७ ) ॐ श्रीणामुदारो धरुणोरयीणां मनीषाणां प्रार्पणः सोमगोपाः ॥ वसुः सूनुः सहसोऽअप्सुराजा विभात्यग्रऽ उषसा-मिधानः ॥

बालग्रहविनाशिन्यै नमः–बाह्वोः ।

( ८ ) ॐ देवीरापोऽ अपान्नपाद्योवऽ ऊर्मिर्हविष्यऽ इन्द्रियावान्मदिन्तमः ॥ तन्देवेभ्यो देवत्रा दत्तशुक्रपेभ्यो येषां भागस्थ स्वाहा ॥

त्रिनेत्रायै नमः–हस्तयोः ।

( ९ ) ॐ अपो देवीरुपसृजमधुमतीरयक्ष्याय प्रजाभ्यः ॥ तासामास्थानादुज्जिहतामोषधयः सुपिप्पलाः ॥

गायत्र्यै नमः—हृदये ।

(१०) ॐ यथेमां वाचं कल्याणीमावदानिजनेभ्यः ॥ ब्रह्मराजन्याभ्याᳫं शूद्राय चार्याय च स्वायचारणा च ॥ प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृध्यतामुपमादो नमतु ॥

सुमेधायै नमः—नाभौ ।

(११) ॐ दुरो देवीर्दिशो महीर्ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः ॥ पङ्क्तिश्छन्दऽ इहेन्द्रियं तुर्यवाङ्गौर्वयो दधुः ॥

विद्यायै नमः—श्रोण्योः ।

(१२) ॐ दैव्याय धर्त्रे जोष्ट्रे देवश्रीः श्रीमनाः शतपया ॥ परिगृह्य देवा यज्ञमायन्देवा देवीभ्योऽ अध्वर्यन्तोऽ अस्थुः ॥

सामगायिन्यै नम—जङ्घयोः ।

(१३) ॐ द्वारो देवीरन्वस्य विश्वे व्रतादन्तेऽ अग्नेः । उरु व्यचसोधाम्ना पत्यमानाः ॥

अम्बिकायै नमः—ऊर्वोः ।

(१४) ॐ देवीरापः शुद्धावोढ्वᳫं सुपरिविष्टा देवेषु सुषरिवष्टा वयं परिवेष्टारो भूयास्म ॥

विश्वमोहार्तिनाशिन्यै नमः—जान्वो ।

(१५) ॐ सीद त्वं मातुरस्या उपस्थे विश्वान्यग्ने वयुनानि विद्वान् । मना तपसा मार्चिषाभिशोचीरन्तरस्याꣳ शुक्रज्योतिर्विभाहि ॥

सुरोत्तमायै नमः—पादयोः ।

(१६) ॐ पुत्रमिव पितरावश्विनो भेन्द्रा वथुः काव्यैर्दꣳ सनाभिः । यत्सुराम व्यपिबः शचीभि सरस्वती त्वा मघवन्नभिष्णक् ॥

विशारदायै नमः-प्राणेषु ।

अथ षडङ्गन्यासः

| | | |
|---|---|---|
| १ ॐ दुरो देवीः | अंगुष्ठाभ्यां नमः | हृदयाय नमः |
| २ ॐ दैव्याय धर्त्रे | तर्जनीभ्यां नमः | शिरसे स्वाहा |
| ३ ॐ द्वारोदेवीः | मध्यमाभ्यां नमः | शिखायै वषट् । |
| ४ ॐ देवीरापः | अनामिकाभ्यां नमः | कवचाय हुम् । |
| ५ ॐ सीदत्वं मा | कनिष्ठिकाभ्यां नमः | नेत्रत्रयाय वौषट् । |
| ६ ॐ पुत्रमिव | करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः | अस्त्राय फट् । |

अथ पूजनम्—

आवाहनम्—

देवि देवि समागच्छ प्रार्थयेहं जगत्पते ।
इमां मया कृतां पूजां गृहाण सुरसत्तमे ॥

आसनम्—

भवानि त्वं महादेवि सर्वसौभाग्यदायिके ।
अनेकरत्नसंयुक्तमासनं प्रतिगृह्यताम् ॥

पाद्यम्—

सुचारुशीतलं दिव्यं नानागन्धसुवासितम् ।
पाद्यं गृहाण देवेशि महादेव नमोऽस्तु ते ॥

अर्घ्यम्—

श्रीपार्वति महाभागे शङ्करप्रियवादिनि ।
अर्घ्यं गृहाण कल्याणि भर्त्रा सह पतिव्रते ॥

आचमनीयम्—

गङ्गातोयं समानीतं सुवर्णकलशे स्थितम् ।
आचम्य तां महाभागे भवेन सहिते नघे ॥

स्नानीयम्—

गङ्गासरस्वतीरेवाकावेरीनर्मदाजलैः ।
स्नापितासि महादेवि तथा शान्ति कुरुष्व मे ॥

पञ्चामृतम्—

पयोदधिघृतं चैव माक्षिकं शर्करायुतम् ।
पञ्चामृतं ते स्नानार्थमर्पये भक्तवत्सले ॥

शुद्धोदकम्—

मन्दाकिन्याः समानीतं हेमाम्भोरुहवासितम् ।
स्नानार्थं जलमानीनं गृहाण जगदम्बिके ॥

वस्त्रम्—

कौशेयं वसनं दिव्यं कञ्चुक्या च समन्वितम् ।
उपवस्त्रेण संयुक्तं गृहाण परमेश्वरि ॥

गन्धम्—

कर्पूरकुङ्कमैयुक्तं हरिद्रादिसमन्वितम् ।
कस्तूरिका समायुक्तं चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥

अक्षतान्—

रञ्जिताः कुङ्कमौघेन अक्षताश्चातिशोभनाः ।
भक्त्या समर्पितास्तुभ्यं प्रसन्ना भव पार्वती ॥

सौभाग्यद्रव्यम्—

कज्जलं चैव सिन्दूरं हरिद्राकुङ्कुमानि च ।
भक्त्यार्पितानि मे गौरि सौभाग्यानि गृहाणमे ॥

रक्ताक्षतान् समर्पणम्—अणिमायै नमः १ महिमायै नमः २ लघिमायैनमः, ३ गरिमायै नमः, ४ प्राप्त्यै नमः, ५ प्राकाम्यै नमः, ६ ईशित्वायै नमः, ७ वसित्वायै नमः ८ ।

पुष्पाणि—

सेवन्तिकावकुलचम्पकपाटलाब्जैः,
पुन्नागजातिकरवीररसालपुष्पैः ।
बिल्वप्रवालतुलसीदलमालतीभिस्त्वां,
पूजयामि जगदीश्वरि मे प्रसीद ॥

उमाशक्त्यै नमः पुष्पं समर्पयामि ।
ॐ शंकरप्रियायै नमः पुष्पं समर्पयामि ।
पार्वत्यै नमः—पुष्पं समर्पयामि ।
कालिन्द्यै नमः पुष्पं समर्पयामि ।
कोटयै नमः पुष्पं समर्पयामि ।

विश्वधारिण्यै नमः पुष्पं समर्पयामि ।
गंगादेव्यै नमः पुष्पं समर्पयामि ।

ॐ उमायै नमः पादौ पू० १० लोकवन्दितायै० स्तनौ. ८
गौर्यै नमः जंघे पू० २ काल्यै० कण्ठं. ९
पार्वत्यै नमः जानुनी पू० ३ शिवायै० मुखं १०
जगद्धात्र्यै नमः ऊरू पू० ४ भवान्यै० नेत्रे ११
जगत्प्रतिष्ठायै नमः कटी पू० ५ रुद्राण्यै० कर्णौ १२
शान्तिरूपिण्यै नमः नाभि पू० ६ शर्वाण्यै ललाटं १३
देव्यै नमः उदरं पू० ७ मङ्गलदात्र्यै० शिरः पू. १४

ॐ उमायै न० बिल्वपत्रं सम० १ गौर्यै० न० अपामार्ग० २ पार्वत्यै मालतीपत्रं ३ दुर्गायै० दूर्वाप० ४ काल्यै० चम्पकप० ५ भवान्यै० करवीरपं० ६ रुद्राण्यै० बदरीप० ७ शर्वाण्यै० अर्कप० ८ चण्डिकायै० तुलसीप० ९ ईश्वर्यै० मुनिप० १० शिवायै दाडिमीप० ११ अपर्णायै० धत्तूरं १२ धात्र्यै० जातीय० १३ मृडान्यै० अगरुपत्रं १४ गिरिजायै० वकुलपत्रं १५ अम्बिकायै० अशोकपत्रं स० १६ ।

धूपम्—

धूपं मनोहरं दिव्यं सुगन्धं देवता प्रियम् ।
दशांगसहितं देवि मया दत्तं गृहाण मे ॥

दीपम्—

तमोहरं सर्वलोकचक्षुः संबोधकं सदा ।
दीपं गृहाण मातस्त्वमपराधशतापहे ॥

नैवेद्यम्—

नानाविधानि भक्ष्याणि व्यञ्जनानिदरप्रिये ।
गृहाण देवि नैवेद्यं सुखदं सर्वदेहिनाम् ॥

आचमनीयम्—

गङ्गोदकं समीनीतं मयाचमनहेतवे ।
तेनाचम्य महादेवि वरदा भव चण्डिके ॥

सिन्दूरम्—

सिन्दूररूपवर्णा च सिन्दूरतिलकप्रिया ।
अतो दत्तं मया देवि सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ॥

कुङ्कमम्—

कुङ्कुमं कामनादिव्यं कामनीकामसंभवम् ।
सुखदं मोहनं चैव कुङ्कुमं प्रतिगृह्यताम् ॥

भूषणानि—

रत्नस्वर्णविकारं च देहसौख्यविवर्धनम् ।
शोभाधारं श्रीकरं च भूषणं प्रतिगृह्यताम् ॥

मंगलसूत्रम्—

माङ्गल्यमापसंयुक्तं मुक्ताफलसमन्वितम् ।
दत्तं मङ्गलसूत्रं ते गृहाण सुखवल्लभे ॥

फलानि—

रम्भाफलं दाडिमं च मातुलिङ्गं च खर्जुरम् ।
नारिकेरं च जम्बीरं फलान्येतानि गृह्यताम् ॥

ताम्बूलम्—

ताम्बूलं च वरं रम्यं कर्पूरादि सुवासितम् ।
जिह्वाजाड्यच्छेदकरं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥

दक्षिणा--

> हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसो।
> अनन्तपुण्य फलदमतः शान्ति प्रयच्छ मे ॥

नीराजनाम्--

> नीराजयामि देवेशि कर्पूराद्यैश्च दीपकैः।
> चन्द्रार्कवह्निसदृशं गृह्ण देवि नमोऽस्तु ते ॥

नमस्कार—

> अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
> तस्मात्कारुण्यभावेन क्षमस्व परमेश्वरि ॥

पूजन हवनकी समाप्ति के उपरान्त [1]पूर्णाहुति से आर्शीवाद तक के समस्त वैदिक कर्मो को विधिवत् करे।

❀ इति शिवशक्तियाग पद्धतिः ❀

---

पूर्णाहुति से आर्शीवाद तक के वैदिक कर्मोंको करने के लिए इस पुस्तक की पृष्ठ संख्या २४ से ३७ तक के पृष्ठों को देखें, केवल संकल्प में लक्ष्मीनारायणयाग की जगह ( शिवशक्ति याग का उच्चारण होगा। )

पुत्र प्राप्ति हेतु

# वैष्णवयाग पद्धतिः

अग्निष्ठं भगवन्तं ध्यात्वा जितं त इति स्तोत्रान्ते केशवादिद्वादशमासनामभिः पूजनं वयसि चरुः, श्रपणे पुरुषसूक्तं जपन् श्रपयाति। पूजनान्ते हुत्वा षोडशभिर्मन्त्रैः षोडशान्नस्य चाहुतीः। शेषं निवेदयेत्तस्मै दद्यादाचमनं तत इति प्रयोगपारिजाते विशेषः। शेषनिवेदनान्ते पुनः षोडशभिमन्त्रैर्दद्यात्पुष्पाणि षोडश इति पराशरमाधवीये च। षोडशमन्त्रैः षोडशाज्याहुतीरादावन्ते च हविषः। फलानि भुङ्क्त्वोपवसे मासमद्भिश्च वर्तयेदित्यत्र चकारः समुच्चयार्थः। अग्रे ऊर्ध्वं मासात्फलाहारादिति प्राप्तैकत्वस्यैवानुवात्। त्रिभिर्दशभिर्वा वषः काम्यपरत्वमनुष्ठानम्। अथापरः प्रकारः पुत्रकामनायां॥

द्वादश द्वादशीः सम्यगित्यादिना। तत्रान्त्यद्वादश्यां कर्मान्ते पुत्रलाभाय यस्याः कर्म सा हविः शेषं नमस्कृत्य नारायणबुद्ध्या पति च नमस्कृत्य हविः शेषं भक्षयेत् आहारान्तरं परित्यज्यानन्तरं वामशायिनी भवेत्। यावत्सा गर्भ न विन्दति तावदस्यां भार्यामृतुमतीमपि न गच्छेत्। प्रायश्चित्तं च प्रागुक्तम्। एवं दैनन्दिनविधिना मासमतिवाहयत् न्यासेन पुरुषसूक्तायुतजपं सहस्रनाम्नां सहस्रजपं गोपालमन्त्रस्य लक्षजपं च समाप्य शुक्लैकादश्यां कृतनित्यक्रियः शुचौ देशे षोडशहस्तात्मकं यथोक्तं।

मण्डपं वेदेरुत्तरतः कुण्डं च होमानुसारेण विधाय लब्ध-ब्राह्मणानुज्ञः सपत्नीको यजमान आचान्तो देशकालौ स्मृत्वा—

श्रीसूर्यमण्डलान्त वर्तिजगद्बीज पुरुषोत्तमनाराय प्रीतिकालः कारितजपदशांश संख्या पुरुषसूक्तस्य होमात्मकं वैष्णवयाग सग्रहमखं करिष्ये। तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं नान्दीश्राद्ध-माचार्यादिवरणं च करिष्ये। तत्रादौ गणेशाम्बिकयोः पूजनम् करिष्ये।

सहस्रनामजपसहितपक्षे तु विष्णुसहस्रनाम सहितस्य होमात्मकमिति विशेषः। गणेशपूजनादि नान्दीश्राद्धान्ते आचार्यादीन् महर्त्विजो वृत्वा होत्रादीन्वृणुयात्। शक्तः सर्वाना-चार्यमेव वा मधुपर्केणार्हयित्वा मण्डपप्रवेशयुक्तविधिना कृत्वा सार्वभौतिकबलिदानान्ते साचार्यो यजमानः पश्चिमद्वारेण मण्डपं प्रवेश्य वेदिपश्चिमे स्वासने उपविशेत्।

यजमानोत्तरदेशे आचार्यः कृताचमनः प्राणायामः कृतावग्न्युत्तारणं हेमीं पलतदर्द्धतदर्द्धान्यतममानोन्मितां यथोक्तां नारायणप्रतिमां मण्डपमध्यस्थवेद्यां पूर्ववन्निधाय यजमानानुज्ञया वैष्णवयागान्तर्गतां नारायणपूजां करिष्ये। इति संकल्प्य॥

पूर्ववदथार्चनविधिरित्यादिपूजा समर्पणान्ते यथाशक्ति पुरुषसूक्तं विष्णुसहस्रनामपक्षे तस्यापि जपं कृत्वा देवे तज्जपं पूर्ववन्निवेद्य वेद्या उत्तरतश्चतुरस्रकुण्डे स्थण्डिले वा प्राङ्मुख उपविश्य करिष्यमाणहोमाङ्गत्वेन न्यासद्वयपूर्वकमग्निस्थापनं

करिष्ये, इति संकल्प्य सहस्रशीर्षा त्वमिति स्थण्डिलकरणादि कृत्वा भगवन्तं ध्यात्वा जितन्त इति स्तोत्रान्तं कुर्यात् ।

अग्निस्थापनात्प्राक्श्वेतवर्णालं कृतायामुपरि मेखलायां विष्णुं रक्तवर्णायां ब्रह्माण कृष्णवर्णायामधोमेखलायां रुद्रं योन्यां रक्तवर्णायां गौरीं च संपूज्य एतावानस्य० इत्यग्नि प्रतिष्ठाप्य त्रिपादूर्ध्वमिति समिन्धनं कृत्वा देवस्योत्तरपूर्वस्य दिशि वेद्यन्तरे ग्रहानावाह्य तदिशाने कलशं संस्थाप्य तत्र वरुणं संपूज्य दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्य इत्यादि तत्र सक्षीरप्रणीताप्रणयनमासादने स्थालीद्वयमेकाग्रहचर्वर्था द्वितीया पायसार्था ।

आज्यभागान्ते ग्रहहोमं कृत्वा दशाश्वत्थीः समिद्धोमादि स्विष्टकृतं हुत्वा प्रायश्चित्तादि, होमशेषमकृत्वैव स्तोत्रं करिष्ये-स्तोत्र पाठान्तं कृत्वा तां रात्रि भगवत्कथामहोत्सवादिनाऽतिवाह्य प्रतिद्वादश्यां कृतनित्यक्रियः साचार्यः सऋत्विग्यजमानो न्यासद्वयं कृत्वावाहनवर्जमर्घ्यादूयुपचारैः प्रदक्षिणान्तं पूजाजपो विधाय ब्राह्मणं स्वस्थाने उपवेश्य प्रोक्षणीपात्रं चरुस्थाली चासाद्य प्रणीताभ्यां प्रोक्षणीः संस्कृत्य पूर्वदिमपवित्राभ्यां प्रोक्षण्युदकेन स्थालीं शेषेण प्रोक्ष्य सहस्राहुतिपर्याप्तं पायसं श्रपयित्वा हविरासादनान्ते तस्माद्यज्ञा० संभृतं० इत्याग्नावासनकल्पनादि-पंचोपचार पूजान्तं कृत्वा इदं जगद्बीजाय पुरुषाय नमम, इति यजमानः सहस्राहुतिपर्याप्त त्यजेत् । ततो ऋत्विजो यथा-विभागेन जुहुयुः ।

ॐ सहस्रशीर्षा० १६ देवाः नारायणाय स्वाहा इत्युभयोः समुच्चयः। केवलहोमपक्षे—नारायणाय स्वाहेति मंत्रान्ते जुहुयाद्धविः। आसहस्रात्ततश्चक्षुर्दिव्यं होतुर्ददाति सः। होतुर्होमकर्तः। अपि वा चरुसाहस्रं तत्रैणैकेन निर्वपेन यावन्तो वा यदि शक्यन्ते हुतान्सर्वान्समापनेदिति वचनाच्चरुणावा होमो घृतेन शाकलैर्वा यावन्तो वा यदितिपदात्। पूर्वोक्तवाक्यनियमाच्च।

मन्त्रान्ते सूक्तान्ते नारायणाय स्वाहेति जुहुयादासहस्रादिति सम्बन्धः केवलहोमपक्ष एषैव विधिर्नियमात्। सहस्रनामपक्ष एव स्थालीपाकं श्रपयित्वेत्याश्वलायनवचनात्सर्वेषां कार्याल्लौकाग्निपक्वं पायसग्रहणं वा। यजमान इदं विश्वरूपाय नारायणाय न मम इत्याहुतिपर्याप्तं पायसं त्यजेत्। ऋत्विजस्तद्दिने एव पूजाद्यावृत्याऽनेकदिनेषु वा सहस्रजपे शतावृत्तैः शतसंख्याकजपे दशावृत्तैर्विष्णुसहस्रनामभिः पायसं जुहुयुः।

ॐ विश्वस्मै स्वाहा। ॐ विष्णवे स्वाहा। ॐ वषट्काराय स्वाहा इत्यादि ॐ सर्वप्रहरणाय स्वाहा १००० इत्येकावृत्तिः। एवं शतावृत्तैर्दशावृत्तैर्वा होम इत्यनन्तदेवः। यावद्धोमसमाप्ति प्रत्यनं सोमाद्यन्तयोर्देवता पंचोपचारैः संपूजयेत्-आधारशक्त्यै स्वाहा, इत्यादि पीठदेवताभ्यः विन्दयै नमः स्वाहा इत्याद्यावरणदेवताभ्यो मण्डलदेवताभ्यश्च होमं कृत्वा समाप्ते होमेऽग्ने नयेति मन्त्रान्ते स्वाहा स्वधायुताग्नये मृडाय नम इत्यग्निं संपूज्य स्विष्टकृद् अयाश्चिदाहुतीश्च हुत्वा दिग्बलिं दत्वा सूर्यादिग्रहेभ्यः दत्वा वंशपात्रादौ कुष्माण्डादिफलजलकुंभसहितक्षेत्रपालाय बलिं दद्यात्।

ततः प्रक्षालितकरचरणेन यजमानेन कृतवैष्णवयागस्य पूर्णाहुतिं होष्ये ।

इति संकल्पे कृते आचार्यः स्रुचि द्वादशगृहीतं चतुर्गृहीतं वाज्यं गृहीत्वा पूर्णं च कृत्वा वस्त्रयुतं चन्दनादिभूषितं नारिकेलफलं तत्र निधाय पत्न्याद्यन्वारब्धो यजमानान्वारब्ध आचार्यः समुद्रादूर्मि० इति तृचेन मूर्द्धानन्दिव इत्यादिमन्त्रैश्च जुहुयात् ।

ततो वसोर्द्धारां हुत्वाग्निं प्रदक्षिणीकृत्य त्र्यायुषं च कृत्वा संस्रवप्राशनादिप्रणीताविमोकान्ते ग्रहवेदीशानदिक्कलशोदकेन सपल्लवैः सर्त्विगाचार्य उदङ्मुखस्तिष्ठन् प्राङ्मुखं शुद्धासनोपविष्टं नूतनाहत वाससं वामभागोपविष्टाहतवस्त्रावृतपत्नीसहितं पुत्रादिपरिवारसहितं च यजमान भिषिञ्चेत् देवस्यत्वेत्यादिमन्त्रैः सुरास्त्वेत्यादिपुराणमन्त्रैश्च । एवमभिषिक्तः सपत्नीको यजमानः सर्वौषधभिरनुलिप्तः सुस्नातो घृतश्वेताहतवासश्चन्दनकुसुमो विभूतिधारणं कृत्वा शुद्धासने उपविष्टानाचार्यादिदीनानाथादिनान्सम्पूज्य तेभ्यो गवादिशक्त्यनुसोरण दक्षिणां दद्यात् ।

तत्र मन्त्राः—

यज्ञसाधनभूताया विश्वस्याघप्रणाशिनी ।
विश्वरूपधरो देवः प्रीयतामनया गवा ॥
धर्मस्त्वं वृषरूपेण जगदानन्दकारक ।
अष्टमूर्तेरधिष्ठानमतः शान्तिं प्रयच्छमे ॥ इति ।
विष्णुस्त्वमश्वरूपेण यस्मादमृतसम्भवः ।
इन्द्रस्य वाहनं नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छमे ॥
इत्यश्वः ।

यस्मादशून्यशयनं केशवस्य शिवस्य च ।

शय्या ममाप्यशून्यास्तु तथा जन्मनि जन्मनि ॥
उत्तानाङ्गिरसा दैवतामिति शय्यायाः ।
परापवादपैशून्यादभक्षस्य च भक्षणात् ॥
अनृतोत्थश्च यत्पापं पंचपात्राद्विनश्यतु ।
सूर्य्याचन्द्रमसौ देवते, इति पूर्णपात्रस्य ॥

ततः स्थापितदेवानामुत्तरपूजां कृत्वाऽऽवाहनं न जानामि० इति प्रार्थ्य प्रदक्षिणीकृत्य नत्वा मुकुलमुद्रां ललाटे बध्वा सूक्तं पूर्ववज्जप्त्वा देवे निवेद्य एकाग्रचित्तः जितं ते पु० इत्युक्त्वा पुनः पठित्वा विसर्जनं कृत्वा उत्तिष्ठ ब्रह्मण इति ग्रहान्विसृज्य यान्तु देवगणा इत्युभयोर्देवताः प्रार्थ्य पीठद्वयगतदेवता प्रतिमाः सोपस्करा आचार्य्याय हस्ते प्रतिपाद्य अग्निष्ठं भगवन्तं पूर्ववत्तस्माद्यज्ञात्० ऋच इति सप्तम्यादिपञ्चर्ग्भिः पञ्चोपचारैः सम्पूज्य ध्यात्वा जितन्ते पुण्ड० १४ केवल मित्यन्तं स्तुत्वा प्रदक्षिणाचतुष्टयं कृत्वा नत्वा ललाटे मुकुलमुद्रां बध्वा यथाशक्ति-सूक्तं जपित्वा देवे निवेद्य जितन्ते पु० इत्युक्त्वा पुनः जितन्ते० यान्तु देवगणा इति विसृज्य सूर्य्यमण्डलस्थं भगवन्तं ध्यात्वा—

भगवन्देवदेवेश पुरुषोऽसि सनातन ।
क्षमस्व पुण्डरीकाक्ष भक्तस्य तु विशेषतः ॥
ज्ञानादज्ञानतो वाऽपि यन्न्यूनादिकृतं मया ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जनार्दन ॥

तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जनार्दन ।

इति प्रार्थ्य शंखादिधारिणं सूर्य्य मण्डले स्वहृदये च ध्यात्वा सहस्रशीर्षा० १६ देवाः इति षोडशर्भिः षोडशपुष्पाणिसूर्य्यमुद्दिश्योत्क्षिप्य, जितन्ते पु० ज १६ इति स्वमूर्धनि च क्षिप्त्वा साष्टाङ्गं प्रणम्य स्वास्मिन्नेन भगवन्तं क्षणं ध्यात्वा मण्डपदेवताद्वारदेवताश्च सम्पूज्य विसृज्य - अमुं ध्वजापताकादियुतं मण्डपमाचार्य्याय प्रतिपादय इति प्रतिपाद्य कृतस्यैतस्य सग्रहमखवैष्णवयागस्य सम्पूर्णतायै यथोपपन्नेनान्नेन सहस्रं शतं वा ब्राह्मणान्भोजयिष्ये । इति सङ्कल्प्य—

विप्रभोजनसंख्योक्ता मदरत्न—आश्वलायनः—

एकमेकाहुतौ विप्रं होमेत्वन्नेन भोजयेत् ।<br>
अप्यथो मध्यमश्चापि विप्रमेकं शताहुतौ ॥<br>
सहस्रस्य हुतेवकं जघन्योऽपि प्रभोजयेत् ।<br>
अन्यथा दहति क्षिप्रं तद्राष्ट्रं नात्र संशय ॥

इति । भूयसीदक्षिणोत्सर्गंञ्च कृत्वा वस्त्रदक्षिणादिता तोषितब्राह्मणानामग्रे साष्टाङ्गं प्रणम्य वद्धाञ्जलिः-यन्मया कृतं जपपूजाग्निकार्यहोमात्मकं विष्णुयागाख्यं कर्म तन्मंत्रहीनं तन्त्रहोन देशकालहीनं श्रद्धाभक्तिहीनं भगवद्वचनाद्विष्णोः प्रसादात्परिपूर्णमस्तु । अच्छिद्रं चास्तु । इति प्रार्थ्यतोयं तथास्तु इति वदेयुः । यस्य स्मृत्या च० दिति श्रुतिः । इति विष्णुं स्मृत्वा अनेन विष्णुयागेन सूर्य्यमण्डलान्तर्वर्त्तिनारायणः प्रीयताम् । इति भगवदर्पणं कृत्वाऽऽशिषो गृहीत्वा दीनानाथान्सन्तोष्य सुहृन्मित्रादियुतः सोत्साहो भुञ्जीत । यश्च श्रमः प्रकर्त्तव्यः प्रयोगस्यास्य लेखने । प्रीयतां तेन मे देवो यज्ञभुक् परमेश्वरः ॥

॥ इति श्रीमदनन्तदेवेन कृतो जप सहित होमात्मक

वैष्णवयाग पद्धतिः समाप्तः ॥

## यज्ञोंमें आवश्यक गणेश-आदिका अर्चनप्रकार

### अथ गणेशाम्बिकापूजनम्

| | | | |
|---|---|---|---|
| गणानां त्वां गणपतयेन० | आवाहनम् | त्वां गन्धर्वा | गन्धम् |
| अम्बेऽअम्बिके अम्बिकायै नमः | | अक्षन्नीमदन्त | अक्षतान् |
| मनो जूतिः अस्यै प्राणाः-प्रतिष्ठापनम् | | ओषधीः प्रतिमोदध्वम् | पुष्पमालाम् |
| पुरुषऽ एवेदठं० | आसनम् | काण्डात्काण्डात् | दूर्वाङ्कुरान् |
| एतावानस्य | पाद्यम् | सिन्धोरिव | सिन्दूरम् |
| त्रिपादूर्ध्व | अर्घ्यम् | अहिरिव | नानापरिमलद्रव्याणि |
| ततो विराड जायत | आचमनम् | धूरसि | धूपम् |
| तस्माद्यज्ञात् | स्नानम् | अग्निर्ज्योतिः | दीपम् |
| पञ्चनद्यः | पञ्चामृतस्नानम् | अन्नपतेन्नस्यस्य | नैवेद्यम् |
| पयः पृथिव्याम् | पयः स्नानम् | अठं॰ शुनाते | करोद्वर्तनम् |
| दधिक्राव्णः | दधिस्नानम् | यत्पुरुषेण | ताम्बूलम् |
| घृतंमिमिक्षे | घृतस्नानम् | याः फलिनीः | फलम् |
| मधुवाता | मधुस्नानम् | हिरण्यगर्भः | दक्षिणाम् |
| अपाᳬरसम् | शर्करास्नानम् | इदठं॰ हविः | नीराजनम् |
| शुद्धवालः | शुद्धोदकस्नानम् | यज्ञेन यज्ञमयजन्त | पुष्पाञ्जलिम् |
| युवा सुवासाः | वस्त्रम् | ये तीर्थानि | प्रदक्षिणाम् |
| सुजातो ज्योतिषा | उपवस्त्रम् | रक्ष रक्ष | विशेषार्घ्यम् |
| यज्ञोपवीतं परमम् | यज्ञोपवीतम् | विघ्नेश्वराय | प्रार्थना |

### अथ कलशस्थापनम्

| | | | |
|---|---|---|---|
| महीद्यौः | भूमिस्पर्शः | त्वां गन्धर्वा | गन्धप्रक्षेपः |
| धान्यमसि | धान्यविकरणम् | या ओषधीः | सर्वौषधिप्र० |
| आजिघ्र | कलशस्थापनम् | काण्डात्काण्डत् | दूर्वाङ्कुरप्र० |
| वरुणस्योत्तम्भ | कलशे जलप्रक्षेपः | अश्वत्थेवः | पञ्चपल्लवप्र० |

| | |
|---|---|
| पवित्रे:थः | पवित्रप्र० |
| स्योना पृथिवि | सप्तमृत्तिक प्र० |
| याः फलिनीः | गीफलप्र० |
| परिवाजपति | पश्चरत्नप्र० |
| हिरण्यगर्भः | हिरण्यप्रक्षेपः |
| सुजातो ज्योतिषा | वस्त्रवेष्टनम् |
| पूर्णादर्वि | पूर्णपात्रन्यासः |

याः फलिनीः—नारिकेलफलस्थापनम्

| | |
|---|---|
| तत्व यामि | वरुणावाहनम् |
| ॐ अप्पतये नमः | वरुणपूजनम् |
| कलाः कला हि | गङ्गाद्यावाहनम् |

मनो जूतिः—वरुणाद्य वाहितदेवता-प्रतिष्ठापनम्। ततःषोडशोपचारैः पू०

| | |
|---|---|
| देवदानवसंवाद | प्रार्थनाः |

## अथ पुण्याहवाचनम्

दीर्घानागा, त्रीणिपदा-आशिषःप्रार्थना

अपां मध्ये, शिवा आपः सन्तु—जलम्

लक्ष्मीर्वसति, सौमनस्यमस्तु—पुष्पम्

अक्षत चास्तु अक्षतं चारिष्ठ चास्तु—अक्षतान्

| | |
|---|---|
| गन्धाः पान्तु | गन्धम् |
| अक्षताः पान्तु | अक्षतान् |
| पुष्पाणि पान्तु | पुष्पाणि |

सफलःताम्बूलानिपान्तु-सफल ताम्बूलम्

| | |
|---|---|
| दक्षिणाः पान्तु | दक्षिणाम् |
| पुनरत्रापः पान्तु | मूलज |
| दीर्घमायुः | प्रार्थना |

द्रविणो दाः सविता त्वा, न तद्रक्षांꣳसि, उच्चाते, उपास्मै गायता — मन्त्रपाठः

| | |
|---|---|
| व्रतजपनियम | प्रार्थना |

ततो यजमानःशन्तिरस्तु—इत्यादि पठेत्

निकामेनिकामे, शुक्राङ्गारकबुध—पठनम्

ब्राह्मपुण्य, पुनन्तु मा-ॐ पुण्याहम्

पृथिव्याम्, यथेमां—ॐ कल्याणम्

सागरस्य, सत्रस्य ऋद्धिः-ॐ ऋध्यताम्

स्वस्तिऽस्तु, स्वस्ति नः—
ॐ आयुष्मते स्वस्ति

समुद्रमथनाजाता. श्री श्वेते-ॐअस्तुश्रीः

मृकण्डसूनी, शतमिन्नु
ॐ शतं जीवन्तु भवन्तः

शिवगौरी विवाहे, मनसः कामम्
ॐ अस्तु श्री।

प्रजापतिर्लोक, प्रजापतेनत्व

आयुष्यते स्वस्ति, प्रतिपन्थात्
ॐ आयुष्मते स्वस्ति

### अथाभिषेकः

पयः पृथिव्याम्। पश्चनद्यः। वरुणस्योत्तम्भम्। देवस्य त्वा। देवस्य त्वा। देवस्य त्वा। विश्वानि देव। धामच्छदग्निः। त्वं यविष्ठ। अन्नपतेन्नस्य। द्यौः शान्तिः। यतो यतः—कोऽसि कतसोऽसि। शिरो मे। जिह्वा मे। बाहू मे। पृष्ठी मे। नाभि मे प्रतिक्षत्रे। त्रयादेवाः प्रथमाद्वितीयैः।

## अथ मातृकापूजनम्

गणानां त्वा — गणपतये नमः
आयङ्गौः — गौर्यै
हिरण्यरूपा उषसः — पद्मायै
निवेशनः सङ्गम — शच्यै
मेधाम्मे — मेधायै
सविता त्वा — सावित्र्यै
विज्यन्धनुः — विजयायै
वह्वीनां पिता — जयायै
इन्द्रऽआसन्नेता — देवसेनायै
पितृभ्यः स्वधायिभ्यः — स्वधायै
स्वाहा प्राणेभ्यः — स्वाहायै
आपोऽअस्मान् — मातृभ्यः
रयिश्च मे — लोकमातृभ्यः
यत्प्रज्ञानम् — धृत्यै
त्र्यम्बकं यजामहे — पुष्ट्यै
अङ्गान्यात्मन् — तुष्ट्यै
प्राणाय स्वाहा-आत्मनः — कुलदेवतायै
गौरी पद्मा शची मेधा — प्रार्थना
'ॐ गणपत्यादिकुलदेवतान्तमातृभ्यो नम इति षोडशोपचारैः पूजयेत् ।

## अथ वसोर्धारापूजनम्

वसोः पवित्रम् — सप्तधाराकरणम्
ॐ कामधुशः — गुडेनैकीकरणम्
मनसः कामम् — श्रियै नमः
श्रीश्चते — लक्ष्म्यै
भद्रं कर्णेभिः — धृत्यै
मेधाम्मे — मेधायै
प्राणाय स्वाहा — स्वाहायै
आयङ्गौः — प्रज्ञायै
पावकानः — सरस्वत्यै
मनोजूतिः — प्रतिष्ठापनम्
यथोपचारैः
श्रीर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा — प्रार्थना
यदङ्ग वेन भो देव्यः — प्रार्थना

## अथायुष्यमन्त्रजपः

आयुष्यं वचस्यम् । न तदक्षा-सि ।
यदाबध्नम् — मन्त्रपाठ

## अथानन्दीश्राद्धप्रयोगः

ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः — पाद्यम्
पितृपितामही प्रपितामहाः
ॐ मातृपितामहीप्रतिामह्यः
ॐ मातामहप्रमातामहवृद्धमातामहा
ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः — आसनदानम्
ॐ मातृपितामहीप्रपितामह्यः
ॐ पितृपितामहप्रपितामहाः
ॐ मातामहप्रमातामहवृद्धप्र०
गन्धादिदानम् —
( सत्य० इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा )
भोजननिष्क्रयदानम्

( इदं युग्मब्राह्मणभोजननि० )
सक्षीरयवमुदकदानम्—
( सत्य० विश्वेदेवा: प्रीय० )
अघोराः पितरः सन्तु जलधारादानम्
गोत्रन्नो वर्धताम् प्रार्थना

सत्यवसु० कृतस्य नान्दीश्राद्ध—
दक्षिणादानम्
उपास्मै गा, इडामग्ने पाठमात्रम्
वाजे वाजे वत विसर्जनम्
आमा वाजस्य अनुव्रजनम्

## आचार्यादिवरणम्

ततो यजमानो गन्धादिना आचार्यादिब्राह्मणान् सम्पूज्य वृणुयात् ।

व्रतेन दीक्षाप्नोति — रक्षासूत्रबन्धनम्
ब्राह्मणाः सन्तु शास्तारः प्रार्थना

क्षमा सत्यं दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
देवपूजाग्निहवनं सन्तोषः स्तेयवर्जनम् ॥ १ ॥
उपवीतो बद्धशिखो धीरो मौनी दृढव्रतः ।
धौतववासाः पञ्चकच्छो द्विराचामः कृताह्निकः ॥ २ ॥
नैकवस्त्रो नान्तराले न द्वीपे नार्द्रवाससा ।
न कुर्यात्कस्यचित्पीडां कण्डून्मीलनवर्जितः ॥ ३ ॥
अवैधं नाभ्यधः स्पर्शं कर्मकाले न कारयेत् ।
न पदा पादमाक्रम्य न चैव हि तथा करौ ॥ ४ ॥
न नासमाहितमना न च सश्रावयन् जपेत् ।
न चक्रमन्न च हसन्न पार्श्वानवलोकयन् ॥ ५ ॥
जपकाले न भाषेत नान्यानि प्रक्षयेद् बुधः ।
न कम्पयेच्छिरो ग्रीवं दन्तानैव प्रकाशयेत् ॥ ६ ॥
न द्रुतं नापि विश्रान्तं क्रमान्मन्त्रं जपेत्सुधीः ।
क्रोधं मोह क्षुतनिद्रां निष्ठीवनविजृम्भणे ॥ ७ ॥
दर्शनं च श्वनीचानां वर्जयेजपकर्मणि ।
पादप्रसारण नैव कास्यपात्रे न भोजनम् ॥ ८ ॥
श्रद्धोत्साही मनःस्थैर्यं त्रिकालं देवतार्चनम् ।
जपहोमादिषु नरमध्यं नाकारणात् स्पृशेत् ॥ ९ ॥

अनालस्यं सौमनस्यमहिंसा शान्तिरेव च ।
मन्त्राधिष्ठातदेवानां ध्यानं धारणमर्थतः ॥ १० ॥
पवित्रपाणिस्तिलकी ताम्बूलपरिवर्जनम् ।
असूयाद्वेषद्रोहेर्ष्याप्रहासपरिवर्जनम् ॥ ११ ॥
मञ्चखट्वादिशयनं प्रातराहारवर्जनम् ।
परस्परमनिन्दां च न क्षौरं नातिभोजनम् ॥ १२ ॥
निरर्थकं न संलापो नाङ्गानां चालनं मुधा ।
स्नानं त्रिषवण चैव गुरुदेवद्विजार्चनम् ॥ १३ ॥
वैश्वदेवं तथातिथ्यमथैकासस्थितिः ।
प्रिया वाणी प्रसन्नत्वं तत्तमन्त्रादचिन्तनम् ॥ १४ ॥
आचार्यकथने स्थेयान्न प्रतिग्रहमाचरेत् ।
हविष्याशी मिताहारी लोभदंभविवर्जितः ॥ १५ ॥
अत्वरः सकलान् मन्त्रान् जपे प्रयोजयेत् ।
दूरतः सन्त्यजेत्सर्वं मादकद्रव्यसेवनम् ॥ १६ ॥
यज्ञमण्डये हस्तपादप्रक्षालनं क्वचित् ।
मान्षं प्रतिनिधिं कुर्यान्न पर्युषितभुग्भवेत् ॥ १७ ॥
वर्तमाने जपादौ च लघुशङ्कादिकं त्यजेत् ।
कृतेऽपि तत्क्षणं वस्त्रमन्यद् धृत्वासणं भजेत् ॥ १८ ॥
मृगीमुद्रामुपाश्रित्य यथार्थ हुतमाचरेत् ।
न स्युतवासा नीर्णीपी नापि पारक्यवस्त्रभृत् ॥ १९ ॥
अक्ष्यङ्गोत्मर्दने नैव सदा साधमना भवेत् ।
अकौटिल्यं च स्वाध्यार्थ तितक्षामार्जवं भजेत् ॥ २० ॥
आदिष्टसमये कुर्याद् गमनागमने वुधः ।
जम्भादीवाभ्यधः स्पर्शे निमित्तेऽप उपस्पृशेत् ॥ २१ ॥
यद्वा सर्वोपघातेपु संस्मरेद्विष्णुमव्ययम् ।
पालयेद्यज्ञभाग्विद्वान् द्रोढस्ना नियमानिमान् ॥ २२ ॥

अज्ञानादथवा मोहात्प्रच्यवेताध्वरेषु यत् ।
स्मरणादेव तद्विष्णोः संपूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥ २३ ॥

आमध्यानं जपं कुर्यात्तीर्थादौ निर्जने स्थले । क्षीराहारी फलाहारी शाकाहारी हविष्यभुक् । नृत्यगीते द्विभुक्तं च दुःसंवासं प्रमत्तताम् । श्रुतिस्मृति विरुद्ध च जपं रात्रौ विवर्जयेत् । अस्मिन्कर्मणि ये तु प्रार्थना

## अथ पश्चिमद्वारेण मण्डपादिप्रवेशः

| | | | |
|---|---|---|---|
| चतुर्भुजां शुक्लवर्णा— | भूमिध्यानम् | देवा आयान्तु | |
| आगच्छ देवि, उधृतासि | प्रणामः | इयं वेदिः सुभू | महावेदिसमीपे |
| ब्रह्मणा निर्मिते भूम्यै | अर्घदानम् | भूमिर्भूमिमवागात् | मध्यकुण्ड-समीपे वा पाठमात्रम् |
| यमेन पूजिते | प्रार्थनाः | | |
| स्वस्ति न इन्द्रो | पाठः | | |

आचार्यो वामहस्ते गौरसर्षपान् गृहीत्वा दिग्रक्षणं कुर्यात् । तत्र मन्त्राः—

रक्षोहण बलगहम् । रक्षोहणो वो बलगहनः । रक्षसां भागोसि । रक्षोहा विश्वचर्षणिः । यदत्र संस्थितम् । अपसर्पन्तु ते भूताः । भूतानि राक्षसा वापि । इति ।

## अथ पञ्चगव्यकरणम्

| | | | |
|---|---|---|---|
| तत्सवितुर्वरेण्यम् | गोमूत्रम् | तेजोसि | आज्यम् |
| गन्धद्वाराम् | गोमयम् | देवस्य त्वा | कुशोदकम् |
| आप्यायस्व | पयः | ॐ प्रणवेन— | आलोडनम् ( कुशैरापोहिष्ठेति कर्मभूमिं प्रोक्षेत् ) |
| दधिक्राव्णः | दधि | | |

## अथ मण्डपाङ्गवास्तुपूजनम्

विशन्तु भूतले—आग्नेयादिचतुर्दिक्षुलोहशंकुरोपणम्
अग्निभ्योऽप्यथ; नैऋत्याधिपतिश्चैव वायव्याधिपतिश्चैव, रुद्रेभ्यश्चै—

माषमभक्तबलिदानम्—

वेद्युपरि सुवर्णशालाकया प्रागग्रां द्व्यङ्गुलान्तराला नव रेखाः कार्या । तत्र मन्त्राः—ॐ लक्ष्म्यै नमः १ यशोवत्यै नमः कान्तायै नमः ३ सुप्रियायै नमः ४ विमलायै नमः ५ शिवायै नमः ६ सुभगायै नमः ७ सुमत्यै नमः ८ इडाये नमः ९ ततः । उदगग्रा नवरेखाः कार्याः—ॐ धान्यायै नमः १ प्राणायै नमः २ विशालयै नमः ३ स्थिरायै नमः ४ भद्रायै नमः ५ जयायै नमः ६ निशायै नमः ७ विरजायै नमः ८ विभवायै नम ९ ।

## अथ शिख्यादिवास्तुमण्डलस्थदेवानामावाहनं पूजनं च

| | | | |
|---|---|---|---|
| तमीशानम् | शिखिने नमः | द्वे विरूपे | दौवारिका |
| शन्नो वातः | पर्जन्याय | नीलग्रीवाः शितिकण्ठाब्रि | --सुग्रीवाय |
| मर्माणि ते | जयन्ताय | नमो गणेभ्यः | पुष्पदन्ताय |
| आयात्विन्द्रो वसः | कुलिशायुधाय | इमम्मे | वरुणाय |
| बण्महाँऽअसि | सूर्याय | यमश्विना | असुराय |
| व्रतेन दीक्षाम् | सत्याय | शन्नो देवीः | शोषाय |
| आत्वाहार्षम् | भृशाय | एतत्ते | पापाय |
| यावाङ्कशा | आकाशाय | द्रापेऽअन्धसस्पते | रोगाय |
| वायो ये ते | वायवे | अहिरिव भोगैः | अहये |
| पूषन्तव | पूष्णे ( पूषणम् ) | अवतत्य धनुष्ट्वम् | मुख्याय |
| तत्सूर्यस्य | वितथाय | इमा रुद्राय | भल्लाटाय |
| भक्षन्नमीमदन्त | गृहक्षताय | सोमर्ठ० राजनम् | सोमाय |
| यमाय त्वाङ्गिरस्वते | यमाय | नमोऽस्तु सर्पेभ्यो | सर्पेभ्यः |
| गन्धर्वस्त्वा | गन्धर्वाय | इडऽएहि | अदित्यै |
| सौरीबलाका | भृङ्गराजाय | आदितिद्यौः | दित्यं |
| मृगो न भीमः | मृगाय | अस्त्वग्ने | अद्भ्य |
| उशन्तस्त्वा | पितृभ्यो | हृल्लऽआधाय | सावित्राय |

| | |
|---|---|
| आषढं युत्सु | जयाय |
| नमस्ते | रुद्राय |
| यदद्य | अर्यम्णो |
| विश्वानि देव | सवित्रे |
| विवस्वन्नादित्यै | विवस्वते |
| सबोधि | विबुधाधिपाय |
| मित्रस्य चर्षणी | मित्राय |
| नाशयित्री | राजयक्ष्मणे |
| स्योना पृथिवि | पृथ्वीधराय |
| आते वत्सोम | ब्रह्मणे |
| यन्ते देवी | चरक्यै |
| अक्षाराजाय | विदार्यै |
| इन्द्रस्य क्रोडः | पूतनायै |
| यस्यास्ते | पापराक्षस्यै |
| यदक्रन्दः अर्यम्णे | ( अर्यमणम् ) |
| हिङ्काराय स्वाहा | जृम्भकायं |
| कास्विदासीत् | पिलिपिच्छाय |
| त्रातारमिन्द्रम् | इन्द्राय |
| त्वन्नोऽअग्ने | अग्नये |
| यमाय त्वा | यमाय |
| असुन्वन्तमयज | निर्ऋतये |
| तत्त्वा यामि | वरुणाय |
| आ नो नियुद्भिः | वायवे |
| वयर्ठ० सोम | सोमाय |
| तमीशानम् | ईशानाय |
| अस्मे रुद्रा | ब्रह्मणे |
| स्योना पृथ्वी | अनन्ताय |

ततः—मनोजूतिरिति प्रतिष्ठाप्य षोडशोपचारैः पूजयेत्। तत्र कलशस्थापन विधिना कलशं संस्थाप्य तदुपरि स्वर्णमयी वास्तुप्रतिमामग्न्युत्तरण प्रणप्रतिष्ठा-पूर्वकं स्थापयेत् पूजयेच्च।

तत्र मन्त्राः—समुद्रस्य त्वा । हिमस्यत्व । उपज्मन्नु । अपामिदन्न्यय । अग्ने पावक । स नः पावक । यावकया यश्चि । नमस्ते हरसे । नृषदेवेडप्सु । ये देवा देवानाम् । प्राणदाऽअपानदा । ये देवा देवेष्वधि ।

ततः 'ॐ शिखिने एष पायसबलिनं मम' एवं भूतैः पूर्वोक्तनाममन्त्रैः शिख्यादिवास्तुमण्डलस्थदेवाभ्यः पायसबलिदानम् । ततः 'ॐ वास्तुपुषाय एष बलिर्न मम' इति मन्त्रेण प्रधानवास्तुपुरुषाय बलिं दद्यात् । ततः त्रिसूत्र्या मण्डपवेष्टनं जलदुग्धधारादानं च ।

तत्र मन्त्राः—कृणुष्वपाजः । तव भ्रमासः । प्रतिस्पशो विसृष । उदग्नेतिष्ठ । उर्ध्वो भव । पुनन्तु मा पितरः । अग्नऽ आयूर्ठ० षि । पुनन्तुमा देवजनाः पवित्रेण पुनीहि । यत्तेपवित्रम् । पवमानः सोऽअद्य नः । उभाभ्यां देवा । वैश्वदेवी पुनती ।

## अथ मण्डप पूजनम्

तत्र ईशानकोणादारभ्य मध्ये
चतुरः स्तम्भान् पुजयेत्—
( १ ) ब्रह्म यज्ञानम्— ब्रह्मणे नमः
( सावित्र्यै, वास्तुदेवतायै,
ब्राह्मै, गङ्गायै )
ऊर्ध्वऽऊषुण ऊतये—नागमात्रे नमः
आयङ्गौः शाखाबन्धनम्
यतो यतः स्तम्भाभिमन्त्रणम्
( एव सर्वत्र )
(२) इदं विष्णुः विष्णवे नमः
( लक्ष्म्यै, आदित्यै, नन्दायै,
वैष्णव्यै )
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः, यतोयतः
( ३ ) नमःशम्भवाय च शम्भवे नमः
( गौर्यै, माहेश्वर्ये शोभनायै, भद्रायै )
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः, यतो यतः
( ४ ) त्रातारमिन्द्रम् इन्द्राय नमः
(इन्द्राण्यै, आनन्दायै, विभूत्यै, अदित्य)
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः, यतो यतः
ततो मण्डपाद् बहिः ईशानादारभ्य
द्वादशस्तम्भान् पूजयेत् —
( १ ) आ कृष्णेन, सूर्याय नमः
( सौर्यै, भूत्यै, सावित्र्यै, मङ्गलायै )
ऊर्ध्वऽऊषु आयङ्गौः, यतो यतः
( २ ) गणानां त्वा गणपतये नमः
( सरस्वत्यै, विघ्नहारिण्यै, जयायै )
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः, यतो यतः
(३) यमायत्वा यमाय नमः
(पूर्वसंध्यायै, अञ्जन्यै, क्रूरायै, नियंत्र्यै)
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः यतोयतः
(४) नमोस्तु सर्पे—नागराजाय नमः
( मध्यमसन्ध्यायै, धरायै,
पद्मायै महापद्मायै )
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः यतो यतः
(५) यदक्रन्दः स्कन्दाय नमः
( पश्चिमसन्ध्यायै )
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः यतो यतः
(६) वायो येते वायवे नमः
( वायव्यै, गायत्र्यै, मध्यमसन्ध्यायै )
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः यतो यतः
(७) आप्यायस्व सोमाय नमः
( सावित्र्यै, अमृतकलायै,
विजयायै, पश्चिमसन्ध्यायै )
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः, यतो यतः
(८) इमम्मे वरुणाय नमः
( वारुण्य, पाशधारिण्यै, बृहत्यै )
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः, यतो यतः
(९) वसन्यस्त्वा अष्टवसुभ्यो नमः
( विनतायै, अणिमायै,
भूत्यै, गरिमायै )
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः यतो यतः
(१०) सौमोधेनुर्ठ० धनदाय नमः
( आदित्यायै, लघिमायै सिनीवाल्यै )

ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः, यतो यत।
(११) बृहस्पते अति— बृहस्पते नमः
( पौर्णमास्यै, सावित्र्यै, वास्तुदेवतायै
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः, यतो यतः

(१२) बिम्वकर्मन्ह—विश्वकर्मणे नमः
( सिनीवाल्यै, वास्तुदेवतायै, सावित्र्यै)
ऊर्ध्वऽऊषु, आयङ्गौः, यतो यतः

## अथ पूर्वादिक्रमेण तोरण पूजा।

ॐ अग्निमीडे तोरणनिधानम् । 'ॐ सुदृढतोरण नमः इति पञ्चोपचारैः पूजयेत् ।

दक्षिणे ॐ राहवे नमः । वामे—ॐ बृहस्पतये नमः । तत्र कलशस्थान-विधिनैकं कलश संस्थाप्य तस्मिन् कलशे ॐ ध्रुवाय नमः-इत्तावाह्य पूजयेत् । ॐ इषे त्वा-इति तोरणं निधाय ॐ सुभद्रतोरणाय नमः पूजयेत् ।

दक्षिणे-ॐसूर्याय नमः 'ॐ अङ्गारकाय नमः । कलश संस्थाप्य ॐ धरायै नमः—इत्यावाह्यपूजयेत् । ॐ अग्न आयाहि-इति तोरणनिधानम् । ॐ सु ( भीम शर्मतोरणाय नमः ।

दक्षिणे ॐशुक्राय नमः । वामे ॐ बुधाय नमः । कलशं स्थाप्य ॐ वाक्पतये नमः—इत्यं० । ॐ शन्नो देवी० ।

ॐ तोरणाय नमः । ॐ सुहोत्रतोरणाय नमः । दक्षिणे—ॐ सोमाय नमः । वामे – ॐ केतुशनिभ्यां नमः ।

कलशं संस्थाप्य तत्र— ॐ विघ्नेशाय नमः इति पञ्चोपचारैः पूजयेत् ।

## अथ द्वारपूजाः

पूर्वद्वारे—कलशद्वयं संस्थाप्य तत्र

ॐ ऐरावताय नमः-इति पूजयेत् । ऊर्ध्वे – द्वारश्रियै नमः । अधः-देहल्यै नमः । वामदक्षिणस्तम्भयोः गणेशाय नमः । स्कन्दाय नमः । कलशद्वये-गङ्गायै नमः । यमुनायै नमः-इत्वाह्य पूजयेत् । ऋग्वेदिनौ द्वारपालौ वृत्वा ॐ अग्निमीडे – इति गन्धादिना पूजयेत् । द्वारकलशयोः ॐत्रातारमिन्द्रमिति इन्द्रं पूजयेत् 'ॐ आशुःशिशानः इति पीतो पताकां पीत ध्वज च च समुच्छ्रयेत् । इन्द्राय बलिदानं च । तत आग्नेयीं गत्वा कलशं संस्थाप्य तत्र अमृताय नमः पुण्डरीकाक्ष नमः—इत्यावाह्य पूजयेत् । कलशे—अग्नये नमः इत्यग्निमाह्य

पूजयेत् । '३ॐ अग्नि दूतम्' इति रक्तां पाताकां रक्त ध्वजं च समुच्छयेत् । ३ॐ त्वन्नोऽअग्ने—इत्यग्नि पूजयेत् । बलिदानं च । दक्षिद्वारे - कलशद्वय स्थाप- यित्वा तत्र वामननामदिग्गजाय नमः इति पूजयेत् । ऊर्ध्वं—द्वारश्रिय नमः । अधः—देहल्यै नमः । स्तम्भयोः—पुष्पदन्ताय नमः । कपर्दिने नमः । कलशद्वये गोदार्य नमः कृऽणाय नमः । यजुर्वेदिनी द्वार पालो वृत्वा ३ॐ 'इवे त्वोर्ज्जत्वा इति पूजयेत् । पुनः कलशद्वये यमाय नमः इति यमं सम्पूज्यार्घ्यं दत्वा 'आयङ्गौ' इति कृष्णौ पताकाध्वजौ समुच्छयेत् । यमाय बलिदानं च । नैऋति गत्वा कलशं स्थापयित्वा वरुणं सम्पूज्य नमः दुर्जयाय नमः इति पूजयेत् । तत्रैव निऋतये नमः इति निऋति सम्पूज्य ३ॐ 'मोषूषः, इति नीलवर्णौ पता काध्वजौ समुच्छयेत् । निऋतये सघृतकृष्णव्रीह्यन्नदानं च । पश्चिमद्वारे - गत्वा कलशद्वयं स्थापयित्वा तत्र 'अञ्जनाख्यदिग्गजाय नमः इति पूजयेत् । ऊर्ध्वं-द्वारश्रियै नमः अधः-देहल्य नमः । स्तम्भयोः नन्दने नमः । चण्डाय नमः । कलशद्वये देवायै नमः । ताप्यै नमः । सामवेदिनौ द्वारपालौ वृत्वा '३ॐ अग्न आयादि' इति पूजयेत् द्वारकलशयोः-वरुणाय नमः-इति वरुणं सम्पूज्यार्घ्यं दत्वा ३ॐ इमम्मे' इति श्वेतां पताकां श्वेतं ध्वजं च समुच्छयेत् । वरुणाय नवनो- तौदनबलिदान च । वायुकोणे गत्वा कलशं संस्थाप्य वरुण पूजयित्वा पुष्पदन्ताय नमः । सिद्धार्थाय नमः इति पुष्पदन्तसिद्धार्थौ वायवे नमः इति वायु च सम्पूज्य '३ॐ वायो येते' इति धूम्रां पताका धूम्रं ध्वजं च समुच्छयेत् । '३ॐ तववायवृहस्पते इति वायु सम्पूज्य यवौदनबलिं दद्यात् । उत्तरद्वारि गत्वा कलशद्वयं सस्थाप्य वरुणं पूजयित्वा सार्वभौमनामदिग्गणाय नमः- इति पूजयेत् । ऊर्ध्वं-द्वारश्रियै नमः । अध - देहल्यै नमः वामदक्षिणस्तम्भयोः—महाकालाय नमः अङ्गिणे नमः । द्वारकलशयो—वाण्यै नमः । वेण्ये नमः । अथर्ववेदिनौ द्वारपालौ वृत्वा ३ॐ शन्नोदेवी०' इति पूजयेत् । पुनः द्वारकलशयोः सोमाय नमः इति सोम सम्पूज्य '३ॐ आप्यायस्व' इत्यर्घं दद्यात् । '३ॐ वयर्ठ० सोम' इति हरितां पताकां हरितं ध्वज च समुच्छयेत् सोमाय प्रैयङ्गवबलिं दद्याच्च । ईशानकोणे गत्वा पूर्ववत्कलशं स्थापयित्वा वरुणं सम्पूज्य सुपतीकाय नमः । मङ्गलाय नमः-इति सुप्रतीकमङ्गलौ पूजयेत् । कलशे ईशानाय नमः इति इशानं सम्पूज्य '३ॐ तमीशानम्' श्वेतां पताकां ध्वजं च समुच्छयेत् । '३ॐ आमङ्गौः' इत्यनन्तं सम्पूज्य

माषभवलि दद्यात् । पश्चिमनैऋ्‌त्ययोर्मध्ये-ब्रह्मणे नम इति ब्रह्माणमावाह्य '३ॐ ब्रह्मयज्ञानम्' इति रक्तां पताकां ध्वजं च समुच्छ्रयेत् । अतेनैव मन्त्रेण ब्रह्माणं सम्पूज्य माषभक्तबलि दद्यात् । ततो मण्डपमध्ये— पञ्चवर्ण महाध्वजम् '३ॐ इन्द्रस्य वृष्णो' इति मन्त्रेण रोपयेत् । '३ॐब्रह्मयज्ञानम्' महाध्वजाय नम इति पूजयेच्च ।

## अथ प्रधानवेद्यां सर्वतोभद्रदेवतानामावाहनं पूजनं च

| | |
|---|---|
| ब्रह्मयज्ञानम् | ब्रह्मणे नमः |
| वयर्ठ० सोम | सोमाय |
| तमीशानम् | ईशानाय |
| त्रातारमिन्द्रम् | इन्द्राय |
| त्वन्नो अग्ने | अग्नये |
| यमायत्वाङ्गि | यमाय |
| असुन्वन्तमय | निऋ्‌तये |
| तत्वायामि | वरुणाय |
| आनो नियुद्भिः | वायवे |
| सुगावो देवाः | अष्टवसुभ्यः |
| रुद्राः सर्ठ०सृज्य | एकादशरुद्रेभ्यः |
| यज्ञो देवानाम् | द्वादशादित्येभ्यः |
| यावाङ्कशा | अश्विभ्यां |
| ओमासश्चर्ष-सपैतृकविश्वेभ्यो देवेभ्यः | |
| अभित्यन्देवर्ठ० स | सप्तयक्षेभ्यः |
| नमोऽस्तु सर्प | भूतनागेभ्यः |
| ऋताषाडऋ० | गन्धर्वाप्सरीभ्यः |
| यदक्रन्दः | स्कन्दाय |
| आशुःशिशानः | नन्दीश्वराय |
| यत्ते गात्रा | शूलाय |
| अवरुद्र मदीमहि | महाकालाय |
| अदितिर्द्यौः | दक्षादिसष्टगणेभ्यः |
| अम्बेऽअम्बिके | दुर्गायै |
| इदं विष्णुः | विष्णवे |
| पितृभ्यः स्वधायिभ्य | स्वधायै |
| परं मृत्यो | मृत्युरोगेभ्यः |
| गणानां त्वा | गणपतये |
| शन्नोदेवीः | अद्भ्यः |
| मरुतो यस्य | मरुद्भ्यः |
| स्योना पृथिवि | पृथिव्यै |
| पञ्चनद्यः | गङ्गादिनदीभ्यः |
| इमम्मे | सप्तसागरेभ्यः |
| परित्वा | मेरवे |

अतोऽग्रे नाममन्त्रेणैव स्थापनमुपलभ्यते —

३ॐ गदायै नमः । ३ॐ त्रिशूलाय । ३ॐ वज्राय । ३ॐ शक्तये । ३ॐ दण्डाय । ३ॐ खड्गाय । ३ॐ पाशाय । ३ॐ अंकुशाय । ३ॐ गौतमाय । ३ॐ विश्वामित्राय । ३ॐ जमदग्नये । ३ॐ वसिष्ठाय । ३ॐ अत्रये । ३ॐ अरुन्धत्यै । ३ॐ ऐन्द्रयै । ३ॐ कौमार्यै । ३ॐ ब्राह्मयै । ३ॐ चामुण्डायै । वैष्णव्यै । ३ॐ माहेश्वर्यै ।

ॐ वैनायक्यै । एता देवताः षोडशोपचारैः सम्पूज्य मध्ये कलश-स्थापनविधिना कलशं संस्थाप्य तदुपरि स्थाप्यदेव प्रतिमामग्न्युत्तारणप्राण प्रतिष्ठापूर्वक संस्थाप्य षोडशोचारैः सम्पूजयेत् । ततो ब्रह्मादिदेवेभ्यः —
'ॐ ब्रह्मणे नमः' पायसबलि समर्पयामि । एवं भूतैर्नामन्त्रैः पायसबलिं दद्यात् ।

## लिंगतोभद्रे विशेषः

ॐ असिताङ्गभैरवाय नमः ।
ॐ रुरुभैरवाय ।
ॐ चण्डभैरवाय ।
ॐ क्रोधभैरवाय ।
ॐ उन्मत्तभैरवाय ।
ॐ कपालभैरवाय ।
ॐ भीषणभैरवाय ।
ॐ सहारभैरवाय ।

एतत् अतिरिक्तानां देवानां रुद्रकल्पद्रुमादिषु न स्थापनमिति निर्विवादम् ।

## अथाग्निस्थापनम्

तत्रादौ पञ्चभूसंस्कारान् कुर्यात् । तद्यथा त्रिभिः कुशै प्राक्संस्थमुदकसंस्थं वा भूमिं त्रिः परिसमुह्य गोमयोदकाभ्यां प्राक्संस्थमुदक्स्थं वा भूमिं त्रिरुपलिप्य, स्रुवेण प्रागग्रप्रादेशमात्रमुत्तरोत्तरक्रमेण त्रिरुल्लिख्य, अनामिकाङ्गुष्ठेन प्रथम-रेखातः पांसूनुद्धृत्य वामहस्ते धृत्वा तथैव द्वितीयरेखातः पांसूद्धृत्य तानपि वामहस्ते कृत्वा तदैव तृतीयरेखातः समुद्धृत्य वामहस्ते कृत्वा तत्सर्वं दक्षिण-हस्तेन ईशान्यां प्रक्षिप्य, उदकेन नीचेन हस्तेनाभ्युक्ष्य तैजसेन पात्रयुग्मेन सम्पुटीकृतं प्रदीप्तं वह्वङ्गारग्निं स्वाभिमुखं मध्ये वाग्यतः-'ॐ अग्निं दूतम्' इति मन्त्रेण स्थापयेत् । तदुपरि तद्रक्षार्थं किञ्चित्काष्ठं निदध्यात् । मेखलासु—

| | |
|---|---|
| इदंविष्णुः | विष्णवे नमः |
| ब्रह्म यज्ञानम् | ब्रह्मणे नमः |
| इमा रुद्राय | रुद्राय नमः |
| योन्याम्—अम्बेऽअम्बि के | गौर्यै नमः |
| नाभौ—नाभिमे | नाभ्यधिष्ठातृदेवतायै नमः |
| कण्ठे—नीलग्रीवाः शितिकंठी | |

इत्यावाह्यथोपचारैः सम्पूजयेत् । 'ॐ चत्वारिशृङ्गा' इत्यग्निं पञ्चोपचारै पूजयेत् ।

## अथ ग्रहाणांमावाहनंपूजनं च

ऐशान्यां वस्त्राच्छादिते पीठे नवग्रहमण्डलं विलिख्य सूर्यादिनवग्रहान्-अधिदेवता प्रत्यधिदेवता पञ्चलोकपाल वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पाल सहितानावाहयेत् । तद्यथा -

| | |
|---|---|
| आ कृष्णेन | सूर्याय नमः |
| इमन्देवा | चन्द्रमसे |
| अग्निमूर्द्धा | भौमाय |
| उद्‍बुध्यस्वाग्ने | बुधाय |
| बृहस्पतेऽअति | बृहस्पतये |
| अन्नात्परिस्रुतः | शुक्राय |
| शन्नोदेवीः | शनिश्चराय |
| कयानश्चित्र | राहवे |
| केतु कृण्वन् | केतवे |

ततोऽधिदेवतास्थापनं ग्रहदक्षिणपार्श्वे-

| | |
|---|---|
| त्र्यम्बकं यजामहे | ईश्वराय |
| श्रीश्चते | उमायै |
| यदक्रन्दः | स्कन्दाय |
| विष्णोरराटमसि | विष्णवे |
| आ ब्रह्मन् | ब्रह्मणे |
| स योषा इन्द्र | इन्द्राय |
| यमायत्वाङ्गि | यमाय |
| कार्षिरसि | कालाय |
| चित्रावसो | चित्रगुप्ताय |

प्रत्यधिदेवतास्थापनं ग्रहवामपार्श्वे-

| | |
|---|---|
| अग्निदूतम् | अग्नये |
| आपोहिष्ठा | अद्भ्यः |
| स्योना पृथिवि | पृथिव्यै |
| इदं विष्णुः | विष्णवे |
| इन्द्र आसान्ने | इन्द्राय |
| अदित्यै रास्ना | इन्द्राण्यै |
| प्रजापतेनत्व | प्रजापतये |
| नमोऽस्तु | सर्पेभ्यः |
| ब्रह्मयज्ञानम् | ब्रह्मणे |

लोकपालानां स्थापनं ग्रहाणांमुत्तरे-

| | |
|---|---|
| गणानां त्वा | गणपतये |
| अम्बेअम्बिके | अम्बिकायै |
| वायोयेते | वायवे |
| घृतं घृतपावा | आकाशाय |
| यावाङ्कशा | अश्विभ्यां |
| वास्तोष्पते | वास्तोष्पतये |
| नहिस्पशम् | क्षेत्राधिपतये |

मण्डलस्य बाह्ये इन्द्रादिदशदिक्पालानामावहानम्—

| | |
|---|---|
| त्रातारमिन्द्र | इन्द्राय |
| त्वन्नो अग्ने | अग्नये |
| यमायत्वाङ्गि | यमाय |
| असुन्वन्त | निर्ऋतये |
| तत्त्वायामि | वरुणाय |
| अनोनियुद्भिः | वायवे |
| वयठं० सोम | सोमाय |
| तमीशानम् | ईशानाय |
| यस्मै रुद्रा | ब्रह्मणे |
| स्योना पृथिवि | अनन्ताय |

मनोजूतिरिति प्रतिष्ठाप्य षोडशोपचारैः संपूजयेत् । ततो ग्रहवेदो ईशाने कलश स्थापनविधिना रुद्रकलशं संस्थाप्य तत्र 'ॐ असंख्याता' इति मन्त्रेण असंख्या-रुद्रानावाह्य पूजयेत् ।

खण्डदीक्षितकृतपद्धतौ शेषादीनामप्यावाहनं तच्च सतिसंभवे एव कार्यं रुद्रकल्पद्रुमे तु नोक्तम्-ॐ शेषाय नमः रवे पूर्वे १ ॐ वासुकये नमः सोमपद्माय २ ॐ कर्कोटकाय नमः बुधोत्तरे ३ ॐ पद्माय नमः बृहस्पत्यग्रे ॐ महापद्माय नमः शुक्रत्तरे ५ ॐ शङ्खपालाय नमः शनिपश्चिमे ६ ॐ कालाय नमः राहुपुरतः ॐ कुलीशाय नम कुतपुरतः ८ वहिः पूर्वे ॐ अश्विन्यादिसप्तनक्षत्रेभ्यो नमः ९ तत्रैव ॐ विष्कुम्भादिसप्तयोगेभ्यो नमः १० तत्रैव ॐ ववबालवकरणाभ्यां नमः ११ तत्रैव ॐ सप्तद्वीपेभ्यो नमः १२ तत्रैव ॐ ऋग्वेदाय नमः १३ बहिर्दक्षिणे—ॐ पुष्यादिसप्तनक्षत्रेभ्यो नमः १४ दक्षिणे एव ॐ धृत्यादिसप्त-योगेभ्यो नमः १५ तत्रैव ॐ कौलवर्ततलरणाभ्यां नमः १६ तत्रैव ॐ सप्त-सागरेभ्यो नमः १७ तत्रैव ॐ यजुर्वेदाय नमः १८ पश्चिमे—ॐ स्वात्यादिसप्त-नक्षत्रेभ्यो नमः १९ तत्रैव-ॐ वज्रादिसप्तयोगेभ्यो नमः २० तत्रैव ॐ गरवणिजकरणाभ्यां नमः २१ तत्रैव—ॐ सप्तपातलेभ्यो नमः तत्रैव—ॐ सामवेदाय नमः २३ अथोत्तरे ॐ अभिजिदादिसनक्षत्रेस्यो नमः २४ ॐ साध्यादिषडयोगेभ्यो नमः २५ ॐ विष्टिकरणाय २६ नमः ॐ भूरादिसप्तलोकेभ्यो नमः २७ ॐ अथर्ववेदाय नमः २८ वायव्याम्—ॐ ध्रुवाय नमः २९ ॐ सप्तऋषिभ्यो नमः ३० ।

अथ यथावकाशम्-ॐ गङ्गादिनदीभ्यो नमः ३१ ॐ सप्तकुलाचलेभ्यो नमः ३२ ॐ अष्टवसुभ्यो नमः ३३ ॐ एकादशरुद्रेभ्यो नमः ३४ ॐ द्वादशादित्येभ्यो नमः ३५ ३५ ॐ एकोनपञ्चाशन्मरुद्भ्यो नमः ३६ ॐ षोडशमातृभ्यो नमः ३७ ॐ षड्ऋतुभ्यो नमः ॐ द्वादशनमासेभ्यो नमः ३९ ॐ दयनाभ्यां नमः ४० ॐ पञ्चदशतिथिभ्यो नमः ४१ ॐ षष्टिसंवत्स-रेभ्यो नमः ४२ ॐ सुपर्णेभ्यो नमः ४३ ॐ नागेभ्यो नमः ४४ सर्पेभ्यो नमः ४५ ॐ यक्षेभ्यो नमः ४६ ॐ गन्धर्वेभ्यो नमः ४७ ॐ विद्याधरेभ्यो नमः ४८ ॐ अप्सरेभ्यो नमः ४९ ॐ रक्षोभ्यो नमः ५० ॐ मनुष्येभ्यो नम ५१ इति संपूज्य प्रार्थयेत्—

यत्कृतं पूजनं देव भक्तिश्रद्धाविवर्जितम् ।
परिगृह्णन्तु तत्सर्वं सूर्याद्याग्रहनायकाः ॥ १ ॥
आदित्यादिग्रहाः सर्वे नानावर्णाः पृथग्विधाः ।
सुप्रसन्नाः प्रयच्छन्तु सौभाग्यं मम सर्वदा ॥ २ ॥

## अथ योगिनीपूजनम्

आग्नेय्यां पीठे रक्तवस्त्राच्छादिते पूर्वभागे त्रीणि त्र्यस्राणि विलिख्य तेषु कलशत्रयं विधिना संस्थाप्य तदुपरि सौवर्णीस्तिस्रः प्रतिमाः कृताग्न्युत्तारणः संस्थाप्य महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीरावाह्य षोडशोपचारैः संपूजयेत् । तदग्रे कोष्ठेषु वक्ष्यमाणा देवीरावाहयेत्—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तमीशानम् | गजाननायै नमः | अग्ने ब्रह्मगृ | स्वदंष्ट्रायै |
| आ ब्रह्मन् | सिंहमुख्यै | भग प्रणेतः | वानराननायै |
| महाँ इन्द्रः | गृध्रास्यायै | सुपर्णोऽसि | ऋक्षाक्ष्यै |
| सद्यो जातः | काकतुण्डिकायै | पितृभ्यः स्वधा | केकराक्ष्यै |
| आदित्यै | उष्ट्रग्रीवायै | यातेरुद्र शिवातनूर | बृहत्तुण्डायै |
| स्वर्णधर्मः | हयग्रीवायै | वरुणः प्राविता | सुराप्रियायै |
| सत्यञ्चमे | वाराह्यै | हठंऽसः शुचि | कपालहस्तायै |
| भायैदार्वाहा | शरभाननायै | सुसन्दृशन्त्वा | रक्ताक्ष्यै |
| जिह्वा मे | उलूकिकायै | प्रतिपदसि | शुक्यै |
| हिङ्काराय स्वाहा | शिवारावायै ( शिवारावाम् ) | देवीरापो अ | श्येन्यै |
| | | हविष्मतीरिमा | कपोतिकायै |
| अग्निश्च मे धर्म | मयूरायै | श्रीश्चते | पाशहस्तायै |
| पूषन्तव | विकटाननायै | भुवोयज्ञस्य | दण्डहस्तायै |
| वेद्या वेदिः | अष्टवक्त्रायै | कदाचनस्त | प्रचण्डायै |
| अयमग्निः सहस्रिणः | कोटराक्ष्यै | भद्रं कर्णेभिः | चण्डविक्रमायै |
| इम्ममे | कुब्जायै | इषे त्वोर्जेत्वा | शिशुघ्न्यै |
| यमायत्वा मखाय | विकटलोचनायै | देवीद्यावापृ | पापहन्त्र्यै |
| यमेन दत्तं | शुष्कोदर्यै | विश्वानि देव | काल्यै |
| मित्रस्य चर्ष | ललजिह्वायै | असुन्वन्तमय | रुधिरपायिन्यै |
| | ( ललजिह्वाम् ) | अग्निश्चमआ | वसोधयायै |

| | | | |
|---|---|---|---|
| बह्वीनां पिता | गर्भभक्षायै | विष्णोरराटनसि | तार्क्ष्यै |
| नमस्ते रुद्र | शवहस्तायै | ब्राह्मणमद्य | शोषणीदृष्ट्यै |
| ऋतश्च मे | आन्त्रमालिन्यै | आ नो भद्राः | कोटर्यै |
| ते आचर | स्थूलकेश्यै | एका च मे | स्थूलनासिकायै |
| वेद्या वेदिः | बृहत्कुक्ष्यै | ब्रह्माणि मे | विद्युत्प्रभायै |
| पावकानः | सर्पास्यायै | असङ्ख्याता | बलाकास्यै |
| अस्कन्नमच | प्रेतवाहिन्यै | अहिरिव | मार्जार्यै |
| तीव्रान्घो | दन्तशूककरायै | तिस्रस्त्रेधा | कटपूतनायै |
| महीद्यौः | क्रौञ्च्यै | सरस्वती योन्या | अट्टाहास्यै |
| उपयामगृहीतोसिव्वावि- | मृगशीर्षायै | इदं विष्णु | कामाक्ष्यै |
| आप्यायस्व | वृषाननायै | वृष्णऽऊर्मि | मृगाक्ष्यै |
| कार्षिरसि | व्यात्तास्यायै | मृगो न भीमः | मृगलोचनायै |
| त्र्यम्बकं यजामहे | धूमनिश्वासायै | | |
| अम्बे अम्बिके- | व्योमैकचरणीर्ध्वदृशे | | |

इत्यावाह्य षोडशोपचारैः संपूजयेत् ।

## अथ क्षेत्रपालपूजनम्

वायव्यां श्वेतवस्त्राच्छादिते पीठे चतुरस्रं विलिख्य तिर्यङ्मान्यां पार्श्वमान्यां च सूत्रद्वन्द्व समान्तरालं दद्यात् । एवं समानि नव कोष्ठानि संपद्यन्ते । मध्ये कोष्ठऽष्टदलं विलिख्य कलशं संस्थाप्य पूर्णपात्रे कृताग्न्युत्तारणं सौवर्ण क्षेत्रपालं ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यः' इत्यावाह्य स्थापयेत् । पूर्वादिकोष्ठेषु षट्सु षटदलानि सम्पाद्य, उत्तरेशानयोः कोष्ठयोस्तु सप्तदलानि कुर्यात् —

पूर्वकोष्ठे षट्सु दलेषु-

| | | | |
|---|---|---|---|
| इमौ ते पक्षा | अजराय नमः (अजरम्) | स न इन्द्राय | वरुणाय |
| प्रथमा वाम् | व्यापकाय | बाहु मे | वटुकाय |
| इन्द्रस्य वज्रः | इन्द्रचौराय | मुञ्चन्तु मा | विमुक्ताय |
| एवेदिन्द्रम् | इन्द्रमूर्तये | कुर्वन्नेवेह | लिप्तकाय |
| उक्षा समुद्रः | उक्ष्णे उक्षाणम् | सन्नः सिन्धु | नीललोकाय |
| यद्देवा देव | कूष्माण्डाय | नमो गणेभ्यः, | एकदंष्ट्राय |
| आग्नेयषट्सु दलेषु— | | दक्षिणषट्के— | |
| | | धर्मंभ्यो हस्ति | ऐरावताय |
| | | ओषधीः प्रति | ओषधीघ्नाय |

| | |
|---|---|
| त्र्यम्बकं यजामहे | बन्धनाय |
| देवसवितः | दिव्यकराय |
| सीसेन तन्त्रम् | कम्बलाय |
| आशुः शिशानो | भीषणाय |

नैर्ऋत्यषट्के—

इमं०॰ साहस्रम्—गवयाय ( गवयम् )

| | |
|---|---|
| कुम्भो वनिष्ठुः | घण्टाय |
| आक्रन्दयबल | व्यालाय |
| इन्द्रा याहि | अंशवे |
| चन्द्रमा अप्स्व | चन्द्रवारणाय ( चन्द्रवारणम् ) |
| गणानात्वा | घटाटोपाय |

पश्चिमे षट्सु दलेषु—

| | |
|---|---|
| उग्रं लोहि | जटिलाय |
| पवित्रेण पुनोहि | क्रतवे |
| आजिघ्र | घण्टेश्वराय |
| वायो शुक्रः | विकटाय |
| दैव्या होतारा | मणिमानाय |
| त्रीणि त आहुः | गणबन्धाय |

वायव्यादिकोष्ठे षटसु दलेषु क्रमेण—

| | |
|---|---|
| प्रतिश्रुत्काया | मुण्डाय |
| शुद्धवालः सर्व | बर्बूंकराय |
| वनस्पते वीड्व | सुधापाय |
| सुपर्णं वस्ते | वैनाय ( वैनम् ) |
| अग्ने अच्छा | पवनाय |
| भद्रं कर्णेभिः | ढुण्ढकरणाय |

उत्तरादिकोष्ठे सप्तसु दलेषु—

| | |
|---|---|
| अपां फेनेन | स्थविराय |
| वात प्राणेना | दन्तुराय |
| इद० हविः | धनदाय |
| खड्गो वैश्व | नागकर्णाय |
| मृगो न भीमः | महाबलाय |
| इन्दुर्दक्षः | फेत्काराय |

ईशानादिसप्तदलेषु क्रमेण—

| | |
|---|---|
| तीव्रान्घोषान् | सिंहाय |
| अग्निन्दूतम् | मृगाय |
| अदित्यास्त्वा | यक्षाय |
| द्यौस्ते पृथि | मेघवाहनाय |
| सर्बहिरङ्क्ता | तीक्ष्णाय |
| पवमानः सोऽद्य | अमलाय |
| अभ्यर्षत | शुक्राय |

इत्यजरादिक्षेत्रपालानावाह्यमनोजूर्तिरिति प्रतिष्ठाप्य षोडशोपचारैः संपूज्येत् ।

## अथ कुशकण्डिकादिप्रयोगः

अग्नेर्दक्षिणतो ब्रह्मासनम् । तत्र ब्रह्मोपवेशनम् । अग्नेरुत्तरतः प्रागग्रैः कुशैः प्रणीतासंस्कारार्थमेकमासनम्, प्रणीताप्रणयनार्थं च द्वितीयमासनं कल्पयित्वा, प्रणीतापत्रं पुरतः कृत्वा वारिणा परिपूर्य दर्भैराच्छाद्य ब्रह्मणो मुखमवलोक्य

प्रथयासने निधाय द्वितीयासने निदध्यात्। ततो ऽग्न्यायतनस्य समन्ताद्द्वादशाङ्गुलं स्थलं त्यक्त्वा प्रागग्रैरुदगग्रैश्च त्रिभिस्त्रिभिश्चतुर्भिर्वा कुशैरग्नेः परिस्तरणम्।

तद्यथा—आग्नेयादीशानान्तम्। ब्रह्मणोऽग्निपर्यन्तम्। नैऋत्याद्वायव्यान्तम्। अग्नितः प्रणीतापर्यन्तम्। इतरथावृत्तिः। तत पात्रासादनार्थं कुशानास्तीर्य तत्र अर्थवन्ति वस्तूनि अग्नेः पश्चिमतः प्राक्संस्थानि प्राग्बिलानि उदग्राणि, उत्तरतश्चेत् उदक्संस्थानि उदग्बिलानि प्रागग्राणि कार्यक्रमेणासादयेत्। पवित्रच्छेदनानि त्रीणि कुशतरुणानि, द्वे पवित्रे साग्रे अनन्तर्गर्भे, प्रोक्षणीपात्रम्, आज्यस्थाली, सम्मार्जय कुशास्त्रयः पञ्च वा, उपयमनकुशाः सप्त नव वा, समिधस्तिस्रः, स्रुवः, आज्यम्, पूर्णपात्रम्, कर्मोपयोगिनी दक्षिणा एतान्यासादयेद्। अन्येषां चोपकल्पनीयानां द्रव्याणामासादनम्। द्वौ कुशौ वामहस्ते कृत्वा तत्र कुशत्रयं च वामेन गृहीत्व छिन्द्यात् कुशत्रयं त्यजेत् एव प्रच्छिद्य प्रादेशमात्रे पवित्रे कुर्यात्। तत्र ग्रन्थि कुर्यादविश्लेषाय। प्रोक्षणीपात्रं प्रणीतासमीपे निधाय तत्र सपवित्रे करेण प्रणीतोदमासिच्य हस्तद्वयस्यानामिमाङ्गुष्ठाभ्यां घृतपवित्राभ्यामप उत्पूय पवित्रे प्रोक्षणीषु निधाय तत्पात्रं वामस्ते कृत्वा दक्षिणहस्तेनोदिङ्गनम्। प्रणीतोदकेन प्रोक्षणम्। पवित्राभ्यां प्रोक्षण्युदकेन आज्यस्थाल्याः प्रोक्षणम्। सम्मार्जनकुशानां प्रोक्षणम्। उपयमनकुशानां प्रो०। तिसृणां समिधां प्रो०। स्रुवस्य प्रो०। पूर्णपात्रस्य प्रो०। दक्षिणायाः प्रो०। उपकल्पनीयानां द्रव्याणां प्रोक्षणम्। ततः सपवित्रं प्रोक्षणीपात्रम्। अग्निप्रणीतयोर्मध्येस्थापयेत्। आज्यस्थाल्यामाज्यनिर्वापः। चरुस्थाल्यां प्रणीतोदकासेकपूर्वकंतण्डुलप्रक्षेपः। अग्नौ दक्षिणत आज्याधिश्रयणम्। अर्धश्रिते चरौ ज्वलदुल्मुकेनोभयोः पर्यग्निकरणम्। उल्मुक वह्नौ प्रक्षिप्य इतरथावृत्तिं कुर्यात्। दक्षिणहस्तेन अधोबिलं स्रुव प्राञ्चं प्रतप्य सव्ये पाणौ उत्तानं कृत्वा दक्षिणेन सम्मार्जनकुशानाममग्रैर्मूलतोऽग्रपर्यन्तं प्राञ्चं मसम्मृज्य कुशमूलैरधस्ताद्भागे स्रुवपुष्करस्य अग्रमारभ्य मूलपर्यन्तं प्रत्यञ्चं सम्मृज्य सम्मार्जन कुशान् अग्नौ प्रक्षिपेत्। ततः प्रणीतोदकेन स्रुवमभ्युक्ष्य पुनः प्रतप्य आत्मनो दक्षिणतो निदध्यात्। आज्यमुत्तार्य उत्तरतः स्थापयित्वा अग्नेः पश्चाद्

आनयेत् । चरोरुद्वासनम् । अग्नेरुत्तरत एवाज्यस्य प्रदक्षिणीकृत्य आज्यस्योत्तरतश्चरुं स्थापयेत् । अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां पवित्राभ्यामाज्यमुत्पूय अवेक्ष्य, अपद्रव्यनिरसनं कृत्वा प्रोक्षणीश्च पूर्ववत् उत्पूय तासु धृत्वा उपयमनकुशानादाय वामकरे कृत्वा तिस्रो घृताक्ताः प्रागग्राः समिधो मूलमध्ययोर्मध्यभागेन धृत्वा आदध्यात् । ततः प्रोक्षण्युदकेन सपवित्रेण दक्षिणचुलुकगृहीतेन ईशानाद्युत्तरपर्यन्तं संप्रोक्ष्य इतरथावृत्ति च कृत्वा पवित्रे प्रणतीतासु निदध्यात् ।

ततोऽमुकनामाग्नै सुप्रतिष्ठितो भव इति प्रतिष्ठाप्य—

ॐ अग्निं प्रज्वलितं वन्दे' ।

इत्यादि श्लोकैर्ध्यायेत् ।

'ॐ चत्वारि श्रृङ्गा, इति मन्त्रेणाग्निं संपूज्य आधाराज्यभागौ हुत्वा त्याग कृत्वा सूर्यादि ग्रहाणाम् अधिदेवताप्रत्यधिदेवता-पञ्चलोकपाल-दशदिक्पालदेवतानां च समित्तिलचर्वाज्यद्रव्यैरष्टोत्तरशतमष्टाविंशतिमष्टौ वा जुहुयात् । ततः चतुः षष्टियोगिनीनां क्षेत्रपालानां च ब्रह्मादिमण्डलदेवतानां च तत्तन्मन्त्रैराज्यहोमः । अग्निपूजनम् । स्विष्टकृद्धोमः । ततो भूरादिनवाहुतयः । इन्द्रादिदशदिक्पालेभ्यः सूर्यादिनवग्रहेभ्यश्च बलिदानम् ।

क्षेत्रपालबलिदानम्—ततः ॐ पूर्णाहुत्यै नमः' इति संपूज्य पूर्णाहुतिं जुहुयात् । तत्र मन्त्राः ॐ समुद्रादूर्मिः । वयन्नाम । चत्वारि श्रृङ्गा । त्रिधाहितम् । एता अर्षन्ति । सम्यक् स्रवन्ति । सिन्धोरिव । अभिप्रवन्त । कन्या इव । अभ्यर्षत । धामन्ते । पुनत्वा । सप्तते । मूर्द्धानदिवः । पूर्णादर्वि । ततो वसोर्द्धारां जुहुयात् । तत्र मन्त्राः—सप्तते । शुक्रज्योतिश्च । ईदृङ् चान्याद्द । ऋतश्च सत्यश्च । ऋतजिच्च । ईदृक्षा स एता । स्वतवांश्च । इन्द्रन्दैवीः । इमर्ठंस्तन । घृतम्मिमिक्षे । वसो पवित्रम् । वाजश्चेत्यारभ्य वेट स्वाहा ।

ॐ अग्नेनय-इत्याग्निम् प्रदक्षिणीकृत्य पश्चिमदिशि उपविश्य प्रार्थयेत्—

ॐ जितं ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ।
नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुषपूर्वज ॥ १ ॥
नमो हिरण्यगर्भाय प्रधानाध्यक्षरूपिणे ।
ॐ नमो वासुदेवाय शुद्धज्ञानस्वरूपिणे ॥ २ ॥

देवास्तवनं दानवानां च सामान्यमधिदैवत ।
सर्वदा चरणद्वन्द्वं व्रजामि शरणं तव ॥ ३ ॥
एकस्त्विभसि लोकस्य स्रष्टः संहारकस्तथा ।
अध्यक्षचानुमन्ता च गुणमाया समावृत ॥ ४ ॥
संहारसागरं घोरमनन्तक्लेशभाजनम् ।
त्वामेवशरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनीषिणः ॥ ५ ॥
न ते रूप न चाकारो नायुधानि न चास्पदम् ।
तथापि पुरुषाकारो भक्तानां त्वं प्रकाश से ॥ ६ ॥
नैवकिञ्चित्परोक्ष ते प्रत्यक्षोऽपि न कस्यचित् ।
नैव किञ्चिदसाध्यं ते न च साध्योऽसि कस्य चित् ॥ ७ ॥
नैव किञ्चिदसिद्धं ते न च सिद्धोऽसि पावकः ।
कार्याणां कारणं पूर्वं वचसां वाक्यनुत्तमम् ॥ ८ ॥
योगिनां परमासिद्धिः परमं ते परं विदुः ।
अह भीतोऽस्मि देवेश संसारेऽस्मिन् भयप्रद ॥ ९ ॥
त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष न जाने परमं पदम् ।
कालेष्वपि च सर्वेषु दिक्षु सर्वासु चाच्युत ॥ १० ॥
शरीरे जगतो वापि वर्द्धते मे महद्भयम् ।
त्वत्पादकमलादन्यत् मम जन्मान्तरेष्वपि ॥ ११ ॥
विज्ञानं यदिदं प्राप्तं यदिदं स्थानमर्चितम् ।
जन्मान्तरेऽपि मे देव माभूदुस्य परिग्रहः ॥ १२ ॥
दुर्गतावपि जातस्य त्वद्गती मे मनोरथः ।
यदि नाशं न विन्देय तावद स्म कृतो सदा ॥ १३ ॥
अकालकलुषं चित्तं मम ते पादयोः स्थितम् ।
कामये विष्णुपादौ तु सर्वजन्मसु केवलम् ॥ १४ ॥
ततः स्रुवेण भस्मानीय त्र्यायुषञ्जमदग्नेः' इति ललाटे । 'कश्यपस्य त्र्यायुषम्' इति ग्रीवायाम् । 'यद्देवेषु त्र्यायुषम्' दक्षिणांसे । तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्' इति हृदि । संस्रवप्राशनम् । आचमनम् । पवित्राभ्यां

मार्जनम् । अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः । ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम् । अग्नेः पश्चिमतः प्रणीताविमोकः । 'आपः शिवा' इत्युपयमनकुशानामाग्नौ प्रक्षेपः ।

ततः आचार्यः 'कृतस्य सग्रहमखामुकयागस्य कर्मणो यजमाना श्रेयो दानं करिष्ये' ।

शिवा आपः सन्तु' इति जलम् ।

'सौमनस्यामस्तु' इति पुष्पम् ।

अक्षतं चारिष्टं चास्तु इत्यक्षतान् ।

यह संकल्प करे ।

आचार्यो जलाक्षतपूगीफलमादाय भवन्नियोगेन मया अस्मिन् सग्रहमखामुकयागे कर्मणि यत्कृतम् आचार्यत्वं तथा एभिर्ब्राह्मणैः सह यत्कृतं ब्रह्मत्वं गाणपत्याद्युत्पन्नं श्रेयस्तदमुना साक्षतेन सजलेन पूगफलेन तुभ्यमहं सम्प्रददे ।

तदुत्पन्नेन श्रेयसा त्वं श्रेयोवान् भव ।

ततो यजमान आचार्यादीन् ब्राह्मणान् संपूज्य तेभ्यो दक्षिणां दद्यात् । ततो गन्धाद्युपचारैः प्रधानादिदेवानामुत्तरपूजां कुर्यात् ।

तत आचार्यादयो ब्राह्मणाः प्रधानादिकलशोदकेन दूर्वाकुशाम्रपल्लवैः सपरिवारं यजमानमभिषिञ्चेयुः ।

तत्र मन्त्राः—द्यौः शान्तिः । शिरो मे । जिह्वा मे । बाहू मे । पृष्ठोर्मे । नाभिर्मे । प्रतिक्षत्रे । देवस्य त्वा । विश्वानि देव । शिष्टाचारादत्रावभृथस्नानमिति केचित् । ब्राह्मणभोजनसङ्कल्पः । भूयसीदानम् । आवाहितदेवानां विसर्जनम् । तत्र मन्त्राः—उत्तिष्ठवनस्पते । यज्ञङ्गच्छ । यान्तु देवागणाः । गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ । चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च । अन्यथा शरणं नास्ति । आवाहनं न जानामि । जपच्छिद्रम् । प्रमादात्कुर्वताम् । यस्य स्मृत्या । ॐ विष्णवे नमो विष्णवे नमो विष्णवे नमः ।

तिलकाशीर्वाद मंत्रः—

श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते ।
धान्यं धनं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः ॥

## विष्णुयागादि यज्ञों में चतुर्वेदोक्तादि मंत्रों द्वारा

## योगिनी का स्थापन

( १ ) ऋग्वेद—तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥१॥ यजुर्वेद—तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पति धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ २ ॥ ( सामवेद ) आवो राजा ॥ नमध्व । रस्यरुद्राम् । हो । ता । राम । स । त्ययजाइम् । रोदसीयोः अग्निपु । रा । तनयि । त्नोरचित्तात् । हिरण्य । रू ॥ पा ३ मव । सा १४३ इ ॥ ३ ॥ अथर्ववेद—ईशां वो मरुतो देव अदित्यो ब्रह्मणस्पतिः । ईशां वा इन्द्रश्चाग्निश्च धाता मित्रः प्रजापतिः । ईशां व ऋषयश्च क्रूरमित्रेषु समीक्षयन्त्रदिते अर्बुदे तव ॥ ४ ॥ एह्येहि यज्ञेऽत्र गजानने त्वं सिन्दूरवर्णे गणपेऽनुकूले । रक्ताम्बरे रक्तविलोचने च गृहाण पूजां वरदे नमस्ते ॥ गजाननायै नमः—गजाननामावा० ॥ ५ ॥

( २ ) ऋग्वेद—ब्रह्मा देवानां पदवी कवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणाम् । श्येनो गृध्राणां स्वधितिर्वनानां सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥१॥ यजुर्वेद—आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥ २ ॥ ( सा० ) ब्रह्मा । ब्रा २३ ह्मा । जयानं प्रथमं । पुरस्तात् ॥ विसाइ । वा २३ इसी । मतः सुरुचोवेन आवः । सबू । सा२३ बू । न्धिया उपमा अस्य वा इ४ाः ॥ सताः । सा २३ ताः । चयोनिमसतश्च वा इ वा ३४३ । ओ २३४५ इ ॥ डा ॥ ३ ॥ स्वधितिर्वनानां सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥ अथर्ववेद—ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं

पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः । स बुध्न्याऽउपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः ।। ४ ।। आवाहये सिंहमुखी सुरूपां सर्वार्तिहन्त्री सकलार्थदात्रीम् । विद्युन्निभां सर्वजगत्प्रणम्यां रक्षाध्वरं नो वरदे नमस्ते ।। सिंहमुख्यै० सिंहमुखीमा० ।। ५ ।।

( ३ ) ऋग्वेद—महाँऽ इन्द्रो य ऽओजसा पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव । स्तोमैर्वत्सस्य वावृधे ।। १ ।। यजुर्वेद—महाँऽ इन्द्रो य ऽओजसा पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव । स्तोमैर्वत्सस्य वावृधे । उपयाम गृहीतोऽसि महेन्द्राय त्वैषते योनिर्महेन्द्राय त्वा ।। २ ।। ( सा. ) इन्द्र हाउ । इा हो इ । पर्वता बृहना रथा २ इना २३ वा ३ । ऊ ३४ पा ।। वामीर्हा उ । हा हो इ । इष आ वह तूँ सुवा २ इरा २३ वा ३ । ऊ ३४ पर ।। वीत् हाउ । हा हो इ । हव्यानध्वरे सुदा २ इ वा २ उवा ३ । ऊ ३४ पा ।। वर्द्धा हाउ । हा हो । थांगीर्भिरिडयामदा २० ता २ उवा ३ ।। ऊ ३२३४ पा ।। ३ ।। ( अ० ) महाँ इन्द्रो य ओजसा पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव । स्तोमैर्वत्सस्य वा वृधे ।।४।। एह्येहि गृध्रास्य इहामरेशि प्रचण्डदैतेय विमर्दने त्वम् । कुरु प्रसाद मयि देवि मातः पूजा त्वदर्था रचित्वा परेयन् ।। गृध्रास्यायै० गृध्रास्यामा०।।५।।

( ४ ) ऋग्वेद—कद्रुद्राय प्रचेतसे मीढुष्टमाय तव्यसे । वो चेम शंतमं हृदे ।। १ ।। यजुर्वेद—सद्योजातो व्यमिमीत यज्ञमग्निर्देवानामभवत्पुरोगाः । अस्य होतुः प्रदिश्यतस्य वाचि स्वाहा कृतᳬ हविरदन्तु देवाः ।। २ ।। ( सा. ) तद्वोहोवा ।। गाया २ सुताइसा २३४ चा । पुरुहूता । यसात्वा १ ना २ इ ।। शंयत् । हा । औ ३ होई । गा २२४ वा इ ।। ना २ गा २३४ औ हो वा ।। ए ३ । किने २३४५ ।। ३ ।। ( अ. देवस्य सवितुः सर्वे कर्म कृण्वन्तु मानुषाः । शं नो भवन्त्वप ओषधीः शिवा ।।४।। आवाहये त्वामिह काकतुण्डे यज्ञे चतुर्वेद भवे सदैव । कोष्ठे तुरीये वर्षति विधस्त्व पूजां तवाहं विदधे विनम्रः ।। काकतुण्डिकायै० काकतुण्डिकामा० ।। ५ ।।

( ५ ) ( ऋ० ) वपुर्न तच्चिकितुषे चिदस्तु समानं नाम धेनु पत्यमानम् । मर्तेष्वन्यद् दो ह से पीपाय सकृच्छुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः ।। १ ।।

( य० ) आदित्यं गर्भं पयसा समङ्ग्धि सहस्रस्य प्रतिमां विश्वरूपम् । परिवृङ्धि हरसा माभिमꣳस्थाः शतायुषं कृणुहि चीयमानः ॥ २ ॥ ( सा० ) उदुत्यम् । ओहाइ । जा । तवे २ दा २३४ साम् । देवं वहा । हीकेता २३४ वाः । दा २३४ र्शे हाइ । वा इश्वायसू । र्याम् । औ २२ हो वा । हो ५ इ ॥ डा ॥ ३ ॥ ( अ० कालो अश्वो वहति सप्तरश्मिः सहस्राक्षो अजरो भूरिरेताः । तमा रोहन्ति कवयो विपश्चितस्तस्य चक्रा भुवनानि विश्वा ॥ ४ ॥ यह्येहि यज्ञेऽत्र सरोजहस्ते कल्याणदे रक्तमुखोष्ट्रग्रीवे । कलापदण्डाब्जधरे प्रसीद विशाध्वरं नः सततं शुभाय ॥ उष्ट्रग्रीवायै० उष्ट्रग्रीवामा० ॥ ५ ॥

( ६ ) ( ऋ. ) इतो वा सातिमीहसे दिवो वा पार्थिवा दधि । इन्द्रं महो वा रजसः ॥ १ ॥ ( य. ) स्वर्ण घर्मः स्वाहा स्वर्णार्कः स्वाहा स्वर्ण शुक्रः स्वाहा स्वर्ण ज्योतिः स्वाहा स्वर्ण सूर्यः स्वाहा ॥ २ ॥ ( सा. ) अबोधिया ॥ ग्नाइः समिधाजना २ नाम् । प्रताइवे ३ नूम् । इवायती मुषासम् । यह्वाई ३ वा । प्रवा २ यामुञ्जिहाना ॥ प्रभाना २३ वाः । सस्रते नाकमच्छ । इडा २३ भा ३४३ । ओ २३४५ इ । डा । ३ ॥ ( अ. ) कुहू देवीं सुकृतं विद्मनायसमस्मिन् यज्ञे सुहवा जोहवीमि । सानो रयिं विश्ववारं नि यच्छाद्ददातु वीरं शतदायमुक्थ्यऽम् ॥ ४ ॥ एह्येहि यज्ञेऽत्र सुवाजिग्रीवे विशालनेत्रे भव भूतिकर्त्री । देवान्समावाहय हव्यकामान् गृहाण पूजां सततं नमस्ते । हयग्रीवायै० हयग्रीवामा० ॥ ५ ॥

( ७ ) ( ऋ० ) श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः । श्रद्धां भगस्य मूर्धनि वचसा वेदया मसि ॥ १ ॥ ( य. ) सत्यं च मे श्रद्धा च मे जगच्च मे धनं च मे विश्वं च मे महश्च मे क्रीडा च मे मोदश्च मे जातं च मे जनिष्यमाणं च मे सूक्तं च मे सुकृतं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२॥ ( सा. ) तु चेतुना । यता ३२ त्सु २३४ नाः द्राघीया र ३४ यूः जीवासा २ ३ । जादी २ त्यासा २ः ॥ समहसा रः । कृणो ३ ता ५ ॥ ना २३४५ ॥ ३ ॥ ( अ. ) वाताज्जातो अन्तरिक्षाद्विद्युतो ज्योतिषस्परि स नो हिरण्यजाः शंखः कृशनः पा त्वं हसः ॥ ४ ॥ एह्येहि वाराहि विशालरूपे

९३४ ॐ जितमन्यवे स्वाहा
९३५ ॐ भयापहाय स्वाहा
९३६ ॐ चतुरस्राय स्वाहा
९३७ ॐ गम्भीरात्मने स्वाहा
९३८ ॐ विदिशाय स्वाहा
९३९ ॐ व्यादिशाय स्वाहा
९४० ॐ दिशाय स्वाहा
९४१ ॐ अनादये स्वाहा
९४२ ॐ भुवे स्वाहा
९४३ ॐ भुवोलक्ष्म्यै स्वाहा
९४४ ॐ सुवीराय स्वाहा
९४५ ॐ रुचिराङ्गदाय स्वाहा
९४६ ॐ जननाय स्वाहा
९४७ ॐ जनजन्मादये स्वाहा
९४८ ॐ भीमाय स्वाहा
९४९ ॐ भीमपराक्रमाय स्वाहा
९५० ॐ आधानिलयाय स्वाहा
९५१ ॐ धात्रे स्वाहा
९५२ ॐ पुष्पहासाय स्वाहा
९५३ ॐ प्रजागराय स्वाहा
९५४ ॐ ऊर्ध्वगाय स्वाहा
९५५ ॐ सत्पथाचाराय स्वाहा
९५६ ॐ प्राणदाय स्वाहा
९५७ ॐ प्रणवाय स्वाहा
९५८ ॐ पणाय स्वाहा
९५९ ॐ प्रमाणाय स्वाहा
९६० ॐ प्राणनिलयाय स्वाहा
९६१ ॐ प्राणभृते स्वाहा
९६२ ॐ प्राणजीवनाय स्वाहा
९६३ ॐ तत्त्वाय स्वाहा
९६४ ॐ तत्त्वविदे स्वाहा
९६५ ॐ ऐकात्मने स्वाहा
९६६ ॐ जन्ममृत्युजरातिगाय स्वाहा
९६७ ॐ भूर्भुवः स्वस्तरवे स्वाहा
९६८ ॐ ताराय स्वाहा
९६९ ॐ सवित्रे स्वाहा
९७० ॐ प्रपितामहाय स्वाहा
९७१ ॐ यज्ञाय स्वाहा
९७२ ॐ यज्ञपतये स्वाहा
९७३ ॐ यज्वने स्वाहा
९७४ ॐ यज्ञाङ्गाय स्वाहा
९७५ ॐ यज्ञवाहनाय स्वाहा

९७६ ॐ यज्ञभृते स्वाहा
९७७ ॐ यज्ञकृते स्वाहा
९७८ ॐ यज्ञिने स्वाहा
९७९ ॐ यज्ञभुजे स्वाहा
९८० ॐ यज्ञसाधनाय स्वाहा
९८१ ॐ यज्ञान्तकृते स्वाहा
९८२ ॐ यज्ञगुह्याय स्वाहा
९८३ ॐ अन्नाय स्वाहा
९८४ ॐ अन्नादाय स्वाहा
९८५ ॐ आत्मयोनये स्वाहा
९८६ ॐ स्वयंजाताय स्वाहा
९८७ ॐ वैखानाय स्वाहा
९८८ ॐ सामगायनाय स्वाहा
९८९ ॐ देवकीनन्दनाय स्वाहा
९९० ॐ स्रष्ट्रे स्वाहा
९९१ ॐ क्षितीशाय स्वाहा
९९२ ॐ पापनाशनाय स्वाहा
९९३ ॐ शङ्खभृते स्वाहा
९९४ ॐ नन्दकिने स्वाहा
९९५ ॐ चक्रिणे स्वाहा
९९६ ॐ शार्ङ्गधन्वने स्वाहा
९९७ ॐ गदाधराय स्वाहा
९९८ ॐ रथाङ्गपाणये स्वाहा
९९९ ॐ अक्षोभ्याय स्वाहा
१००० ॐ सर्वप्रहरणायुधाय स्वाहा

# अथ लक्ष्मीसहस्रनामावली स्वाहाकारः

विनियोगः

अस्य श्रीमहालक्ष्मीसहस्रनामस्तोत्र महामन्त्रस्य श्रीमहाविष्णुर्भगवान् ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहालक्ष्मीर्देवता, श्रीं बीजम्, ह्रीं शक्तिः, ह्रैं कीलकम् श्रीमहालक्ष्मीप्रसादसिद्ध्यर्थे होमे ( पूजने ) विनियोगः ।

ध्यानम्–

या:सा पद्मासनस्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी
गम्भीरावर्तनाभिस्तनभरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया ।
लक्ष्मीर्दिव्यैर्गजेन्द्रैर्मणिगणखचितैः स्नापिता हेमकुम्भै-
र्नित्यं सा पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमाङ्गल्ययुक्ता ॥१॥

अरुणकमलसंस्था तद्रजः पुञ्जवर्णा
करकमलधृतेष्टाभीतियुग्माम्बुजा च ।
मणिमुकुटविचित्रालङ्कृताकल्पजालै-
र्भवतु भुवनमाता सन्ततं श्रीः श्रियै नः ॥२॥

१ ॐ श्रियै स्वाहा
२ ॐ वासुदेवमहिष्यै स्वाहा
३ ॐ पुंप्रधानेश्वरेश्वर्यै स्वाहा
४ ॐ अचिन्त्यानन्तविभवायै स्वाहा
५ ॐ भावाभावविभाविन्यै स्वाहा
६ ॐ अहंभावात्मिकायै स्वाहा
७ ॐ पद्मायै स्वाहा
८ ॐ शान्तानन्तजितात्मिकायै स्वाहा

९ ॐ ब्रह्मभावगतायै स्वाहा
१० ॐ त्यक्तभीत्यै स्वाहा
११ ॐ सर्वजगन्मय्यै स्वाहा
१२ ॐ षाड्गुण्यपूर्णायै स्वाहा
१३ ॐ त्रय्यन्तरूपायै स्वाहा
१४ ॐ आत्मानपगामिन्यै स्वाहा
१५ ॐ एकयोग्यायै स्वाहा
१६ ॐ अशून्यभावाकृत्यै स्वाहा
१७ ॐ तेजःप्रभाविन्यै स्वाहा
१८ ॐ भाव्याभावकभावायै स्वाहा
१९ ॐ आत्मभाव्यायै स्वाहा
२० ॐ कामदुहे स्वाहा
२१ ॐ आत्मभुवे स्वाहा
२२ ॐ भावाभावमय्यै स्वाहा
२३ ॐ दिव्यायै स्वाहा
२४ ॐ भेद्यभेदकभावगायै स्वाहा
२५ ॐ जगत्कुटुम्बिन्यै स्वाहा
२६ ॐ अखिलाधारायै स्वाहा
२७ ॐ कामविजृम्भिण्यै स्वाहा
२८ ॐ पञ्चकृत्यकर्यै स्वाहा
२९ ॐ पञ्चशक्तिमय्यै स्वाहा
३० ॐ आत्मवल्लभायै स्वाहा
३१ ॐ भावाभावानुगायै स्वाहा
३२ ॐ सर्वसम्मतायै स्वाहा
३३ ॐ आत्मोपगूहिन्यै स्वाहा
३४ ॐ अपृथक्चारिण्यै स्वाहा
३५ ॐ सौम्यायै स्वाहा
३६ ॐ सौम्यरूपायै स्वाहा
३७ ॐ अव्यवस्थितायै स्वाहा
३८ ॐ आद्यन्तरहितायै स्वाहा
३९ ॐ देव्यै स्वाहा
४० ॐ भवभाव्यस्वरूपिण्यै स्वाहा
४१ ॐ महाविभूत्यै स्वाहा
४२ ॐ समतां गतायै स्वाहा
४३ ॐ ज्योतिर्गणेश्वर्यै स्वाहा
४४ ॐ सर्वकार्यकर्यै स्वाहा
४५ ॐ धर्मस्वभावायै स्वाहा
४६ ॐ आत्माग्रतःस्थितायै स्वाहा
४७ ॐ आज्ञासमविभक्ताङ्ग्यै स्वाहा
४८ ॐ ज्ञानानन्दक्रियामय्यै स्वाहा
४९ ॐ स्वातन्त्र्यरूपायै स्वाहा
५० ॐ देवोरःस्थितायै स्वाहा
५१ ॐ तद्धर्मधर्मिण्यै स्वाहा
५२ ॐ सर्वभूतेश्वर्यै स्वाहा

५३ ॐ सर्वभूतमात्रे स्वाहा
५४ ॐ आत्ममोहिन्यै स्वाहा
५५ ॐ सर्वाङ्गसुन्दर्यै स्वाहा
५६ ॐ सर्वव्यापिन्यै स्वाहा
५७ ॐ प्राप्तयोगिन्यै स्वाहा
५८ ॐ विमुक्तिदायिन्यै स्वाहा
५९ ॐ भक्तगम्यायै स्वाहा
६० ॐ संसारतारिण्यै स्वाहा
६१ ॐ धर्मार्थवादिन्यै स्वाहा
६२ ॐ व्योमनिलयायै स्वाहा
६३ ॐ व्योमविग्रहायै स्वाहा
६४ ॐ पञ्चव्योमपद्यै स्वाहा
६५ ॐ रक्षव्यावृत्यै स्वाहा
६६ ॐ प्राप्यपूरिण्यै स्वाहा
६७ ॐ आनन्दरूपायै स्वाहा
६८ ॐ सर्वाप्तशालिन्यै स्वाहा
६९ ॐ शक्तिनायिकायै स्वाहा
७० ॐ हिरण्यवर्णायै स्वाहा
७१ ॐ हैरण्यप्राकारायै स्वाहा
७२ ॐ हेममालिन्यै स्वाहा
७३ ॐ प्रस्फुरन्तायै स्वाहा
७४ ॐ भद्रहोमायै स्वाहा
७५ ॐ वेशिन्यै स्वाहा
७६ ॐ रजतस्रजायै स्वाहा
७७ ॐ स्वाज्ञाकार्यमरायै स्वाहा
७८ ॐ नित्यसुरभ्यै स्वाहा
७९ ॐ व्योमचारिण्यै स्वाहा
८० ॐ योगक्षेमवहायै स्वाहा
८१ ॐ सर्वसुलभायै स्वाहा
८२ ॐ इच्छाक्रियात्मिकायैस्वाहा
८३ ॐ महाबसूहायै स्वाहा
८४ ॐ निखिलप्ररोहयै स्वाहा
८५ ॐ वेदनोच्चरायै स्वाहा
८६ ॐ विस्मयाधायिन्यै स्वाहा
८७ ॐ ब्रह्मसंहितायै स्वाहा
८८ ॐ सुगुणोत्तरायै स्वाहा
८९ ॐ प्रज्ञापरिमितायै स्वाहा
९० ॐ आत्मानुरूपायै स्वाहा
९१ ॐ सत्योपायार्जितायै स्वाहा
९२ ॐ मनोज्ञयायै स्वाहा
९३ ॐ ज्ञानगम्यायै स्वाहा
९४ ॐ नित्यमुक्तायै स्वाहा
९५ ॐ आत्मसेविन्यै स्वाहा
९६ ॐ कर्तृशक्त्यै स्वाहा

९७ ॐ सुगहनायै स्वाहा
९८ ॐ भोक्तृशक्त्यै स्वाहा
९९ ॐ गुणप्रियायै स्वाहा
१०० ॐ ज्ञानशक्त्यै स्वाहा
१०१ ॐ अनौपम्यायै स्वाहा
१०२ ॐ परशक्त्यै स्वाहा
१०३ ॐ निरामयायै स्वाहा
१०४ ॐ अकलङ्कायै स्वाहा
१०५ ॐ महाशक्त्यै स्वाहा
१०६ ॐ निराधारायै स्वाहा
१०७ ॐ विकासिन्यै स्वाहा
१०८ ॐ महामायायै स्वाहा
१०९ ॐ महानन्दायै स्वाहा
११० ॐ महानात्यै स्वाहा
१११ ॐ निराश्रयायै स्वाहा
११२ ॐ ए स्वरूपायै स्वाहा
११३ ॐ त्रिविधायै स्वाहा
११४ ॐ सख्यातीतायै स्वाहा
११५ ॐ निरजायै स्वाहा
११६ ॐ आत्मसत्तायै स्वाहा
११७ ॐ नित्यशुचये स्वाहा
११८ ॐ निर्विकल्पायै स्वाहा
११९ ॐ सुखोचितायै स्वाहा
१२० ॐ नित्यशान्तायै स्वाहा
१२१ ॐ निस्तरङ्गायै स्वाहा
१२२ ॐ निर्भिन्नायै स्वाहा
१२३ ॐ सर्वभेदिन्यै स्वाहा
१२४ ॐ असंकीर्णायै स्वाहा
१२५ ॐ अविधेयात्मने स्वाहा
१२६ ॐ निषदूष्यायै स्वाहा
१२७ ॐ सर्व[illegible]न्यै स्वाहा
१२८ ॐ निष्कामनायै स्वाहा
१२९ ॐ सर्व सायै स्वाहा
१३० ॐ अभेद्यायै स्वाहा
१३१ ॐ सर्वार्थसाधिन्यै स्वाहा
१३२ ॐ अनिर्देश्यायै स्वाहा
१३३ ॐ अपरिमितत्यै स्वाहा
१३४ ॐ निर्विकारायै स्वाहा
१३५ ॐ त्रिलक्षणायै स्वाहा
१३६ ॐ अभयङ्कर्यै स्वाहा
१३७ ॐ स्त्रीस्वरूपायै स्वाहा
१३८ ॐ अव्यक्तायै स्वाहा
१३९ ॐ सदसदाकृत्यै स्वाहा
१४० ॐ अप्रतर्क्यायै स्वाहा

१४१ ॐ अप्रतिहतायै स्वाहा
१४२ ॐ नियन्त्र्यै स्वाहा
१४३ ॐ यन्त्रवाहिन्यै स्वाहा
१४४ ॐ हार्दमूर्त्यै स्वाहा
१४५ ॐ महामूर्त्यै स्वाहा
१४६ ॐ अव्यक्तायै स्वाहा
१४७ ॐ विश्वगोपिन्यै स्वाहा
१४८ ॐ वर्धमानायै स्वाहा
१४९ ॐ अनवद्याङ्ग्यै स्वहा
१५० ॐ निरवद्यायै स्वाहा
१५१ ॐ त्रिवर्गदायै स्वाहा
१५२ ॐ अप्रमेयायै स्वाहा
१५३ ॐ अमृतदुघायै स्वाहा
१५४ ॐ कूटस्थायै स्वाहा
१५५ ॐ कुलनन्दिन्यै स्वाहा
१५६ ॐ अविनीतायै स्वाहा
१५७ ॐ तन्त्रसिद्धायै स्वाहा
१५८ ॐ योगसिद्धायै स्वाहा
१५९ ॐ अमरेश्वर्यै स्वाहा
१६० ॐ विश्वसूत्यै स्वाहा
१६१ ॐ तर्पयन्त्यै स्वाहा
१६२ ॐ नित्यतृप्तायै स्वाहा
१६३ ॐ महोषध्यै स्वाहा
१६४ ॐ शब्दाख्यायै स्वाहा
१६५ ॐ शब्दसहायै स्वाहा
१६६ ॐ कृतज्ञायै स्वाहा
१६७ ॐ कृतलक्षणायै स्वाहा
१६८ ॐ त्रिवर्तिन्यै स्वाहा
१६९ ॐ त्रिलोकस्थायै स्वाहा
१७० ॐ भूर्भुवः स्वरयो-
निजायै स्वाहा
१७१ ॐ अग्राह्यायै स्वाहा
१७२ ॐ अग्राहकायै स्वाहा
१७३ ॐ अनन्ताह्वयायै स्वाहा
१७४ ॐ सर्वातिशायिन्यै स्वाहा
१७५ ॐ व्योमपद्मायै स्वाहा
१७६ ॐ कृतधुरायै स्वाहा
१७७ ॐ पूर्णकामायै स्वाहा
१७८ ॐ महेश्वर्यै स्वाहा
१७९ ॐ सुवाच्यायै स्वाहा
१८० ॐ वाचिकायै स्वाहा
१८१ ॐ सत्यकथनायै स्वाहा
१८२ ॐ सर्वपालिन्यै स्वाहा
१८३ ॐ लक्ष्यमाणायै स्वाहा

१८४ ॐ लक्षयन्त्यै स्वाहा
१८५ ॐ जगज्ज्येष्ठायै स्वाहा
१८६ ॐ शुभावहायै स्वाहा
१८७ ॐ जगत्प्रतिष्ठायै स्वाहा
१८८ ॐ भुवनभर्त्र्यै स्वाहा
१८९ ॐ गूढ़प्रभाविन्यै स्वाहा
१९० ॐ क्रियायोगात्मिकायै
१९१ ॐ मूर्तायै स्वाहा
१९२ ॐ हृदब्जस्थायै स्वाहा
१९३ ॐ महाक्रमायै स्वाहा
१९४ ॐ परमदिवे स्वाहा
१९५ ॐ प्रथमजायै स्वाहा
१९६ ॐ परमाप्तायै स्वाहा
१९७ ॐ जगन्निधये स्वाहा
१९८ ॐ आत्मानपायिन्यै स्वाहा
१९९ ॐ तुल्यस्वरूपायै स्वाहा
२०० ॐ समलक्षणायै स्वाहा
२०१ ॐ तुल्यवृत्तायै स्वाहा
२०२ ॐ समवयसे स्वाहा
२०३ ॐ मोदमानायै स्वाहा
२०४ ॐ खगध्वजायै स्वाहा
२०५ ॐ तुल्यचेष्टायै स्वाहा
२०६ ॐ तुल्यशीलायै स्वाहा
२०७ ॐ वरदायै स्वाहा
२०८ ॐ कामरूपिण्यै स्वाहा
२०९ ॐ समग्रलक्षणायै स्वाहा
२१० ॐ अनन्तायै स्वाहा
२११ ॐ तुल्यभूत्यै स्वाहा
२१२ ॐ सनातनायै स्वाहा
२१३ ॐ महर्द्धयै स्वाहा
२१४ ॐ सत्यसङ्कल्पायै स्वाहा
२१५ ॐ भूमिजायै स्वाहा
२१६ ॐ परमेश्वर्यै स्वाहा
२१७ ॐ जगन्मात्रे स्वाहा
२१८ ॐ सूत्रवत्यै स्वाहा
२१९ ॐ भूतधात्र्यै स्वाहा
२२० ॐ यशस्विन्यै स्वाहा,
२२१ ॐ महाभिलाषायै स्वाहा
२२२ ॐ सावित्र्यै स्वाहा
२२३ ॐ प्रधानायै स्वाहा
२२४ ॐ सर्वभासिन्यै स्वाहा
२२५ ॐ नानावपुषे स्वाहा
२२६ ॐ बहुविधायै स्वाहा
२२७ ॐ सर्वज्ञायै स्वाहा

२२८ ॐ पुण्यकीर्तनायै स्वाहा
२२९ ॐ भूताश्रयायै स्वाहा
२३० ॐ हृषीकेशायै स्वाहा
२३१ ॐ अशोकायै स्वाहा
२३२ ॐ स्वाङ्गिवाहिकायै स्वाहा
२३३ ॐ ब्रह्मात्मिकायै स्वाहा
२३४ ॐ पुण्यजन्यै स्वाहा
२३५ ॐ सत्यकामायै स्वाहा
२३६ ॐ समाधिभुवे स्वाहा
२३७ ॐ हिरण्यगर्भायै स्वाहा
२३८ ॐ गम्भीरायै स्वाहा
२३९ ॐ गोधूल्यै स्वाहा
२४० ॐ कमलासनायै स्वाहा
२४१ ॐ जितक्रोधायै स्वाहा
२४२ ॐ कुमुदिन्यै स्वाहा
२४३ ॐ वैजयन्त्यै स्वाहा
२४४ ॐ मनोजवायै स्वाहा
२४५ ॐ धनलक्ष्म्यै स्वाहा
२४६ ॐ स्वस्तिकर्यै स्वाहा
२४७ ॐ राज्यलक्ष्म्यै स्वाहा
२४८ ॐ महासत्यै स्वाहा
२४९ ॐ जयलक्ष्म्यै स्वाहा
२५० ॐ महागोष्ठ्यै स्वाहा
२५१ ॐ मघोन्यै स्वाहा
२५२ ॐ माधवप्रियायै स्वाहा
२५३ ॐ पद्मगर्भायै स्वाहा
२५४ ॐ वेदवत्यै स्वाहा
२५५ ॐ विविक्तायै स्वाहा
२५६ ॐ परमेष्ठिन्यै स्वाहा
२५७ ॐ सुवर्णविन्दवे स्वाहा
२५८ ॐ महत्यै स्वाहा
२५९ ॐ महायोगिप्रियायै स्वाहा
२६० ॐ अनघायै स्वाहा
२६१ ॐ पद्मे स्थितायै स्वाहा
२६२ ॐ वेदमय्यै स्वाहा
२६३ ॐ कुमुदायै स्वाहा
२६४ ॐ जयवाहिन्यै स्वाहा
२६५ ॐ संहत्यै स्वाहा
२६६ ॐ निर्मितायै स्वाहा
२६७ ॐ ज्योतिषे स्वाहा
२६८ ॐ नियत्यै स्वाहा
२६९ ॐ विविधोत्सवायै स्वाहा
२७० ॐ रुद्रवन्द्यायै स्वाहा

२७१ ॐ सिन्धुमत्यै स्वाहा
२७२ ॐ वेदमात्रे स्वाहा
२७३ ॐ मधुव्रतायै स्वाहा
२७४ ॐ विश्वम्भरायै स्वाहा
२७५ ॐ हैमवत्यै स्वाहा
२७६ ॐ समुद्रायै स्वाहा
२७७ ॐ इच्छाविहारिण्यै स्वाहा
२७८ ॐ अनुकूलायै स्वाहा
२७९ ॐ यज्ञवत्यै स्वाहा
२८० ॐ शतकोट्यै स्वाहा
२८१ ॐ सुपेशलायै स्वाहा
२८२ ॐ धर्मोदयायै स्वाहा
२८३ ॐ धर्मसेव्यै स्वाहा
२८४ ॐ सुकुमार्यै स्वाहा
२८५ ॐ सभावत्यै स्वाहा
२८६ ॐ भीमायै स्वाहा
२८७ ॐ ब्रह्मस्तुतायै स्वाहा
२८८ ॐ मध्यप्रभायै स्वाहा
२८९ ॐ देवर्षिवन्दितायै-स्वाहा
२९० ॐ देवभोग्यायै स्वाहा
२९१ ॐ महाभागायै स्वाहा
२९२ ॐ प्रतिज्ञायै स्वाहा
२९३ ॐ पूर्णशेवध्यै स्वाहा
२९४ ॐ सुवर्णायै स्वाहा
२९५ ॐ रुचिरप्रदायै स्वाहा
२९६ ॐ भोगिन्यै स्वाहा
२९७ ॐ भोगदायिन्यै स्वाहा
२९८ ॐ वसुप्रदायै स्वाहा
२९९ ॐ उत्तमवध्वै स्वाहा
३०० ॐ गायत्र्यै स्वाहा
३०१ ॐ कमलोद्भवायै स्वाहा
३०२ ॐ विद्वत्प्रियायै स्वाहा
३०३ ॐ पद्मचिह्नायै स्वाहा
३०४ ॐ वरिष्ठायै स्वाहा
३०५ ॐ कमलेक्षणायै स्वाहा
३०६ ॐ पद्मप्रियायै स्वाहा
३०७ ॐ सुप्रसन्नायै स्वाहा
३०८ ॐ प्रमोदायै स्वाहा
३०९ ॐ प्रियपार्श्वगायै-स्वाहा
३१० ॐ विश्वभूषायै स्वाहा
३११ ॐ कान्तिमत्यै स्वाहा

३१२ ॐ कृष्णायै स्वाहा
३१३ ॐ वीणारवो-सुकायै-स्वाहा
३१४ ॐ रोचिष्कयैं स्वाहा
३१५ ॐ स्वप्रकाशायै स्वाहा
३१६ ॐ शोभमानायै स्वाहा
३१७ ॐ विहङ्गमायै स्वाहा
३१८ ॐ देवाङ्कस्थायै स्वाहा
३१९ ॐ परिणत्यैं स्वाहा
३२० ॐ कामवत्सायै स्वाहा
३२१ ॐ महात्मयैं स्वाहा
३२२ ॐ इन्वलायै स्वाहा
३२३ ॐ उत्पलनाभायै स्वाहा
३२४ ॐ आधिशमन्यै स्वाहा
३२५ ॐ वरवर्णिन्यै स्वाहा
३२६ ॐ स्वनिष्ठायैं स्वाहा
३२७ ॐ पद्मनिलयायै स्वाहा
३२८ ॐ सद्गत्यै स्वाहा
३२९ ॐ पद्मगन्धिन्यै स्वाहा
३३० ॐ पद्मवर्णायै स्वाहा
३३१ ॐ कामयोन्यै स्वाहा
३३२ ॐ चण्डिकायै स्वाहा
३३३ ॐ चारुकोपनायै स्वाहा
३३४ ॐ रतिस्नुषायैं स्वाहा
३३५ ॐ पद्मधरायै स्वाहा
३३६ ॐ पूज्यायै स्वाहा
३३७ ॐ त्रैलोक्यमोहिन्यै स्वाहा
३३८ ॐ नित्यकन्यायै स्वाहा
३३९ ॐ बिन्दुमालिन्यै स्वाहा
३४० ॐ अक्षयायै स्वाहा
३४१ ॐ सर्वमातृकायै स्वाहा
३४२ ॐ गन्धात्मिकायै स्वाहा
३४३ ॐ सुरसिकायै स्वाहा
३४४ ॐ दीप्तमूर्त्यैं स्वाहा
३४५ ॐ सुमध्यमायै स्वाहा
३४६ ॐ पृथुश्रोण्यै स्वाहा
३४७ ॐ सौम्यमुख्यै स्वाहा
३४८ ॐ सुभगायै स्वाहा
३४९ ॐ विष्टरश्रुत्यै स्वाहा
३५० ॐ स्मिताननायै स्वाहा
३५१ ॐ चारुगत्यै स्वाहा

३५२ ॐ निम्ननाभ्यै स्वाहा
३५३ ॐ महास्तन्यै स्वाहा
३५४ ॐ स्निग्धवेण्यै स्वाहा
३५५ ॐ भगवत्यै स्वाहा
३५६ ॐ सुकान्तायै स्वाहा
३५७ ॐ वामलोचनायै स्वाहा
३५८ ॐ पल्लवाङ्‌ध्यै स्वाहा
३५९ ॐ पद्ममनसे स्वाहा
३६० ॐ पद्मबोधायै स्वाहा
३६१ ॐ महाप्सरसे स्वाहा
३६२ ॐ सरस्वत्यै स्वाहा
३६३ ॐ चारुहासायै स्वाहा
३६४ ॐ शुभदृष्टयै स्वाहा
३६५ ॐ ककुद्मिन्यैं स्वाहा
३६६ ॐ कम्बुग्रीवायै स्वाहा
३६७ ॐ सुजघनायै स्वाहा
३६८ ॐ रक्तपाण्यै स्वाहा
३६९ ॐ मनोरमायै स्वाहा
३७० ॐ पद्मिन्यै स्वाहा
३७१ ॐ मन्दगमनायै स्वाहा
३७२ ॐ चतुर्दंष्ट्रायै स्वाहा
३७३ ॐ चतुर्भुजायै स्वाहा
३७४ ॐ शुभरेखायै स्वाहा
३७५ ॐ विलासभ्रुवे स्वाहा
३७६ ॐ शुकवाण्यै स्वाहा
३७७ ॐ कलावत्यै स्वाहा
३७८ ॐ ऋजुनासायै स्वाहा
३७९ ॐ कलरवायै स्वाहा
३८० ॐ वरारोहायै स्वाहा
३८१ ॐ तलोदर्यै स्वाहा
३८२ ॐ सन्ध्यायै स्वाहा
३८३ ॐ बिम्बाधरायै स्वाहा
३८४ ॐ पूर्वभाषिण्यै स्वाहा
३८५ ॐ श्रीसमाह्वयायै स्वाहा
३८६ ॐ इक्षुचापायै स्वाहा
३८७ ॐ सुमशरायै स्वाहा
३८८ ॐ दिव्यभूषायै स्वाहा
३८९ ॐ मनोहरायै स्वाहा
३९० ॐ वासव्यै स्वाहा
३९१ ॐ पाण्डरच्छत्रायै स्वाहा
३९२ ॐ करभोरवे स्वाहा
३९३ ॐ तिलोत्तमायै स्वाहा
३९४ ॐ सीमन्तिन्यै स्वाहा
३९५ ॐ प्राणशक्त्यै स्वाहा

३९६ ॐ विम्बीषिण्डयै स्वाहा
३९७ ॐ वसुधारिण्यै स्वाहा
३९८ ॐ भद्रायै स्वाहा
३९९ ॐ वयावहायै स्वाहा
४०० ॐ चन्द्रवक्त्रायै स्वाहा
४०१ ॐ कुटिलालकायै स्वाहा
४०२ ॐ चित्राम्बरायै स्वाहा
४०३ ॐ चित्रगन्धायै स्वाहा
४०४ ॐ रत्नमौलिसमुज्ज्वलायै स्वाहा
४०५ ॐ दिव्यायुधायै स्वाहा
४०६ ॐ दिव्यमाल्यायै स्वाहा
४०७ ॐ विशाखायै स्वाहा
४०८ ॐ चित्रवाहनायै स्वाहा
४०९ ॐ अम्बिकायै स्वाहा
४१० ॐ सिन्धुतनयायै स्वाहा
४११ ॐ निःश्रेण्यै स्वाहा
४१२ ॐ सुमहासिन्यै स्वाहा
४१३ ॐ सामप्रियायै स्वाहा
४१४ ॐ नम्रमूर्त्यै स्वाहा
४१५ ॐ सर्वसेव्यायै स्वाहा
४१६ ॐ वरप्रदायै स्वाहा
४१७ ॐ गन्धद्वारायै स्वाहा
४१८ ॐ दुराधर्षायै स्वाहा
४१९ ॐ नित्यपुष्टायै स्वाहा
४२० ॐ करीषिण्यै स्वाहा
४२१ ॐ देवजुष्टायै स्वाहा
४२२ ॐ दिव्यवर्णायै स्वाहा
४२३ ॐ दिव्यगन्धायै स्वाहा
४२४ ॐ सुकर्दमायै स्वाहा
४२५ ॐ अनन्तरूपायै स्वाहा
४२६ ॐ अनन्तस्थायै स्वाहा
४२७ ॐ सर्वदानन्तसङ्गमायै स्वाहा
४२८ ॐ यज्ञाशन्यै स्वाहा
४२९ ॐ महावृष्ट्यै स्वाहा
४३० ॐ सर्वपूज्यायै स्वाहा
४३१ ॐ वषट्क्रियायै स्वाहा
४३२ ॐ योगप्रियायै स्वाहा
४३३ ॐ वियन्नाभ्यै स्वाहा
४३४ ॐ अनन्तश्रियै स्वाहा
४३५ ॐ अतीन्द्रियायै स्वाहा
४३६ ॐ योगिसेव्यायै स्वाहा
४३७ ॐ सत्यरतायै स्वाहा

४३८ ॐ योगमायायै स्वाहा
४३९ ॐ पुरातन्यै स्वाहा
४४० ॐ सर्वेश्वर्यै स्वाहा
४४१ ॐ सुतरूण्यै स्वाहा
४४२ ॐ शरण्यायै स्वाहा
४४३ ॐ धर्मदेवतायै स्वाहा
४४४ ॐ सुतरायै स्वाहा
४४५ ॐ संवृतज्योतिषे स्वाहा
४४६ ॐ योगिन्यै स्वाहा
४४७ ॐ योगसिद्धिदायै स्वाहा
४४८ ॐ सृष्टिशक्त्यै स्वाहा
४४९ ॐ द्योतमानभूतायै स्वाहा
४५० ॐ मङ्गलदेवतायै स्वाहा
४५१ ॐ संहारशक्त्यै स्वाहा
४५२ ॐ प्रबलायै स्वाहा
४५३ ॐ निरुपाधये स्वाहा
४५४ ॐ परावरायै स्वाहा
४५५ ॐ उत्तारिण्यै स्वाहा
४५६ ॐ तारयन्त्यै स्वाहा
४५७ ॐ शाश्वत्यै स्वाहा
४५८ ॐ समितिञ्जयायै स्वाहा
४५९ ॐ महाश्रियै स्वाहा
४६० ॐ अजहत्कीर्त्यै स्वाहा
४६१ ॐ योगश्रियै स्वाहा
४६२ ॐ सिद्धिसाधन्यै स्वाहा
४६३ ॐ पुण्यश्रियै स्वाहा
४६४ ॐ पुण्यनिलयायै स्वाहा
४६५ ॐ ब्रह्मश्रियै स्वाहा
४६६ ॐ ब्राह्मणप्रियायै स्वाहा
४६७ ॐ राजश्रियै स्वाहा
४६८ ॐ राजकलितायै स्वाहा
४६९ ॐ फलश्रियै स्वाहा
४७० ॐ स्वर्गदायिन्यै स्वाहा
४७१ ॐ देवश्रियै स्वाहा
४७२ ॐ अद्भुतकथायै स्वाहा
४७३ ॐ वेदश्रियै स्वाहा
४७४ ॐ श्रुतिमार्गिण्यै स्वाहा
४७५ ॐ तमोपहायै स्वाहा
४७६ ॐ अव्ययनिधये स्वाहा
४७७ ॐ लक्षणायै स्वाहा
४७८ ॐ हृदयङ्गमायै स्वाहा
४७९ ॐ मृतसंजीविन्यै स्वाहा
४८० ॐ शुभ्रायै स्वाहा

४८१ ॐ चन्द्रिकायै स्वाहा
४८२ ॐ सर्वतोमुख्यै स्वाहा
४८३ ॐ सर्वोत्तमायै स्वाहा
४८४ ॐ मित्रविन्दायै स्वाहा
४८५ ॐ मैथिल्यै स्वाहा
४८६ ॐ प्रियदर्शनायै स्वाहा
४८७ ॐ सत्यभामायै स्वाहा
४८८ ॐ वेदवेद्यायै स्वाहा
४८९ ॐ सीतायै स्वाहा
४९० ॐ प्रणतपोषिण्यै स्वाहा
४९१ ॐ मूलप्रकृत्यै स्वाहा
४९२ ॐ ईशानायै स्वाहा
४९३ ॐ शिवदायै स्वाहा
४९४ ॐ दीपप्रदीपिन्यै स्वाहा
४९५ ॐ अभिप्रियायै स्वाहा
४९६ ॐ स्वैरवृत्त्यै स्वाहा
४९७ ॐ रुक्मिण्यै स्वाहा
४९८ ॐ सर्वसाक्षिण्यै स्वाहा
४९९ ॐ गान्धारिण्यै स्वाहा
५०० ॐ परगत्यै स्वाहा
५०१ ॐ तत्त्वगर्भायै स्वाहा
५०२ ॐ भवाभवायै स्वाहा
५०३ ॐ अन्तर्वत्यै स्वाहा
५०४ ॐ महामुद्रायै स्वाहा
५०५ ॐ विष्णुदुर्गायै स्वाहा
५०६ ॐ महाबलायै स्वाहा
५०७ ॐ मदयन्त्यै स्वाहा
५०८ ॐ लोकधारिण्यै स्वाहा
५०९ ॐ जदश्यायै स्वाहा
५१० ॐ सर्वनिष्कृत्यै स्वाहा
५११ ॐ देवसेनायै स्वाहा
५१२ ॐ आत्मफलदायै स्वाहा
५१३ ॐ वसुधायै स्वाहा
५१४ ॐ मुख्यमातृकायै स्वाहा
५१५ ॐ क्षीरधारायै स्वाहा
५१६ ॐ घृतमय्यै स्वाहा
५१७ ॐ जुह्वत्यै स्वाहा
५१८ ॐ यज्ञदक्षिणायै स्वाहा
५१९ ॐ योगनिद्रायै स्वाहा
५२० ॐ योगरतायै स्वाहा
५२१ ॐ ब्रह्मचर्यायै स्वाहा
५२२ ॐ दुरत्ययायै स्वाहा
५२३ ॐ सिंहपिच्छायै स्वाहा
५२४ ॐ महादुर्गायै स्वाहा

५२५ ॐ जयन्त्यै स्वाहा
५२६ ॐ खगवाहिन्यै स्वाहा
५२७ ॐ जगत्प्रियायै स्वाहा
५२८ ॐ विरूपाक्ष्यै स्वाहा
५२९ ॐ सुवर्णायै स्वाहा
५३० ॐ क्रूरतापिन्यै स्वाहा
५३१ ॐ कात्यायन्यै स्वाहा
५३२ ॐ कालरात्र्यै स्वाहा
५३३ ॐ निखिलदृष्ट्यै स्वाहा
५३४ ॐ कपालिकायै स्वाहा
५३५ ॐ त्रिशूलिन्यै स्वाहा
५३६ ॐ खड्गधरायै स्वाहा
५३७ ॐ महाकाल्यै स्वाहा
५३८ ॐ इन्द्रमालिन्यै स्वाहा
५३९ ॐ एकवीरायै स्वाहा
५४० ॐ भद्रकाल्यै स्वाहा
५४१ ॐ मौनव्यै स्वाहा
५४२ ॐ उल्लसद्गदायै स्वाहा
५४३ ॐ नारायण्यै स्वाहा
५४४ ॐ जगत्पूरिण्यै स्वाहा
५४५ ॐ उर्वरायै स्वाहा
५४६ ॐ द्रुहिणप्रसवे स्वाहा
५४७ ॐ यज्ञकामायै स्वाहा
५४८ ॐ लेलिहानायै स्वाहा
५४९ ॐ तीर्थकर्यै स्वाहा
५५० ॐ उग्रविक्रमायै स्वाहा
५५१ ॐ गरुत्मदुदयायै स्वाहा
५५२ ॐ अत्युग्रायै स्वाहा
५५३ ॐ वाराह्यै स्वाहा
५५४ ॐ मातृभाषिण्यै स्वाहा
५५५ ॐ अश्वक्रान्तायै स्वाहा
५५६ ॐ रथक्रान्तायै स्वाहा
५५७ ॐ विष्णुक्रान्तायै स्वाहा
५५८ ॐ उरुचारिण्यै स्वाहा
५५९ ॐ वैरोचिन्यै स्वाहा
५६० ॐ नारसिंह्यै स्वाहा
५६१ ॐ जीमूतायै स्वाहा
५६२ ॐ शुभेक्षणायै स्वाहा
५६३ ॐ दीक्षाविधायै स्वाहा
५६४ ॐ विश्वशक्त्यै स्वाहा
५६५ ॐ निजशक्त्यै स्वाहा
५६६ ॐ सुदर्शिन्यै स्वाहा
५६७ ॐ प्रतीत्यै स्वाहा
५६८ ॐ जगत्यै स्वाहा

५६९ ॐ वन्यधारिण्यै स्वाहा
५७० ॐ कलिनाशिन्यै स्वाहा
५७१ ॐ अयोध्यायै स्वाहा
५७२ ॐ अच्छिन्नसन्तानायै स्वाहा
५७३ ॐ महारत्नायै स्वाहा
५७४ ॐ सुखावहायै स्वाहा
५७५ ॐ राजवत्यै स्वाहा
५७६ ॐ अर्कप्रतिभायै स्वाहा
५७७ ॐ त्रिनयित्र्यै स्वाहा
५७८ ॐ महाशनायै स्वाहा
५७९ ॐ अमृतस्यन्दिन्यै स्वाहा
५८० ॐ सीमायै स्वाहा
५८१ ॐ यज्ञगर्भायै स्वाहा
५८२ ॐ समीक्षणायै स्वाहा
५८३ ॐ आकूत्यै स्वाहा
५८४ ॐ ऋग्यजुःसाम-घोषयै स्वाहा
५८५ ॐ आरामवधूत्सुकायै स्वाहा
५८६ ॐ सोमपायै स्वाहा
५८७ ॐ माधव्यै स्वाहा
५८८ ॐ नित्यकल्याण्यै स्वाहा
५८९ ॐ कमलार्चितायै स्वाहा
५९० ॐ योगरूढ्यै स्वाहा
५९१ ॐ स्वार्थजुष्टायै स्वाहा
५९२ ॐ वह्निवर्णायै स्वाहा
५९३ ॐ जितासुरायै स्वाहा
५९४ ॐ यज्ञविद्यायै स्वाहा
५९५ ॐ गुह्यविद्यायै स्वाहा
५९६ ॐ अध्यात्मविद्यायै स्वाहा
५९७ ॐ कृतागमायै स्वाहा
५९८ ॐ आप्यायिन्यै स्वाहा
५९९ ॐ कलातीतायै स्वाहा
६०० ॐ सुमित्रायै स्वाहा
६०१ ॐ परभक्तिदायै स्वाहा
६०२ ॐ काङ्क्षमाणायै स्वाहा
६०३ ॐ महामायायै स्वाहा
६०४ ॐ कोलकामायै स्वाहा
६०५ ॐ अमरावत्यै स्वाहा
६०६ ॐ सुवीर्यायै स्वाहा
६०७ ॐ दुःस्वप्नहरायै स्वाहा
६०८ ॐ देवक्यै स्वाहा
६०९ ॐ वसुदेवतायै स्वाहा

६१० ॐ सौदामिन्यै स्वाहा
६११ ॐ मेघरथायै स्वाहा
६१२ ॐ ऋद्धिदायै स्वाहा
६१३ ॐ दैत्यमर्दिन्यै स्वाहा
६१४ ॐ श्रेयस्कर्यै स्वाहा
६१५ ॐ चित्रलीलायै स्वाहा
६१६ ॐ एकाकिन्यै स्वाहा
६१७ ॐ रत्नपादुकायै स्वाहा
६१८ ॐ मनस्यमानायै स्वाहा
६१९ ॐ तुलस्यै स्वाहा
६२० ॐ रोगनाशिन्यै स्वाहा
६२१ ॐ उरुप्रदायै स्वाहा
६२२ ॐ तेजस्विन्यै स्वाहा
६२३ ॐ सुखोज्ज्वलायै स्वाहा
६२४ ॐ मन्दरेखायै स्वाहा
६२५ ॐ अमृतनाशिन्यै स्वाहा
६२६ ॐ ब्रह्मिष्ठायै स्वाहा
६२७ ॐ वाह्नशयन्यै स्वाहा
६२८ ॐ जुषमाणायै स्वाहा
६२९ ॐ गुणात्यायै स्वाहा
६३० ॐ कादम्बर्यै स्वाहा
६३१ ॐ ब्रह्मरतायै स्वाहा
६३२ ॐ विधात्र्यै स्वाहा
६३३ ॐ उज्ज्वलहस्तिकायै-स्वाहा
६३४ ॐ अक्षोभ्यायै स्वाहा
६३५ ॐ सर्वतोभद्रायै स्वाहा
६३६ ॐ वयस्यायै स्वाहा
६३७ ॐ स्वस्तिदक्षिणायै स्वाहा
६३८ ॐ सहस्रास्यायै स्वाहा
६३९ ॐ ज्ञानमात्रे स्वाहा
६४० ॐ वैश्वानर्यै स्वाहा
६४१ ॐ अक्षवर्तिन्यै स्वाहा
६४२ ॐ प्रत्यग्वरायै स्वाहा
६४३ ॐ वारणवत्यै स्वाहा
६४४ ॐ अनसूयायै स्वाहा
६४५ ॐ दुरासदायै स्वाहा
६४६ ॐ अरुन्धत्यै स्वाहा
६४७ ॐ कुण्डलिन्यै स्वाहा
६४८ ॐ भव्यायै स्वाहा
६४९ ॐ दुर्गतिनाशिन्यै स्वाहा
६५० ॐ मृत्युञ्जयायै स्वाहा
६५१ ॐ त्रासहरायै स्वाहा

६५२ ॐ निर्भयायै स्वाहा
६५३ ॐ शत्रुसूदिन्यै स्वाहा
७५४ ॐ एकाग्रायै स्वाहा
६५५ ॐ सुपुरन्त्र्यै स्वाहा
६५६ ॐ सुरपक्षायै स्वाहा
६५७ ॐ वरातुलायै स्वाहा
६५८ ॐ सकृद्विभासायै स्वाहा
६५९ ॐ प्रद्युम्नायै स्वाहा
६६० ॐ हरिभद्रायै स्वाहा
६६१ ॐ धुरन्धरायै स्वाहा
६६२ ॐ बिल्वप्रियायै स्वाहा
६६३ ॐ अवन्यै स्वाहा
६६४ ॐ चक्रहृदयायै स्वाहा
६६५ ॐ कम्बुतीर्थगायै स्वाहा
६६६ ॐ सर्वमन्त्रात्मिकायै स्वाहा
६६७ ॐ विद्युते स्वाहा
६६८ ॐ यशोदायै स्वाहा
६६९ ॐ सर्वाङ्गन्यै स्वाहा
६७० ॐ ध्वजच्छत्राश्रयायै स्वाहा
६७१ ॐ भूम्यै स्वाहा
६७२ ॐ वैष्णव्यै स्वाहा
६७३ ॐ सद्गुणोज्ज्वलायै स्वाहा
६७४ ॐ सुषेणायै स्वाहा
६७५ ॐ लोकविदितायै स्वाहा
६७६ ॐ कामसुवे स्वाहा
६७७ ॐ जगदादिभुवे स्वाहा
६७८ ॐ वेदान्तयोन्यै स्वाहा
६७९ ॐ जिज्ञासायै स्वाहा
६८० ॐ मनीषायै स्वाहा
६८१ ॐ समदर्शिन्यै स्वाहा
६८२ ॐ सहस्रशक्त्यै स्वाहा
६८३ ॐ आवृत्त्यै स्वाहा
६८४ ॐ सुस्थिरायै स्वाहा
६८५ ॐ श्रेयसान्निधये स्वाहा
६८६ ॐ रोहिण्यै स्वाहा
६८७ ॐ रेवत्यै स्वाहा
६८८ ॐ चन्द्रसोदर्यै स्वाहा
६८९ ॐ भद्रमोदिन्यै स्वाहा
६९० ॐ आर्यायै स्वाहा
६९१ ॐ गव्यप्रियायै स्वाहा
६९२ ॐ विश्वभाविन्यै स्वाहा

६९३ ॐ सुविभाविन्यै स्वाहा
६९४ ॐ सुपदृश्यायै स्वाहा
६९५ ॐ कामचारिण्यै स्वाहा
६९६ ॐ अप्रमत्तायै स्वाहा
६९७ ॐ ललन्तिकायै स्वाहा
६९८ ॐ जगद्योन्यै स्वाहा
६९९ ॐ मोक्षलक्ष्म्यै स्वाहा
७०० ॐ सुदुर्लभायै स्वाहा
७०१ ॐ भास्कर्यै स्वाहा
७०२ ॐ पुण्यगेहस्थायै स्वाहा
७०३ ॐ मनोज्ञायै स्वाहा
७०४ ॐ विभवप्रदायै स्वाहा
७०५ ॐ लोकस्वामिन्यै स्वाहा
७०६ ॐ अच्युतार्थायै स्वाहा
७०७ ॐ पुष्कलायै स्वाहा
७०८ ॐ जगदाकृत्यै स्वाहा
७०९ ॐ विचित्रहारिण्यै स्वाहा
७१० ॐ कान्यायै स्वाहा
७११ ॐ पाविन्यै स्वाहा
७१२ ॐ भूतभाविन्यै स्वाहा
७१३ ॐ प्राणिन्यै स्वाहा
७१४ ॐ प्राणदायै स्वाहा
७१५ ॐ विद्वते स्वाहा
७१६ ॐ विश्वब्रह्माण्डवासिन्यै स्वाहा
७१७ ॐ सम्पूर्णायै स्वाहा
७१८ ॐ परमोत्साहायै स्वाहा
७१९ ॐ परमोत्साहायै स्वाहा
७२० ॐ श्रीपत्यै स्वाहा
७२१ ॐ श्रीयत्यै स्वाहा
७२२ ॐ श्रुत्यै स्वाहा
७२३ ॐ श्रयन्त्यै स्वाहा
७२४ ॐ श्रयमाणायै स्वाहा
७२५ ॐ क्ष्मायै स्वाहा
७२६ ॐ विश्वरूपायै स्वाहा
७२७ ॐ प्रसादिन्यै स्वाहा
७२८ ॐ हर्षिण्यै स्वाहा
७२९ ॐ प्रथमायै स्वाहा
७३० ॐ सर्वायै स्वाहा
७३१ ॐ विशालायै स्वाहा
७३२ ॐ कामवर्षिण्यै स्वाहा
७३३ ॐ सुप्रतीकायै स्वाहा
७३४ ॐ पृश्निमत्यै स्वाहा
७३५ ॐ निवृत्त्यै स्वाहा

७३६ ॐ विविधायै स्वाहा
७३७ ॐ परायै स्वाहा
७३८ ॐ सुयज्ञायै स्वाहा
७३९ ॐ मधुरायै स्वाहा
७४० ॐ श्रादायै स्वाहा
७४१ ॐ देवरायै स्वाहा
७४२ ॐ महायनसे स्वाहा
७४३ ॐ स्थूलायै स्वाहा
७४४ ॐ सर्वाकृत्यै स्वाहा
७४५ ॐ सूक्ष्मायै स्वाहा
७४६ ॐ निम्नगाध्यायै स्वाहा
७४७ ॐ तयोनुदायै स्वाहा
७४८ ॐ तुष्ट्यै स्वाहा
७४९ ॐ वागाश्रयै स्वाहा
७५० ॐ पुष्ट्यै स्वाहा
७५१ ॐ सर्वायै स्वाहा
७५२ ॐ आद्यायै स्वाहा
७५३ ॐ स्वरुशोपिण्यै स्वाहा
७५४ ॐ शक्त्यात्मकायै स्वाहा
७५५ ॐ शब्दशक्त्यै स्वाहा
७५६ ॐ विशिष्टायै स्वाहा
७५७ ॐ वायुमत्यै स्वाहा
७५८ ॐ उमायै स्वाहा
७५९ ॐ आन्वीक्षिक्यै स्वाहा
७६० ॐ त्रयीवार्तायै स्वाहा
७६१ ॐ दण्डनीत्यै स्वाहा
७६२ ॐ नियामिकायै स्वाहा
७६३ ॐ व्याल्यै स्वाहा
७६४ ॐ सङ्कर्षण्यै स्वाहा
७६५ ॐ आतायै स्वाहा
७६६ ॐ महादेव्यै स्वाहा
७६७ ॐ अपराजितायै स्वाहा
७६८ ॐ कपिलायै स्वाहा
७६९ ॐ पिङ्गलायै स्वाहा
७७० ॐ अभयायै स्वाहा
७७१ ॐ बलाक्यै स्वाहा
७७२ ॐ घोषनन्दिन्यै स्वाहा
७७३ ॐ आजितायै स्वाहा
७७४ ॐ कपण्यै स्वाहा
७७५ ॐ क्षान्त्यै स्वाहा
७७६ ॐ गरुडायै स्वाहा
७७७ ॐ गरुडासनायै स्वाहा
७७८ ॐ ह्लादिन्यै स्वाहा
७७९ ॐ अनुग्रहायै स्वाहा

७८० ॐ नित्यायै स्वाहा
७८१ ॐ ब्रह्मविद्यायै स्वाहा
७८२ ॐ हिरण्मयै स्वाहा
७८३ ॐ मह्यै स्वाहा
७८४ ॐ शुद्धविद्यायै स्वाहा
७८५ ॐ पृथ्व्यै स्वाहा
७८६ ॐ शतानन्दायै स्वाहा
७८७ ॐ अंशुमालिन्यै स्वाहा
७८८ ॐ यज्ञाश्रयायै स्वाहा
७८९ ॐ ख्यातिपरायै स्वाहा
७९० ॐ स्तव्यायै स्वाहा
७९१ ॐ घृष्ट्यै स्वाहा
७९२ ॐ त्रिकालज्ञायै स्वाहा
७९३ ॐ संवादिन्यै स्वाहा
७९४ ॐ शब्दपूर्णायै स्वाहा
७९५ ॐ विजयायै स्वाहा
७९६ ॐ अंशुमत्यै स्वाहा
७९७ ॐ कलायै स्वाहा
७९८ ॐ शिवायै स्वाहा
७९९ ॐ स्तुतिप्रियायै स्वाहा
८०० ॐ ख्यात्यै स्वाहा
८०१ ॐ जीवयन्त्यै स्वाहा
८०२ ॐ पुनर्वसवे स्वाहा
८०३ ॐ दीक्षायै स्वाहा
८०४ ॐ भक्तार्तिहायै स्वाहा
८०५ ॐ रक्षण्यै स्वाहा
८०६ ॐ परीक्षायै स्वाहा
८०७ ॐ यज्ञसम्भवायै स्वाहा
८०८ ॐ आर्द्रायै स्वाहा
८०९ ॐ पुष्करिण्यै स्वाहा
८१० ॐ पुण्यायै स्वाहा
८११ ॐ गण्यायै स्वाहा
८१२ ॐ दारिद्र्यभञ्जिन्यै स्वाहा
८१३ ॐ धन्यायै स्वाहा
८१४ ॐ मान्यायै स्वाहा
८१५ ॐ पद्मनेम्यै स्वाहा
८१६ ॐ भार्गव्यै स्वाहा
८१७ ॐ वंशवर्धिन्यै स्वाहा
८१८ ॐ तीक्ष्णप्रवृत्त्यै स्वाहा
८१९ ॐ सत्कीर्त्यै स्वाहा
८२० ॐ नि[illegible]ायै स्वाहा
८२१ ॐ अघनाशिन्यै स्वाहा
८२२ ॐ संज्ञायै स्वाहा

८२३ ॐ निःसंशयायै स्वाहा
८२४ ॐ पूर्णायै स्वाहा
८२५ ॐ वनमालायै स्वाहा
८२६ ॐ वसुन्धरायै स्वाहा
८२७ ॐ पृथ्व्यै स्वाहा
८२८ ॐ महोत्कटायै स्वाहा
८२९ ॐ अहल्यायै स्वाहा
८३० ॐ मण्डलायै स्वाहा
८३१ ॐ आश्रितमानदायै स्वाहा
८३२ ॐ सर्वस्यै स्वाहा
८३३ ॐ नित्योदितायै स्वाहा
८३४ ॐ उदारायै स्वाहा
८३५ ॐ जृम्भमाणायै स्वाहा
८३६ ॐ महोदयायै स्वाहा
८३७ ॐ चन्द्रकान्तोदितायै स्वाहा
८३८ ॐ सूर्यायै स्वाहा
८३९ ॐ चतुरश्रायै स्वाहा
८४० ॐ मनोजरायै स्वाहा
८४१ ॐ बालायै स्वाहा
८४२ ॐ कुमार्यै स्वाहा
८४३ ॐ युवत्यै स्वाहा
८४४ ॐ करुणायै स्वाहा
८४५ ॐ भक्तवत्सलायै स्वाहा
८४६ ॐ मेदिन्यै स्वाहा
८४७ ॐ उपनिषन्मिश्रायै स्वाहा
८४८ ॐ सुमवीरवे स्वाहा
८४९ ॐ धनेश्वर्यै स्वाहा
८५० ॐ दुर्मर्षण्यै स्वाहा
८५१ ॐ सुचरितायै स्वाहा
८५२ ॐ बोधायै स्वाहा
८५३ ॐ शोभायै स्वाहा
८५४ ॐ सुवर्चलायै स्वाहा
७५५ ॐ यमुनायै स्वाहा
८५६ ॐ अक्षौहिण्यै स्वाहा
८५७ ॐ गङ्गायै स्वाहा
८५८ ॐ मन्दाकिन्यै स्वाहा
८५९ ॐ अमलाशयायै स्वाहा
८६० ॐ गोदायै स्वाहा
८६१ ॐ गोदावर्यै स्वाहा
८६२ ॐ चन्द्रभागायै स्वाहा
८६३ ॐ कावेर्यै स्वाहा

८६४ ॐ उदन्वत्यै स्वाहा
८६५ ॐ सिनीवाल्यै स्वाहा
८६६ ॐ कुह्वै स्वाहा
८६७ ॐ राकायै स्वाहा
८६८ ॐ वारणायै स्वाहा
८६९ ॐ सिन्धुमत्यै स्वाहा
८७० ॐ अमायै स्वाहा
८७१ ॐ पूर्तये स्वाहा
८७२ ॐ मायात्मिकायै स्वाहा
८७३ ॐ स्फूर्तये स्वाहा
८७४ ॐ व्याख्यायै स्वाहा
८७५ ॐ सूत्रायै स्वाहा
८७६ ॐ प्रजावत्यै स्वाहा
८७७ ॐ वृद्ध्यै स्वाहा
८७८ ॐ स्थित्यै स्वाहा
८७९ ॐ ध्रुवायै स्वाहा
८८० ॐ बुद्ध्यै स्वाहा
८८१ ॐ त्रिगुणायै स्वाहा
८८२ ॐ गुणगह्वरायै स्वाहा
८८३ ॐ अमोघायै स्वाहा
८८४ ॐ शान्तिदायै स्वाहा
८८५ ॐ सत्यायै स्वाहा
८८६ ॐ ज्ञानदायै स्वाहा
८८७ ॐ उत्कर्षिण्यै स्वाहा
८८८ ॐ शिवायै स्वाहा
८८९ ॐ प्रकृत्यैस्वाहा
८९० ॐ मायिन्यै स्वाहा
८९१ ॐ लोलायै स्वाहा
८९२ ॐ कमलायै स्वाहा
८९३ ॐ कामदुहे स्वाहा
८९४ ॐ विदुष्यै स्वाहा
८९५ ॐ प्रज्ञायै स्वाहा
८९६ ॐ रामायै स्वाहा
८९७ ॐ परायै स्वाहा
८९८ ॐ सन्ध्यायै स्वाहा
८९९ ॐ सुभद्रायै स्वाहा
९०० ॐ सर्वमङ्गलायै स्वाहा
९०१ ॐ नन्दायै स्वाहा
९०२ ॐ भद्रायै स्वाहा
९०३ ॐ जयायै स्वाहा
९०४ ॐ रिक्तायै स्वाहा
९०५ ॐ तिथिपूर्णायै स्वाहा
९०६ ॐ ऋतम्भरायै स्वाहा
९०७ ॐ काष्ठयै स्वाहा

९०८ ॐ कामेश्वर्यै स्वाहा
९०९ ॐ निष्ठायै स्वाहा
९१० ॐ काम्यायै स्वाहा
९११ ॐ रम्यायै स्वाहा
९१२ ॐ वरायै स्वाहा
९१३ ॐ स्मृत्यै स्वाहा
९१४ ॐ शाङ्खिन्यै स्वाहा
९१५ ॐ चक्रिण्यै स्वाहा
९१६ ॐ श्यामायै स्वाहा
९१७ ॐ सामायै स्वाहा
९१८ ॐ गोत्राय स्वाहा
९१९ ॐ रमायै स्वाहा
९२० ॐ भूत्यै स्वाहा
९२१ ॐ शान्तिदायै स्वाहा
९२२ ॐ स्तुत्यै स्वाहा
९२३ ॐ त्रिवृष्यै स्वाहा
९२४ ॐ विराजायै स्वाहा
९२५ ॐ अत्युज्ज्वलायै स्वाहा
९२६ ॐ अव्ययायै स्वाहा
९२७ ॐ वाण्यै स्वाहा
९२८ ॐ गौर्यै स्वाहा
९२९ ॐ इन्दिरायै स्वाहा
९३० ॐ लक्ष्म्यै स्वाहा
९३१ ॐ मेधायै स्वाहा
९२३ ॐ श्रद्धयै स्वाहा
९३३ ॐ अप्रमायै स्वाहा
९३४ ॐ द्युतये स्वाहा
९३५ ॐ स्वधायै स्वाहा
९३६ ॐ स्वाहायै स्वाहा
९३७ ॐ रतिरूपायै स्वाहा
९३८ ॐ वसवे स्वाहा
९३९ ॐ विद्यायै स्वाहा
९४० ॐ धृत्यै स्वाहा
९४१ ॐ समायै स्वाहा
९४२ ॐ शिष्टायै स्वाहा
९४३ ॐ इष्टायै स्वाहा
९४४ ॐ शुच्यै स्वाहा
९४५ ॐ धान्यै स्वाहा
९४६ ॐ शुभारायै स्वाहा
९४७ ॐ अक्षोणवलायै स्वाहा
९४८ ॐ अमृतायै स्वाहा
९४९ ॐ रमण्यै स्वाहा
९५० ॐ एकायै स्वाहा
५१ ॐ शारदाम्बायै स्वाहा

९५२ ॐ समेधायै स्वाहा
९५३ ॐ आद्यायै स्वाहा
९५४ ॐ शुभाक्षरायै स्वाहा
९५५ ॐ रत्नावल्यै स्वाहा
९५६ ॐ भारत्यै स्वाहा
९५७ ॐ ईडायै स्वाहा
९५८ ॐ धीरायै स्वाहा
९५९ ॐ धियै स्वाहा
९६० ॐ केवलायै स्वाहा
९६१ ॐ आत्मदायै स्वाहा
९६२ ॐ यस्यै स्वाहा
९६३ ॐ तस्यै स्वाहा
९६४ ॐ मेदूध्यै स्वाहा
९६५ ॐ सोहिमतायै स्वाहा
९६६ ॐ कस्यै स्वाहा
९६७ ॐ नीलायै स्वाहा
९६८ ॐ राधायै स्वाहा
९६९ ॐ अमृतोद्भवायै स्वाहा
९७० ॐ विभूत्यै स्वाहा
९७१ ॐ निष्कलायै स्वाहा
९७२ ॐ रम्यायै स्वाहा
९७३ ॐ रक्षायै स्वाहा
९७४ ॐ सुविमलायै स्वाहा
९७५ ॐ क्षमायै स्वाहा
९७६ ॐ प्राप्त्यै स्वाहा
९७७ ॐ वासन्तिकालेखायै स्वाहा
९७८ ॐ भूरिबीजायै स्वाहा
९७९ ॐ महाङ्गदायै स्वाहा
९८० ॐ वसुधुर्यायै स्वाहा
९८१ ॐ स्वधुधायै स्वाहा
९८२ ॐ ह्रियै स्वाहा
९८३ ॐ शुभे स्वाहा
९८४ ॐ कामिन्यै स्वाहा
९८५ ॐ शोकनाशिन्यै स्वाहा
९८६ ॐ मायायै स्वाहा
९८७ ॐ प्रीत्यै स्वाहा
९८८ ॐ अहनायै स्वाहा
९९९ ॐ नर्मदायै स्वाहा
९९० ॐ गोकुलाश्रयायै स्वाहा
९९१ ॐ अर्कप्रभायै स्वाहा
९९२ ॐ रसेभायै स्वाहा
९९३ ॐ श्रीनिलयायै स्वाहा
९९४ ॐ इन्दुप्रभायै स्वाहा
९९५ ॐ अद्भुतायै स्वाहा

९९६ ॐ श्रियै स्वाहा

९९७ ॐ कृशानुप्रभायै स्वाहा

९९८ वज्रलम्बनायै स्वाहा

९९९ सर्वभूमिदायै स्वाहा

१००० ॐ भोगप्रियायै स्वाहा.

१००१ ॐ भोगवत्यै स्वाहा

१००२ ॐ भोगीन्द्रशयना

सनायै स्वाहा

१००३ ॐ अश्वपूर्वायै स्वाहा

१००४ ॐ रथमध्यायै स्वाहा

१००५ ॐ हस्तिनादप्रबोधिन्यै

स्वाहा

१००६ ॐ सर्वलक्षणलक्षिण्यायै

स्वाहा

१००७ ॐ सर्वलोकप्रि-

ङ्कयै स्वाहा

१००८ ॐ सर्वमङ्गल-

माङ्गल्यायै स्वाहा

ॐ दृष्टादृष्टफलप्रदायै स्वाहा

# गायत्रीसहस्रनामावली: स्वाहाकार

विनियोगः

अस्य श्रीगायत्रीसहस्रनामस्तोत्रमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, दैवीगायत्रीदेवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः, श्रीभगवती-गायत्रीप्रीत्यर्थे हवने ( सहस्रविल्वपत्रसमर्पणे तुलसीदलसमर्पणे पुष्प-समर्पणे वा ) विनियोगः ।

ध्यानम्

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-<br>
र्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम् ।<br>
गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकशाः शुभ्रं कपालं गुणं<br>
शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥

१ ॐ अचिन्त्यलक्षणायै स्वाहा<br>
२ ॐ अव्यक्तायै स्वाहा<br>
३ ॐ अर्थमातृमहेश्वर्यै स्वाहा<br>
४ ॐ अमृतार्णवमध्यस्थायै स्वाहा<br>
५ ॐ अजितायै स्वाहा<br>
६ ॐ अपराजितायै स्वाहा<br>
७ ॐ अणिमादिगुणाधारायै स्वाहा<br>
८ ॐ अर्कमण्डलसंस्थितयै स्वाहा<br>
९ ॐ अजरायै स्वाहा<br>
१० ॐ अजायै स्वाहा<br>
११ ॐ अपरायै स्वाहा<br>
१२ ॐ अधर्मायै स्वाहा

१३ ॐ अक्षसूत्रधरायै स्वाहा
१४ ॐ अधरायै स्वाहा
१५ ॐ अकारादिक्षकारान्तायै स्वाहा
१६ ॐ अरिषड्वर्गभेदिन्यै स्वाहा
१७ ॐ अञ्जनादिप्रतीकाशायै स्वाहा
१८ ॐ अञ्जनाद्रिनिवासिन्यै स्वाहा
१९ ॐ अदित्यै स्वाहा
२० ॐ अजपायै स्वाहा
२१ ॐ अविद्यायै स्वाहा
२२ ॐ अरविन्दनिभेक्षणायै स्वाहा
२३ ॐ अन्तर्बहिःस्थितायै स्वाहा
२४ ॐ अविद्याध्वंसिन्यै स्वाहा
२५ ॐ अन्तरात्मिकायै स्वाहा
२६ ॐ अजायै स्वाहा
२७ ॐ अजमुखावासायै स्वाहा
२८ ॐ अरविन्दनिभाननायै स्वाहा
२९ ॐ अर्धमात्रायै स्वाहा
३० ॐ अर्थदानज्ञायै स्वाहा
३१ ॐ अरिमण्डलमर्दिन्यै स्वाहा
३२ ॐ असुरघ्न्यै स्वाहा
३३ ॐ अमावास्यायै स्वाहा
३४ ॐ अलक्ष्मीघ्नन्त्यै स्वाहा
३५ ॐ अजार्चितायै स्वाहा
३६ ॐ आदिलक्ष्म्यै स्वाहा
३७ ॐ आदिशक्त्यै स्वाहा
३८ ॐ आकृत्यै स्वाहा
३९ ॐ आयताननायै स्वाहा
४० ॐ आदित्यपदवीचारायै स्वाहा
४१ ॐ आदित्यपरिसेवितायै स्वाहा
४२ ॐ आचार्यायै स्वाहा
४३ ॐ आवर्तनायै स्वाहा
४४ ॐ आचारायै स्वाहा

४५ ॐ आदिमूर्तिनिवासिन्यै स्वाहा
४६ ॐ आग्नेय्यै स्वाहा
४७ ॐ आमर्यै स्वाहा
४८ ॐ आद्यायै स्वाहा
४९ ॐ आराध्यायै स्वाहा
५० ॐ आसनस्थितायै स्वाहा
५१ ॐ आधारनिलयायै स्वाहा
५२ ॐ आधारायै स्वाहा
५३ ॐ आकाशान्तनिवासिन्यै स्वाहा
५४ ॐ आद्याक्षरसमायुक्तायै स्वाहा
५५ ॐ अन्तराकाशरूपिण्यै स्वाहा
५६ ॐ आदित्यमण्डलगतायै स्वाहा
५७ ॐ आन्तरध्वान्तनाशिन्यै स्वाहा
५८ ॐ इन्दिरायै स्वाहा
५९ ॐ इष्टदायै स्वाहा
६० ॐ इष्टायै स्वाहा
६१ ॐ इन्दीवरनिभेक्षणायै स्वाहा
६२ ॐ इरावत्यै स्वाहा
६३ ॐ इन्द्रपदायै स्वाहा
६४ ॐ इन्द्राण्यै स्वाहा
६५ ॐ इन्दुरूपिण्यै स्वाहा
६६ ॐ इक्षुकोदण्डसंयुक्तायै स्वाहा
६७ ॐ इषुसन्धानमारिण्यै स्वाहा
६८ ॐ इन्द्रनीलसमाकारायै स्वाहा
६९ ॐ इडापिङ्गलरूपिण्यै स्वाहा
७० ॐ इन्द्राक्ष्यै स्वाहा
७१ ॐ ईश्वरीदेव्यै स्वाहा
७२ ॐ ईहात्रयविवर्जितायै स्वाहा
७३ ॐ उमायै स्वाहा
७४ ॐ उषायै स्वाहा
७५ ॐ उडुनिभायै स्वाहा

७६ ॐ उर्वारुककफलाननायै स्वाहा
७७ ॐ उडुप्रभायै स्वाहा
७८ ॐ उडुमत्यै स्वाहा
७९ ॐ उडुपायै स्वाहा
८० ॐ उडुमध्यमायै स्वाहा
८१ ॐ ऊर्ध्वायै स्वाहा
८२ ॐ ऊर्ध्वकेश्यै स्वाहा
८३ ॐ ऊर्ध्वाधोगतिभेदिन्यै स्वाहा
८४ ॐ ऊर्ध्वबाहुप्रियायै स्वाहा
८५ ॐ ऊर्मिमालावाग्ग्रन्थ स्वाहा दायिन्यै स्वाहा
८६ ॐ ऋतायै स्वाहा
८७ ॐ ऋष्यै स्वाहा
८८ ॐ ऋतुमत्यै स्वाहा
८९ ॐ ऋषिदेवनमस्कृतायै स्वाहा
९० ॐ ऋग्वेदायै स्वाहा
९१ ॐ ऋणहर्त्र्यै स्वाहा
९२ ॐ ऋषिमण्डलचारिण्यै स्वाहा
९३ ॐ ऋद्धिदायै स्वाहा
९४ ॐ ऋजुमार्गस्थायै स्वाहा
९५ ॐ ऋजुधर्मायै स्वाहा
९६ ॐ ऋतुप्रदायै स्वाहा
९७ ॐ ऋग्वेदनिलयायै स्वाहा
९८ ॐ ऋज्व्यै स्वाहा
९९ ॐ लुप्तधर्मप्रवर्तिन्यै स्वाहा
१०० ॐ लूतारिवरसंभूतायै स्वाहा
१०१ ॐ लूतादिविषहारिण्यै स्वाहा
१०२ ॐ एकाक्षरायै स्वाहा
१०३ ॐ एकमात्रायै स्वाहा
१०४ ॐ एकायै स्वाहा
१०५ ॐ एकैकनिष्ठितायै स्वाहा
१०६ ॐ ऐन्द्र्यै स्वाहा
१०७ ॐ ऐरावतारूढायै
१०८ ॐ ऐहिकामुष्मिकप्रदायै स्वाहा
१०९ ॐ ओङ्कारायै स्वाहा
११० ॐ औषध्यै स्वाहा
१११ ॐ ओतायै स्वाहा

११२ ॐ ओतप्रोतनिवासिन्यै स्वाहा
११३ ॐ और्वायै स्वाहा
११४ ॐ औषधसम्पन्नायै स्वाहा
११५ ॐ औपासनफलप्रदायै स्वाहा
११६ ॐ अण्डमध्यस्थितदेव्यै स्वाहा
११७ ॐ अ:कारमनुरूपिण्यै स्वाहा
११८ ॐ कात्यायन्यै स्वाहा
११९ ॐ कालरात्र्यै स्वाहा
१२० ॐ कामाक्ष्यै स्वाहा
१२१ ॐ कामसुन्दर्यै स्वाहा
१२२ ॐ कमलायै स्वाहा
१२३ ॐ कामिन्यै स्वाहा
१२४ ॐ कान्तायै स्वाहा
१२५ ॐ कामदायै स्वाहा
१२६ ॐ कालकण्ठिन्यै स्वाहा
१२७ ॐ करिकुम्भस्तनभरायै स्वाहा
१२८ ॐ करवीरसुवासिन्यै स्वाहा
१२९ ॐ कल्याण्यै स्वाहा
१३० ॐ कुण्डलवत्यै स्वाहा
१३१ ॐ कुरुक्षेत्रनिवासिन्यै स्वाहा
१३२ ॐ कुरुविन्ददलाकारायै स्वाहा
१३३ ॐ कुण्डल्यै स्वाहा
१३४ ॐ कुमुदालयायै स्वाहा
१३५ ॐ कालजिह्वायै स्वाहा
१३६ ॐ करालास्यायै स्वाहा
१३७ ॐ कालिकायै स्वाहा
१३८ ॐ कालरूपिण्यै स्वाहा
१३९ ॐ कमनीयगुणायै स्वाहा
१४० ॐ कान्त्यै स्वाहा
१४१ ॐ कलाधारायै स्वाहा
१४२ ॐ कुमुद्वत्यै स्वाहा
१४३ ॐ कौशिक्यै स्वाहा
१४४ ॐ कमलाकारायै स्वाहा
१४५ ॐ कामचारप्रभञ्जिन्यै स्वाहा
१४६ ॐ कौमार्यै स्वाहा
१४७ ॐ करुणापाङ्ग्यै स्वाहा

१४८ ॐ ककुवन्तायै स्वाहा १६८ ॐ कुसुमप्रियायै स्वाहा
१४९ ॐ करिप्रियायै स्वाहा १६९ ॐ कमण्डलुधरायै स्वाहा
१५० ॐ केसयै स्वाहा १७० ॐ काव्यै स्वाहा
१५१ ॐ केशवनुतायै स्वाहा १७१ ॐ कर्मनिर्मूलकारिण्यै स्वाहा
१५२ ॐ कदम्बकुसुमप्रियायै स्वाहा १७२ ॐ कलहंसगत्यै स्वाहा
१५३ ॐ कालिन्द्यै स्वाहा १७३ ॐ कक्षायै स्वाहा
१५४ ॐ कालिकायै स्वाहा १७४ ॐ कृतकौतुकमङ्गलायै स्वाहा
१५५ ॐ काञ्च्यै स्वाहा
१५६ ॐ कलशोद्भवसंस्तुतायै स्वाहा १७५ ॐ कस्तूरीतिलकायै स्वाहा
१७६ ॐ कम्रायै स्वाहा
१५७ ॐ काममात्रे स्वाहा १७७ ॐ करीन्द्रगमनायै स्वाहा
१५८ ॐ क्रतुमत्यै स्वाहा १७८ ॐ कुह्वै स्वाहा
१५९ ॐ कामरूपायै स्वाहा १७९ ॐ कर्पूरलेपनायै स्वाहा
१६० ॐ कृपावत्यै स्वाहा १८० ॐ कृष्णायै स्वाहा
१६१ ॐ कुमार्यै स्वाहा १८१ ॐ कापलायै स्वाहा
१६२ ॐ कुण्डनिलयै स्वाहा १८२ ॐ कुहराश्रयायै स्वाहा
१६३ ॐ किराव्यै स्वाहा १८३ ॐ कूटस्थायै स्वाहा
१६४ ॐ कीरवाहनायै स्वाहा १८४ ॐ कुधरायै स्वाहा
१६५ ॐ कैकेय्यै स्वाहा १८५ ॐ कम्रायै स्वाहा
१६६ ॐ कोकिलालापायै स्वाहा १८६ ॐ कुक्षिस्थाखिलविष्टपायै स्वाहा
१६७ ॐ केतक्यै स्वाहा

१८७ ॐ खड्गखेटकरायै स्वाहा
१८८ ॐ खर्वायै स्वाहा
१८९ ॐ खेचर्यै स्वाहा
१९० ॐ खगवाहनायै स्वाहा
१९१ ॐ खट्वाङ्गधारिण्यै स्वाहा
१९२ ॐ ख्यातायै स्वाहा
१९३ ॐ खगराजोपरिस्थितायै स्वाहा
१९४ ॐ खलघ्न्यै स्वाहा
१९५ ॐ खण्डितजरायै स्वाहा
१९६ ॐ खण्डाख्यानप्रदायिन्यै स्वाहा
१९७ ॐ खण्डेन्दुतिलकायै स्वाहा
१९८ ॐ गङ्गायै स्वाहा
१९९ ॐ गणेशगुहपूजितायै स्वाहा
२०० ॐ गायत्र्यै स्वाहा
२०१ ॐ गोमत्यै स्वाहा
२०२ ॐ गीतायै स्वाहा
२०३ ॐ गान्धार्यै स्वाहा
२०४ ॐ गानलोलुपायै स्वाहा
२०५ ॐ गौतम्यै स्वाहा
२०६ ॐ गामिन्यै स्वाहा
२०७ ॐ गाधायै स्वाहा
२०८ ॐ गन्धर्वाप्सरसेवितायै स्वाहा
२०९ ॐ गोविन्दचरणाक्रान्तायै स्वाहा
२१० ॐ गुणत्रयविभावितायै स्वाहा
२११ ॐ गन्धर्व्यै स्वाहा
२१२ ॐ गह्वर्यै स्वाहा
२१३ ॐ गोत्रायै स्वाहा
२१४ ॐ गिरीशायै स्वाहा
२१५ ॐ गहनायै स्वाहा
२१६ ॐ गम्यै स्वाहा
२१७ ॐ गुहावासायै स्वाहा
२१८ ॐ गुणवत्यै स्वाहा
२१९ ॐ गुरुपापप्रणाशिन्यै स्वाहा
२२० ॐ गुर्व्यै स्वाहा
२२१ ॐ गुणवत्यै स्वाहा
२२२ ॐ गुह्यायै स्वाहा

२२३ ॐ गोप्तव्यायै स्वाहा
२२४ ॐ गुणदायिन्यै स्वाहा
२२५ ॐ गिरिजायै स्वाहा
२२६ ॐ गुह्यमातङ्ग्यै स्वाहा
२२७ ॐ गरुडध्वजवल्लभायै स्वाहा
२२८ ॐ गर्वापहारिण्यै स्वाहा
२२९ ॐ गोदायै स्वाहा
२३० ॐ गोकुलस्थायै स्वाहा
२३१ ॐ गदाधरायै स्वाहा
२३२ ॐ गोकर्णनिलयासक्तायै स्वाहा
२३३ ॐ गुह्यमण्डलवर्तिन्यै स्वाहा
२३४ ॐ धर्मदायै स्वाहा
२३५ ॐ धनदायै स्वाहा
२३६ ॐ घण्टायै स्वाहा
२३७ ॐ घोरदानवमर्दिन्यै स्वाहा
२३८ ॐ घृणिकन्त्रमय्यै स्वाहा
२३९ ॐ घोषायै स्वाहा
२४० ॐ धनसंपातदायिन्यै
२४१ ॐ घण्टारवप्रियायै स्वाहा
२४२ ॐ घ्राणायै स्वाहा
२४३ ॐ घृणिसन्तुष्टिकारिण्यै
२४४ ॐ घनारिमण्डलायै स्वाहा
२४५ ॐ घूर्णायै स्वाहा
२४६ ॐ घृताच्य स्वाहा
२४७ ॐ घनवेगिन्यै स्वाहा
२४८ ॐ ज्ञानधातुमय्यै स्वाहा
२४९ ॐ चर्चायै स्वाहा
२५० ॐ चर्चितायै स्वाहा
२५१ ॐ चारुहासिन्यै स्वाहा
२५२ ॐ चटुलायै स्वाहा
२५३ ॐ चण्डिकायै स्वाहा
२५४ ॐ चित्रायै स्वाहा
२५५ ॐ चित्रमाल्यविभूषितायै स्वाहा
२५६ ॐ चतुर्भुजायै स्वाहा
२५७ ॐ चारुदन्तायै स्वाहा
२५८ ॐ चातुर्यै स्वाहा
२५९ ॐ चरितप्रदायै स्वाहा

२६० ॐ चूलिकायै स्वाहा
२६१ ॐ चित्रवस्त्रान्तायै स्वाहा
२६२ ॐ चन्द्रमः कर्णकुण्डलायै स्वाहा
२६३ ॐ चन्द्रहासायै स्वाहा
२६४ ॐ चारुदात्र्यै स्वाहा
२६५ ॐ चकोर्यै स्वाहा
२६६ ॐ चन्द्रहासिन्यै स्वाहा
२६७ ॐ चन्द्रिकात्र्यै स्वाहा
२६८ ॐ चन्द्रधात्र्यै स्वाहा
२६९ ॐ चौर्यै स्वाहा
२७० ॐ चौरायै स्वाहा
२७१ ॐ चण्डिकायै स्वाहा
२७२ ॐ चञ्चद्वाग्वादिन्यै स्वाहा
२७३ ॐ चन्द्रचूडायै स्वाहा
२७४ ॐ चोरविनाशिन्यै स्वाहा
२७५ ॐ चारुचन्दनलिप्ताङ्ग्यै स्वाहा
२७६ ॐ चञ्चच्चामरवीजितायै स्वाहा
२७७ ॐ चारुमध्यायै स्वाहा
२७८ ॐ चारुगत्यै स्वाहा
२७९ ॐ चन्दिलायै स्वाहा
२८० ॐ चन्द्ररूपिण्यै स्वाहा
२८१ ॐ चारुहोमप्रियायै स्वाहा
२८२ ॐ चार्वाचरितायै स्वाहा
२८३ ॐ चक्रबाहुकायै स्वाहा
२८४ ॐ चन्द्रमण्डलमध्यस्थायै स्वाहा
२८५ ॐ चन्द्रमण्डलदर्पणायै स्वाहा
२८६ ॐ चक्रवाकस्तन्यै स्वाहा
२८७ ॐ चेष्टायै स्वाहा
२८८ ॐ चित्रायै स्वाहा
२८९ ॐ चारुविलासिन्यै स्वाहा
२९० ॐ चित्स्वरूपायै स्वाहा
२९१ ॐ चन्द्रवत्यै स्वाहा
२९२ ॐ चन्द्रमसे स्वाहा
२९३ ॐ चन्दनप्रियायै स्वाहा
२९४ ॐ चोदयित्र्यै स्वाहा
२९५ ॐ चिरप्रज्ञायै स्वाहा
२९६ ॐ चातकायै स्वाहा
२६७ ॐ चारुहेतुक्यै स्वाहा

२९८ ॐ छत्रयातायै स्वाहा
२९९ ॐ छत्रधरायै स्वाहा
३०० ॐ छायायै स्वाहा
३०१ ॐ छन्दःपरिच्छदायै स्वाहा
३०२ ॐ छायादेव्यै स्वाहा
३०३ ॐ छिद्रनखायै स्वाहा
३०४ ॐ छन्नेन्द्रियविसर्पिण्यै स्वाहा
३०५ ॐ छन्दोऽनुष्टुप्प्रतिष्ठान्तायै स्वाहा
३०६ ॐ छिद्रोपद्रवभेदिन्यै स्वाहा
३०७ ॐ छेदायै स्वाहा
३०८ ॐ छत्रेश्वर्यै स्वाहा
३०९ ॐ छिन्नायै स्वाहा
३१० ॐ छुरिकायै स्वाहा
३११ ॐ छेदनप्रियायै स्वाहा
३१२ ॐ जनन्यै स्वाहा
३१३ ॐ जन्मरहितायै स्वाहा
३१४ ॐ जातवेदायै स्वाहा
३१५ ॐ जगन्मय्यै स्वाहा
३१६ ॐ जाह्नव्यै स्वाहा
३१७ ॐ जटिलायै स्वाहा
३१८ ॐ जेत्र्यै स्वाहा
३१९ ॐ जरामरणवर्जितायै स्वाहा
३२० ॐ जम्बूद्वीपवत्यै स्वाहा
३२१ ॐ ज्वालायै स्वाहा
३२२ ॐ जयन्त्यै स्वाहा
३२३ ॐ जलशालिन्यै स्वाहा
३२४ ॐ जितेन्द्रियायै स्वाहा
३२५ ॐ जितक्रोधायै स्वाहा
३२६ ॐ जितामित्रायै स्वाहा
३२७ ॐ जगत्प्रियायै स्वाहा
३२८ ॐ जातरूपमय्यै स्वाहा
३२९ ॐ जिह्वायै स्वाहा
३३० ॐ जानक्यै स्वाहा
३३१ ॐ जगत्यै स्वाहा
३३२ ॐ जरायै स्वाहा
३३३ ॐ जनित्र्यै स्वाहा
३३४ ॐ जह्नुतनयायै स्वाहा
३३५ ॐ जगत्त्रयहितैषिण्यै स्वाहा
३३६ ॐ ज्वलामुख्यै स्वाहा
३३७ ॐ जपवत्यै स्वाहा

३३८ ॐ ज्वरघ्न्यै स्वाहा
३३९ ॐ जितविष्टपायै स्वाहा
३४० ॐ जिताक्रान्तमय्यै स्वाहा
३४१ ॐ ज्वालायै स्वाहा
३४२ ॐ जाग्रत्यै स्वाहा
३४३ ॐ ज्वरदेवतायै स्वाहा
३४४ ॐ ज्वलन्त्यै स्वाहा
३४५ ॐ जलदायै स्वाहा
३४६ ॐ ज्येष्ठायै स्वाहा
३४७ ॐ ज्याघोषास्फोटदिङ्मुख्यै स्वाहा
३४८ ॐ जम्भिन्यै स्वाहा
३४९ ॐ जृम्भणायै स्वाहा
३५० ॐ जृम्भायै स्वाहा
३५१ ॐ ज्वलन्माणिक्यकुण्डलायै स्वाहा
३५२ ॐ झिंझिकायै स्वाहा
३५३ ॐ झणनिर्घोषायै स्वाहा
३५४ ॐ झंझामारुतवेगिन्यै स्वाहा
३५५ ॐ झल्लरीवाद्यकुशलायै स्वाहा
३५६ ॐ ञरूपायै स्वाहा
३५७ ॐ ञभुजास्मृतायै स्वाहा
३५८ ॐ टङ्कबाणसमायुक्तायै स्वाहा
३५९ ॐ टङ्किन्यै स्वाहा
३६० ॐ टङ्कभेदिन्यै स्वाहा
३६१ ॐ टङ्कीगणकृताघोषायै स्वाहा
३६२ ॐ टङ्कनीयमहोरसायै स्वाहा
३६३ ॐ टङ्कारकारिणीदेव्यै स्वाहा
३६४ ॐ ठठशब्दनिनादिन्यै स्वाहा
३६५ ॐ डामर्यै स्वाहा
३६६ ॐ डाकिन्यै स्वाहा
३६७ ॐ डिम्भायै स्वाहा
३६८ ॐ डुण्डुमारैकनिर्जितायै स्वाहा

३६९ ॐ डामरीतन्त्रमार्गस्थाय स्वाहा
३७० ॐ डमड्डमरुनादिन्यै स्वाहा
३७१ ॐ डिण्डीरवसहायै स्वाहा
३७२ ॐ डिम्भलसत्क्रीडापरायणायै स्वाहा
३७३ ॐ ढुण्ढिविघ्नेशजनन्यै स्वाहा
३७४ ॐ ढक्काहस्तायै स्वाहा
३७५ ॐ ढिल्लिव्रजायै स्वाहा
३७६ ॐ नित्यज्ञानायै स्वाहा
३७७ ॐ निरुपमायै स्वाहा
३७८ ॐ निर्गुणायै स्वाहा
३७९ ॐ नर्मदायै स्वाहा
३८० ॐ नद्यै स्वाहा
३८१ ॐ त्रिगुणायै स्वाहा
३८२ ॐ त्रिपदायै स्वाहा
३८३ ॐ तन्त्र्यै स्वाहा
३८४ ॐ तुलस्यै स्वाहा
३८५ ॐ तरुणायै स्वाहा
३८६ ॐ तरवे स्वाहा
३८७ ॐ त्रिविक्रमपदाक्रान्तायै स्वाहा
३८८ ॐ तुरीयपदगामिन्यै स्वाहा
३८९ ॐ तरुणादित्यसङ्काशायै स्वाहा
३९० ॐ तामस्यै स्वाहा
३९१ ॐ तुहितायै स्वाहा
३९२ ॐ तुरायै स्वाहा
३९३ ॐ त्रिकालज्ञानसम्पन्नायै स्वाहा
३९४ ॐ त्रिवल्यै स्वाहा
३९५ ॐ त्रिलोचनायै स्वाहा
३९६ ॐ त्रिशक्त्यै स्वाहा
३९७ ॐ त्रिपुरायै स्वाहा
३९८ ॐ तुङ्गायै स्वाहा
३९९ ॐ तुरङ्गवदनायै स्वाहा
४०० ॐ तिमिङ्गिलगिलायै स्वाहा
४०१ ॐ तीव्रायै स्वाहा
४०२ ॐ त्रिस्रोतायै स्वाहा
४०३ ॐ तामसादिन्यै स्वाहा
४०४ ॐ तन्त्रमन्त्रविशेषज्ञायै स्वाहा

४०५ ॐ तनुमध्यायै स्वाहा
४०६ ॐ त्रिविष्टपायै स्वाहा
४०७ ॐ त्रिसन्ध्यायै स्वाहा
४०८ ॐ त्रिस्तन्यै स्वाहा
४०९ ॐ तोषसंस्थायै स्वाहा
४१० ॐ तालप्रतापिन्यै स्वाहा
४११ ॐ ताटंकिन्यै स्वाहा
४१२ ॐ तुषाराभायै स्वाहा
४१३ ॐ तुहिनाचलवासिन्यै स्वाहा
४१४ ॐ तन्तुजालसमायुक्तायै स्वाहा
४१५ ॐ तारहारावलिप्रियायै स्वाहा
४१६ ॐ तिलहोमप्रियायै स्वाहा
४१७ ॐ तीर्थायै स्वाहा
४१८ ॐ तमालकुसुमाकृत्यै स्वाहा
४१९ ॐ तारकायै स्वाहा
४२० ॐ त्रियुतायै स्वाहा
४२१ ॐ तन्व्यै स्वाहा
४२२ ॐ त्रिशंकुपरिवारितायै स्वाहा
४२३ ॐ तलोदर्यै स्वाहा
४२४ ॐ तिलाभूषायै स्वाहा
४२५ ॐ ताटङ्कप्रियवाहिन्यै स्वाहा
४२६ ॐ त्रिजटायै स्वाहा
४२७ ॐ तित्तिर्यै स्वाहा
४२८ ॐ तृष्णायै स्वाहा
४२९ ॐ त्रिविधायै स्वाहा
४३० ॐ तरुणाकृत्यै स्वाहा
४३१ ॐ तप्तकाञ्चनसंकाशायै स्वाहा
४३२ ॐ तप्तकाञ्चनभूषणायै स्वाहा
४३३ ॐ त्रैयम्बकायै स्वाहा
४३४ ॐ त्रिवर्गायै स्वाहा
४३५ ॐ त्रिकालज्ञानदायिन्यै स्वाहा
४३६ ॐ तर्पणायै स्वाहा
४३७ ॐ तृप्तिदायै स्वाहा
४३८ ॐ तृप्तायै स्वाहा

४३९ ॐ तापस्यै स्वाहा
४४० ॐ तुम्बुरुस्तुतायै स्वाहा
४४१ ॐ तार्क्ष्यस्थयै स्वाहा
४४२ ॐ त्रिगुणाकारायै स्वाहा
४४३ ॐ त्रिभंग्यै स्वाहा
४४४ ॐ तनुवल्लयै स्वाहा
४४५ ॐ थात्कार्यै स्वाहा
४४६ ॐ थारवायै स्वाहा
४४७ ॐ थान्तायै स्वाहा
४४९ ॐ दीनवत्सलायै स्वाहा
४५० ॐ दानवान्तकर्यै स्वाहा
४५१ ॐ दुर्गायै स्वाहा
४५२ ॐ दुर्गासुरनिवर्हिण्यै स्वाहा
४५३ ॐ देवरीत्यै स्वाहा
४५४ ॐ दिवारात्र्यै स्वाहा
४५५ ॐ द्रौपद्यै स्वाहा
४५६ ॐ दुन्दुभिस्वनायै स्वाहा
४५७ ॐ देवयान्यै स्वाहा
४५८ ॐ दुरावासायै स्वाहा
४५९ ॐ दारिद्र्योद्भेदिन्यै स्वाहा
४६० ॐ दिवायै स्वाहा
४६१ ॐ दामोदरप्रियायै स्वाहा
४६२ ॐ दीप्तायै स्वाहा
४६३ ॐ दिग्वासायै स्वाहा
४६४ ॐ दिग्विमोहिन्यै स्वाहा
४६५ ॐ दण्डकारण्यनिलयायै स्वाहा
४६६ ॐ दण्डिन्यै स्वाहा
४६७ ॐ देवपूजितायै स्वाहा
४६८ ॐ देववन्द्यायै स्वाहा
४६९ ॐ दिविषदायै स्वाहा
४७० ॐ द्वेषिण्यै स्वाहा
४७१ ॐ दानवाकृतये स्वाहा
४७२ ॐ दीनानाथस्तुतायै स्वाहा
४७३ ॐ दीक्षायै स्वाहा
४७४ ॐ दैवतादिस्वरूपिण्यै
४७५ ॐ धात्र्यै स्वाहा
४७६ ॐ धनुर्धरायै स्वाहा
४७७ ॐ धेनवे स्वाहा
४७८ ॐ धारिण्यै स्वाहा
४७९ ॐ धर्मचारिण्यै स्वाहा

४८० ॐ धरंधरायै स्वाहा
४८१ ॐ धराधरायै स्वाहा
४८२ ॐ धनदायै स्वाहा
४८३ ॐ धान्यदोहिन्यै स्वाहा
४८४ ॐ धर्मशीलायै स्वाहा
४८५ ॐ धनाध्यक्षायै स्वाहा
४८६ ॐ धनुर्वेदविशारदायै स्वाहा
४८७ ॐ धृत्यै स्वाहा
४८८ ॐ धन्यायै स्वाहा
४८९ ॐ धृतपदायै स्वाहा
४९० ॐ धर्मराजप्रियायै
४९१ ॐ ध्रुवायै स्वाहा
४९२ ॐ धूमावत्यै स्वाहा
४९३ ॐ धूमकेश्यै स्वाहा
४९४ ॐ धर्मशास्त्रप्रकाशिन्यै स्वाहा
४९५ ॐ नन्दायै स्वाहा
४९६ ॐ नन्दप्रियायै स्वाहा
४९७ ॐ निद्रायै स्वाहा
४९८ ॐ नृनुतायै स्वाहा
४९९ ॐ नन्दनात्मिकायै स्वाहा
५०० ॐ नर्मदायै स्वाहा
५०१ ॐ नलिन्यै स्वाहा
५०२ ॐ नीलायै स्वाहा
५०३ ॐ नीलकण्ठसमाश्रयायै स्वाहा
५०४ ॐ नारायणप्रियायै स्वाहा
५०५ ॐ नित्यायै स्वाहा
५०६ ॐ निर्मलायै स्वाहा
५०७ ॐ निर्गुणायै स्वाहा
५०८ ॐ निधये स्वाहा
५०९ ॐ निराधारायै स्वाहा
५१० ॐ निरुपमायै स्वाहा
५११ ॐ नित्यशुद्धायै स्वाहा
५१२ ॐ निरञ्जनायै स्वाहा
५१३ ॐ नादबिन्दुकलातीतायै स्वाहा
५१४ ॐ नादबिन्दुकलात्मिकायै स्वाहा
५१५ ॐ नृसिंहिन्यै स्वाहा

५१६ ॐ नगधरायै स्वाहा
५१७ ॐ नृपनागविभूषितायै स्वाहा
५१८ ॐ नरकक्लेशशमन्यै स्वाहा
५१९ ॐ नारायणपदोद्भवायै स्वाहा
५२० ॐ निरवद्यायै स्वाहा
५२१ ॐ निराकारायै स्वाहा
५२२ ॐ नारदप्रियकारिण्यै स्वाहा
५२३ ॐ नानाज्योतिस्समाख्यातायै स्वाहा
५२४ ॐ निधिदायै स्वाहा
५२५ ॐ निर्मलात्मिकायै स्वाहा
५२६ ॐ नवसूत्रधरायै स्वाहा
५२७ ॐ नीतये स्वाहा
५२८ ॐ निरुपद्रवकारिण्यै स्वाहा
५२९ ॐ नन्दजायै स्वाहा
५३० ॐ नवरत्नाढ्यायै स्वाहा
५३१ ॐ नैमिषारण्यवासिन्यै स्वाहा
५३२ ॐ नवनीतप्रियायै स्वाहा
५३३ ॐ नार्यै स्वाहा
५३४ ॐ नीलजीमूतनिस्वनायै स्वाहा
५३५ ॐ निमेषिण्यै स्वाहा
५३६ ॐ नदीरूपायै स्वाहा
५३७ ॐ नीलग्रीवायै स्वाहा
५३८ ॐ निशीश्वर्यै स्वाहा
५३९ ॐ नामावल्यै स्वाहा
५४० ॐ निशुम्भघ्न्यै स्वाहा
५४१ ॐ नागलोकनिवासिन्यै स्वाहा
५४२ ॐ नवजांबूनदप्रख्यायै स्वाहा
५४३ ॐ नागलोकाधिदेवतायै स्वाहा
५४४ ॐ नूपुराक्रान्तचरणायै स्वाहा
५४५ ॐ नरचित्तप्रमोदिन्यै स्वाहा
५४६ ॐ निमग्नारक्तनयनायै स्वाहा

५४७ ॐ निर्घातसमनिस्वनायै स्वाहा
५४८ ॐ नन्दनोद्यानतिरतायै स्वाहा
५४९ ॐ निर्व्यूहोपरिचारिण्यै स्वाहा
५५० ॐ पार्वत्यै स्वाहा
५५१ ॐ परमोदारायै स्वाहा
५५२ ॐ परब्रह्मात्मिकायै स्वाहा
५५३ ॐ परायै स्वाहा
५५४ ॐ पञ्चकोशविनिर्मुक्तायै स्वाहा
५५५ ॐ पञ्चपातकनाशिन्यै स्वाहा
५५६ ॐ परचित्तविधानज्ञायै स्वाहा
५५७ ॐ पञ्चिकायै स्वाहा
५५८ ॐ पञ्चरूपिण्यै स्वाहा
५५९ ॐ पूर्णिमायै स्वाहा
५६० ॐ परमायै स्वाहा
५६१ ॐ प्रीत्यै स्वाहा
५६२ ॐ परतेजःप्रकाशिन्यै स्वाहा
५६३ ॐ पुराण्यै स्वाहा
५६४ ॐ पौरुष्यै स्वाहा
५६५ ॐ पुण्यायै स्वाहा
५६६ ॐ पुण्डरीकनिभेक्षणायै स्वाहा
५६७ ॐ पातालतलनिर्मग्नायै स्वाहा
५६८ ॐ प्रीतायै स्वाहा
५६९ ॐ प्रीतिविवर्धिन्यै स्वाहा
५७० ॐ पावन्यै स्वाहा
५७१ ॐ पादसहितायै स्वाहा
५७२ ॐ पेशलायै स्वाहा
५७३ ॐ पवनाशिन्यै स्वाहा
५७४ ॐ प्रजापतये स्वाहा
५७५ ॐ परिश्रान्तायै स्वाहा
५७६ ॐ पर्वतस्तनमण्डलायै स्वाहा
५७७ ॐ पद्मप्रियायै स्वाहा
५७८ ॐ पद्मसंस्थायै स्वाहा
५७९ ॐ पद्माक्ष्यै स्वाहा
५८० ॐ पद्मसंभवायै स्वाहा
५८१ ॐ पद्मपत्रायै स्वाहा

५८२ ॐ पद्मपदायै स्वाहा
५८३ ॐ पद्मिन्यै स्वाहा
५८४ ॐ प्रियभाषिण्यै स्वाहा
५८५ ॐ पशुपाशविनिर्मुक्तायै स्वाहा
५८६ ॐ पुरंध्रयै स्वाहा
५८७ ॐ पुरवासिन्यै स्वाहा
५८८ ॐ पुष्कायै स्वाहा
५८९ ॐ पुरुषायै स्वाहा
५९० पर्वायै स्वाहा
५९१ ॐ पारिजातकुसुमप्रियायै स्वाहा
५९२ ॐ पतिव्रतायै स्वाहा
५९३ ॐ पवित्राङ्ग्यै स्वाहा
५९४ ॐ पुष्पहासपरायणायै स्वाहा
५९५ ॐ प्रज्ञावतीसुतायै स्वाहा
५९६ ॐ प[illegible]त्यै स्वाहा
५९७ ॐ पुत्रपूज्यायै स्वाहा
५९८ ॐ पयस्विन्यै स्वाहा
५९९ ॐ पट्टिपाशधरायै स्वाहा
६०० ॐ पङ्क्त्यै स्वाहा
६०१ ॐ पितृलोकप्रदायिन्यै स्वाहा
६०२ ॐ पुराण्यै स्वाहा
६०३ ॐ पुण्यशीलायै स्वाहा
६०४ ॐ प्रणतार्तिविनाशिन्यै स्वाहा
६०५ ॐ प्रद्युम्नजनन्यै स्वाहा
६०६ ॐ पुष्टायै स्वाहा
६०७ ॐ पितामहपरिग्रहायै स्वाहा
६०८ ॐ पुण्डरीकपुरावासायै स्वाहा
६०९ ॐ पुण्डरीकसमाननायै स्वाहा
६१० ॐ पृथुजङ्घायै स्वाहा
६११ ॐ पृथुभुजायै स्वाहा
६१२ ॐ पृथुपादायै स्वाहा
६१३ ॐ पृथुदर्यै स्वाहा
६१४ ॐ प्रवालशोभायै स्वाहा
६१५ ॐ पिङ्गाक्ष्यै स्वाहा
६१६ ॐ पीतवाससे स्वाहा

६१७ ॐ प्रचापलायै स्वाहा
६१८ ॐ प्रसवायै स्वाहा
६१९ ॐ पुष्टिदायै स्वाहा
६२० ॐ पण्यायै स्वाहा
६२१ ॐ प्रतिष्ठायै स्वाहा
६२२ ॐ प्रणवागत्यै स्वाहा
६२३ ॐ पञ्चवर्णायै स्वाहा
६२४ ॐ पञ्चवाण्यै स्वाहा
६२५ ॐ पञ्चिकायै स्वाहा
६२६ ॐ पञ्जरस्थितायै स्वाहा
६२७ ॐ परमायायै स्वाहा
६२८ ॐ परज्योतिषे स्वाहा
६२९ ॐ परप्रीतये स्वाहा
६३० ॐ परागतये स्वाहा
६३१ ॐ पराकाष्ठायै स्वाहा
६३२ ॐ परेशान्यै स्वाहा
६३३ ॐ पावन्यै स्वाहा
६३४ ॐ पावकद्युतये स्वाहा
६३५ ॐ पुण्यभद्रायै स्वाहा
६३६ ॐ परिच्छेद्यायै स्वाहा
६३७ ॐ पुष्पहासायै स्वाहा
६३८ ॐ पृथूदर्यै स्वाहा
६३९ ॐ पीताङ्ग्यै स्वाहा
६४० ॐ पीतवसनायै स्वाहा
६४१ ॐ पीतशय्यायै स्वाहा
६४२ ॐ पिशाचिन्यै स्वाहा
६४३ ॐ पीतक्रियायै स्वाहा
६४४ ॐ पिशाचघ्न्यै स्वाहा
६४५ ॐ पाटलाक्ष्यै स्वाहा
६४६ ॐ पटुक्रियायै स्वाहा
६४७ ॐ पञ्चभक्षप्रियाचारायै स्वाहा
६४८ ॐ पूतनाप्राणघातिन्यै स्वाहा
६४९ ॐ पुन्नागवनमध्यस्थायै
६५० ॐ पुण्यतीर्थनिषेवितायै स्वाहा
६५१ ॐ पञ्चाङ्ग्यै स्वाहा
६५२ ॐ पराशक्त्यै स्वाहा
६५३ ॐ परमाह्लादकारिण्यै स्वाहा
६५४ ॐ पुष्पकाण्डस्थितायै स्वाहा
६५५ ॐ पूषायै स्वाहा

६५६ ॐ पोषिताखिलविष्टपायै स्वाहा
६५७ ॐ पानप्रियायै स्वाहा
६५८ ॐ पञ्चशिखायै स्वाहा
६५९ ॐ पन्नगोपरिशायिन्यै स्वाहा
६६० ॐ पञ्चमात्रात्मिकायै स्वाहा
६६१ ॐ पृथ्व्यै स्वाहा
६६२ ॐ पथिकायै स्वाहा
६६३ ॐ पृथुदोहिन्यै स्वाहा
६६४ ॐ पुराणन्याय-मीमांसायै स्वाहा
६६५ ॐ पाटल्यै स्वाहा
६६६ ॐ पुष्पगन्धिन्यै स्वाहा
६६७ ॐ पुण्यप्रजायै स्वाहा
६६८ ॐ परदात्र्यै स्वाहा
६६९ ॐ परमार्गैकगोचरायै स्वाहा
६७० ॐ प्रवालशोभायै स्वाहा
६७१ ॐ पूर्णाशायै स्वाहा
६७२ ॐ प्रणवायै स्वाहा
६७३ ॐ पल्लवोदर्यै स्वाहा
६७४ ॐ फलिन्यै स्वाहा
६७५ फलदायै स्वाहा
६७६ फलगवे स्वाहा
६७७ ॐ फूत्कार्यै स्वाहा
६७८ ॐ फलकाकृत्यै स्वाहा
६७९ ॐ फणीन्द्रभोगशयनायै स्वाहा
६८० ॐ फणिमण्डल-मण्डितायै स्वाहा
६८१ ॐ बालबालायै स्वाहा
६८२ ॐ बहुमतायै स्वाहा
६८३ ॐ बालातपनिभा-शुकायै स्वाहा
६८४ ॐ बलभद्रप्रियायै स्वाहा
६८५ ॐ वन्द्यायै स्वाहा
६८६ ॐ बडवायै स्वाहा
६८७ ॐ बुद्धिसंस्तुतायै स्वाहा
६८८ ॐ बन्दीदेव्यै स्वाहा
६८९ ॐ बिलवत्यै स्वाहा
६९० ॐ बडिशघ्न्यै स्वाहा

६९१ ॐ बलिप्रियायै स्वाहा
६९२ ॐ बान्धव्यै स्वाहा
६९३ ॐ बोधितायै स्वाहा
६९४ ॐ बुद्ध्यै स्वाहा
६९५ ॐ बन्धूककुसुमप्रियायै स्वाहा
६९६ ॐ बालभानुप्रभाकाराय स्वाहा
६९७ ॐ ब्राह्म्य स्वाहा
६९८ ॐ ब्राह्मणदेवतायै स्वाहा
६९९ ॐ बृहस्पतिस्तुतायै स्वाहा
७०० ॐ वृन्दायै स्वाहा
७०१ ॐ वृन्दावनविहारिण्यै स्वाहा
७०२ ॐ बालकिन्यै स्वाहा
७०३ ॐ बिलाहारायै स्वाहा
७०४ ॐ बिलवासायै स्वाहा
७०५ ॐ बहूदकायै स्वाहा
७०६ ॐ बहुनेत्रायै स्वाहा
७०७ ॐ बहुपदायै स्वाहा
७०८ ॐ बहुकर्णावतंसिकायै स्वाहा
७०९ ॐ बहुबाहुयुतायै स्वाहा
७१० ॐ बीजरूपिण्यै स्वाहा
७११ ॐ बहुरूपिण्यैस्वाहा
७१२ ॐ बिन्दुनादकलातीतायै स्वाहा
७१३ ॐ बिन्दुनादस्वरूपिण्यै स्वाहा
७१४ ॐ बद्धगोधांगुलित्राणायै स्वाहा
७१५ ॐ बदर्याश्रमवासिन्यै स्वाहा
७१६ ॐ वृन्दारकायै स्वाहा
७१७ ॐ बृहत्स्कन्धायै स्वाहा
७१८ ॐ बृहतीबाणपातिन्यै स्वाहा
७१९ ॐ वृन्दाध्यक्षायै स्वाहा
७२० ॐ बहुनुतायै स्वाहा
७२१ ॐ वनितायै स्वाहा
७२२ ॐ बहुविक्रमायै स्वाहा
७२३ ॐ बद्धपद्मासनासीनायै स्वाहा

७२४ ॐ विल्वपत्रतल-
स्थितायै स्वाहा
७२५ ॐ बोधिद्रुमतिजा-
धारायै स्वाहा
७२६ ॐ बोडिस्थायै स्वाहा
७२७ ॐ बिन्दुदर्पणायै स्वाहा
७२८ ॐ बालायै स्वाहा
७२९ ॐ बाणासनवत्यै स्वाहा
७३० ॐ वडवानलवेगिन्यै
स्वाहा
७३१ ॐ ब्रह्माण्डबहिरन्तः
स्थायै स्वाहा
७३२ ॐ ब्रह्मकङ्कणसूत्रिण्यै
स्वाहा
७३३ ॐ भवान्यै स्वाहा
७३४ ॐ भीषणवत्यै स्वाहा
७३५ ॐ भाविन्यै स्वाहा
७३६ ॐ भयहारिण्यै स्वाहा
७३७ ॐ भद्रकाल्यै स्वाहा
७३८ ॐ भुजङ्गाक्ष्यै स्वाहा
७३९ ॐ भारत्यै स्वाहा
७४० ॐ भारताशयायै स्वाहा
७४१ ॐ भैरव्यै स्वाहा
७४२ ॐ भीषणाकारायै स्वाहा
७४३ ॐ भूतिदायै स्वाहा
७४४ ॐ भूतिमालिन्यै स्वाहा
७४५ ॐ भामिन्यै स्वाहा
७४६ ॐ भोगनिरतायै स्वाहा
७४७ ॐ भद्रदायै स्वाहा
७४८ ॐ भूरिविक्रमायै स्वाहा
७४९ ॐ भूतवासायै स्वाहा
७५० ॐ भृगुलतायै स्वाहा
७५१ ॐ भार्गव्यै स्वाहा
७५२ ॐ भूसुरार्चितायै स्वाहा
७५३ ॐ भागीरथ्यै स्वाहा
७५४ ॐ भोगवत्यै स्वाहा
७५५ ॐ भवनस्थायै स्वाहा
७५६ ॐ भिषग्वरायै स्वाहा
७५७ ॐ भामिन्यै स्वाहा
७५८ ॐ भोगिन्यै स्वाहा
७५९ ॐ भाषायै स्वाहा
७६० ॐ भवान्यै स्वाहा
७६१ ॐ भूरिदक्षिणायै स्वाहा
७६२ ॐ भगात्मिकायै स्वाहा

७६३ ॐ भीमवत्यै स्वाहा
७६४ ॐ भवबन्धविमोचिन्यै स्वाहा
७६५ ॐ भजनीयायै स्वाहा
७६६ ॐ भूतधात्रीरञ्जतायै स्वाहा
७६७ ॐ भुवनेश्वय स्वाहा
७६८ ॐ भुजङ्गवलयायै स्वाहा
७६९ ॐ भीमायै स्वाहा
७७० ॐ भेरुण्डायै स्वाहा
७७१ ॐ भागधेयिन्यै स्वाहा
७७२ ॐ मात्रे स्वाहा
७७३ ॐ मायायै स्वाहा
७७४ ॐ मधुमत्यै स्वाहा
७७५ ॐ मधुजिह्वायै स्वाहा
७७६ ॐ मधुप्रियायै स्वाहा
७७७ ॐ महादेव्यै स्वाहा
७७८ ॐ महाभागायै स्वाहा
७७९ ॐ मालिन्यै स्वाहा
७८० ॐ मीनलोचनायै स्वाहा
७८१ ॐ मायातीतायै स्वाहा
७८२ ॐ मधुमत्यै स्वाहा
७८३ ॐ मधुमांसायै स्वाहा
७८४ ॐ मधुद्रवायै स्वाहा
७८५ ॐ मान्यै स्वाहा
७८६ ॐ मधुसम्भूतायै स्वाहा
७८७ ॐ मिथिलापुरवासिन्यै स्वाहा
७८८ ॐ मधुकैटभसंहर्त्र्यै स्वाहा
७८९ ॐ मेदिन्यै स्वाहा
७९० ॐ मेघमालिन्यै स्वाहा
७९१ ॐ मन्दोदर्यै स्वाहा
७९२ ॐ महामायायै स्वाहा
७९३ ॐ मैथिल्यै स्वाहा
७९४ ॐ मसृणप्रियायै स्वाहा
७९५ ॐ महालक्ष्म्यै स्वाहा
७९६ ॐ महाकाल्यै स्वाहा
७९७ ॐ महाकन्यायै स्वाहा
७९८ ॐ महेश्वर्यै स्वाहा
७९९ ॐ माहेन्द्र्यै स्वाहा
८०० ॐ मेरुतनयायै स्वाहा
८०१ ॐ मन्दारकुसुमार्चितायै स्वाहा

८०२ ॐ मञ्जुमञ्जीर-चरणायै स्वाहा
८०३ ॐ मोक्षदायै स्वाहा
८०४ ॐ मञ्जुभाषिण्यै स्वाहा
८०५ ॐ मधुरद्राविण्यै स्वाहा
८०६ ॐ मुद्रायै स्वाहा
८०७ ॐ मलयायै स्वाहा
८०८ ॐ मलयान्वितायै स्वाहा
८०९ ॐ मेधायै स्वाहा
८१० ॐ मरतश्यामायै स्वाहा
८११ ॐ मागध्यै स्वाहा
८१२ ॐ मेनकात्मजायै स्वाहा
८१३ ॐ महामायै स्वाहा
८१४ ॐ महावीरायै स्वाहा
८१५ ॐ महाश्यामायै
८१६ ॐ मनुस्तुतायै स्वाहा
८१७ ॐ मातृकायै स्वाहा
८१८ ॐ मिहिराभासायै स्वाहा
८१९ ॐ मुकुन्दपदविक्र-मायै स्वाहा
८२० ॐ मूलाधारस्थितायै स्वाह
८२१ ॐ मुग्धायै स्वाहा
८२२ ॐ मणिपूरकवासिन्यै स्वाहा
८२३ ॐ मृगाक्ष्यै स्वाहा
८२४ ॐ महिषारूढ़ायै स्वाहा
८२५ ॐ महिषासुरमर्दिन्यै स्वाहा
८२६ ॐ योगासनायै स्वाहा
८२७ ॐ योगगम्यायै स्वाहा
८२८ ॐ योगायै स्वाहा
८२९ ॐ यौवनकाश्रयायै स्वाहा
८३० ॐ यौवन्यै स्वाहा
८३१ ॐ युद्धमध्यस्थायै स्वाहा
८३२ ॐ यमुनायै स्वाहा
८३३ ॐ युगधारिण्यै स्वाहा
८३४ ॐ यक्षिण्यै स्वाहा
८३५ ॐ योगयुक्तायै स्वाहा
८३६ ॐ यक्षराजप्रसूतिन्यै स्वाहा
८३७ ॐ यात्रायै स्वाहा
८३८ ॐ यानविधानज्ञायै स्वाहा

८३९ ॐ यदुवंससमुद्भवायै स्वाहा
८४० ॐ यकारादिहकारान्तायै स्वाहा
८४१ ॐ याजुष्यै स्वाहा
८४२ ॐ यज्ञरूपिण्यै स्वाहा
८४३ ॐ यामिन्यै स्वाहा
८४४ ॐ योगनिरतायै स्वाहा
८४५ ॐ यातुधानभयङ्कर्यै स्वाहा
८४६ ॐ रुक्मिण्यै स्वाहा
८४७ ॐ रमण्यै स्वाहा
८४८ ॐ रामायै स्वाहा
८४९ ॐ रेवत्यै स्वाहा
८५० ॐ रेणुकायै स्वाहा
८५१ ॐ रत्यै स्वाहा
८५२ ॐ रौद्र्यै स्वाहा
८५३ ॐ रौद्रप्रियाकारायै स्वाहा
८५४ ॐ राममात्रे स्वाहा
८५५ ॐ रतिप्रियायै स्वाहा
८५६ ॐ रोहिण्यै स्वाहा
८५७ ॐ राज्यदायै स्वाहा
८५८ ॐ रेवायै स्वाहा
८५९ ॐ रमायै स्वाहा
८६० ॐ राजीवलोचनायै स्वाहा
८६१ ॐ राकेश्यै स्वाहा
८६२ ॐ रूपसम्पन्नायै स्वाहा
८६३ ॐ रत्नसिंहासनस्थितायै स्वाहा
८६४ ॐ रक्तमाल्याम्बरधरायै स्वाहा
८६५ ॐ रक्तगन्धानुलेपनायै स्वाहा
८६६ ॐ राजहंससमारूढायै स्वाहा
८६७ ॐ रम्भायै स्वाहा
८६८ ॐ रक्तबलिप्रियायै स्वाहा
८६९ ॐ रमणीययुगाधारायै स्वाहा
८७० ॐ राजिताखिलभूतलायै स्वाहा
८७१ ॐ रुरुचर्मपरीधानायै स्वाहा
८७२ ॐ रथिन्यै स्वाहा

८७३ ॐ रत्नमालिकायै स्वाहा
८७४ ॐ रोगेश्यै स्वाहा
८७५ ॐ रोगशमन्यै स्वाहा
८७६ ॐ राविण्यै स्वाहा
८७७ ॐ रोमहर्षिण्यै स्वाहा
८७८ ॐ रामचन्द्रपदा-
क्रान्तायै स्वाहा
८७९ ॐ रावणच्छेदकारिण्यै
स्वाहा
८८० ॐ रत्नवस्त्रपरिच्छिन्नायै
८८१ ॐ रथस्थायै स्वाहा
८८२ ॐ रुक्मभूषणायै स्वाहा
८८३ ॐ लज्जाधिदेवतायै
स्वाहा
८८४ ॐ लोलायै स्वाहा
८८५ ॐ ललितायै स्वाहा
८८६ ॐ लिङ्गधारिण्यै स्वाहा
८८७ ॐ लक्ष्म्यै स्वाहा
८८८ ॐ लोलायै स्वाहा
८८९ ॐ लुप्तविषायै स्वाहा
८९० ॐ लाकिन्यै स्वाहा
८९१ ॐ लोकविश्रुतायै स्वाहा

८९२ ॐ लज्जायै स्वाहा
८९३ ॐ लम्बोदरीदेव्यै स्वाहा
८९४ ॐ ललनायै स्वाहा
८९५ ॐ लोकधारिण्यै स्वाहा
८९६ ॐ वरदायै स्वाहा
८९७ ॐ वन्दितायै स्वाहा
८९८ ॐ विद्यायै स्वाहा
८९९ ॐ वैष्णव्यै स्वाहा
९०० ॐ विमलाकृत्यै स्वाहा
९०१ ॐ वाराह्यै स्वाहा
९०२ ॐ विजरायै स्वाहा
९०३ ॐ वर्षायै स्वाहा
९०४ ॐ वरलक्ष्म्यै स्वाहा
९०५ ॐ विलासिन्यै स्वाहा
९०६ ॐ विनतायै स्वाहा
९०७ ॐ व्योममध्यस्थायै
९०८ ॐ वारिजासन-
संस्थितायै स्वाहा
९०९ ॐ वारुण्यै स्वाहा
९१० ॐ वेणुसंभूतायै स्वाहा
९११ ॐ वीतिहोत्रायै स्वाहा
९१२ ॐ विरूपिण्यै स्वाहा

९१३ ॐ वायुमण्डलमध्यस्थायै स्वाहा
९१४ ॐ विष्णुरूपायै स्वाहा
९१५ ॐ विधिप्रियायै स्वाहा
९१६ ॐ विष्णुपत्न्यै स्वाहा
९१७ ॐ विष्णुमत्यै स्वाहा
९१८ ॐ विशालाक्ष्यै स्वाहा
९१९ ॐ वसुन्धरायै स्वाहा
९२० ॐ वामदेवप्रियायै स्वाहा
९२१ ॐ वेलायै स्वाहा
९२२ ॐ वज्रिण्यै स्वाहा
९२३ ॐ वसुदोहिन्यै स्वाहा
९२४ ॐ वेदाक्षरपरीताङ्ग्यै स्वाहा
९२५ ॐ वाजपेयफलप्रदायै स्वाहा
९२६ ॐ वासव्यै स्वाहा
९२७ ॐ वामजनन्यै स्वाहा
९२८ ॐ वैकुण्ठनिलयायै स्वाहा
९२९ ॐ वरायै स्वाहा
९३० ॐ व्यासप्रियायै स्वाहा
९३१ ॐ वर्मधरायै स्वाहा
९३२ ॐ वाल्मीकिपरिसेवितायै स्वाहा
९३३ ॐ शाकम्भर्यै स्वाहा
९३४ ॐ शिवायै स्वाहा
९३५ ॐ शान्तायै स्वाहा
९३६ ॐ शारदायै स्वाहा
९३७ शरणागतये स्वाहा
९३८ ॐ शातोदर्यै स्वाहा
९३९ ॐ शुभाचारायै स्वाहा
९४० ॐ शुम्भासुरविमर्दिन्यै
९४१ ॐ शोभावत्यै स्वाहा
९४२ ॐ शिवाकारायै स्वाहा
९४३ ॐ शङ्करार्धशरीरिण्यै स्वाहा
९४४ ॐ शोणायै स्वाहा
९४५ ॐ शुभाशयायै स्वाहा
९४६ ॐ शुभ्रायै स्वाहा
९४७ ॐ शिरःसन्धानकारिण्यै स्वाहा
९४८ ॐ शरावत्यै स्वाहा
९४९ ॐ शरानन्दायै स्वाहा
९५० ॐ शरज्ज्योत्स्नायै स्वाहा

९५१ ॐ शुभाननायै स्वाहा
९५२ ॐ शरभायै स्वाहा
९५३ ॐ शूलिन्यै स्वाहा
९५४ ॐ शुद्धायै स्वाहा
९५५ ॐ शबर्यै स्वाहा
९५६ ॐ शुकवाहनायै स्वाहा
९५७ ॐ श्रीमत्यै स्वाहा
९५८ ॐ श्रीधरानन्दायै स्वाहा
९५९ ॐ श्रवणानन्ददायिन्यै स्वाहा
९६० ॐ शर्वाण्यै स्वाहा
९६१ ॐ शर्वरीवन्द्यायै स्वाहा
९६२ ॐ षड्भाषायै स्वाहा
९६३ ॐ षड्ऋतुप्रियायै स्वाहा
९६४ ॐ षडाधारस्थितादेव्यै स्वहा
९६५ ॐ षण्मुखप्रियकारिण्यै स्वाहा
९६६ ॐ षडङ्गरूपसुमतिसुरा-सुरनमस्कृतायै स्वाहा
९६७ ॐ सरस्वत्यै स्वाहा
९६८ ॐ सदाधारायै स्वाहा
९६९ ॐ सर्वमङ्गलकारिण्यै स्वाहा
९७० ॐ सामगानप्रियायै
९७१ ॐ सूक्ष्मायै स्वाहा
९७२ ॐ सावित्र्यै स्वाहा
९७३ ॐ सामसम्भवायै स्वाहा
९७४ ॐ सर्वावासायै स्वाहा
९७५ ॐ सदानन्दायै स्वाहा
९७६ ॐ सुस्तन्यै स्वाहा
९७७ ॐ सागराम्बरायै स्वाहा
९७८ ॐ सर्वैश्वर्यप्रीयायै स्वाहा
९७९ ॐ सीद्ध्यै स्वाहा
९८० ॐ साधुबन्धुपराक्रमायै स्वाहा
९८१ ॐ सप्तर्षिमण्डलगतायै स्वाहा
९८२ ॐ सोममण्डलवासिन्यै स्वाहा
९८३ ॐ सर्वज्ञायै स्वाहा
९८४ ॐ सान्द्रकरुणायै स्वाहा
९८५ ॐ समानाधिक-वर्जितायै स्वाहा

९८६ ॐ सर्वोत्तमायै स्वाहा
९८७ ॐ संगहीनायै स्वाहा
९८८ ॐ सद्गुणायै स्वाहा
९८९ ॐ सकलेष्टदायै स्वाहा
९९० ॐ सरघायै स्वाहा
९९१ ॐ सूर्यतनयायै स्वाहा
९९२ ॐ सुकेश्यै स्वाहा
९९३ ॐ सोमसंहत्यै स्वाहा
९९४ ॐ हिरण्यवर्णायै स्वाहा
९९५ ॐ हरिण्यै स्वाहा
९९६ ॐ ह्रींकार्यै स्वाहा
९९७ ॐ हंसवाहिन्यै स्वाहा
९९८ ॐ क्षौमवस्त्रपरीताङ्ग्यै ,,
९९९ ॐ क्षीराब्धितनयायै स्वाहा
१००० ॐ क्षमायै स्वाहा
१००१ ॐ गायत्र्यै स्वाहा
१००२ ॐ सावित्र्यै स्वाहा
१००३ ॐ पार्वत्यै स्वाहा
१००४ ॐ सरस्वत्यै स्वाहा
१००५ ॐ वेदगर्भायै स्वाहा
१००६ ॐ वरारोहायै स्वाहा
१००७ ॐ श्रीगायत्र्यै स्वाहा
१००८ ॐ पराम्बिकायै स्वाहा

—: ०० :—

## विविध यज्ञों के न्यास

## विष्णुयाग मंत्र न्यास विधिः

### पुरुषसूक्त न्यासः

सहस्रसीर्षेत्यादिषोडशर्चस्य पुरुषसूक्तस्य नारायण ऋषिः आद्यानां पञ्चदशानामनुष्टुप्छन्दः यज्ञेन यज्ञमित्यस्य त्रिष्टुप्छन्दः जगद्बीजं नारायणपुरुषो देवता, न्यासे हवने च विनियोगः।

| | |
|---|---|
| १ ॐ सहस्रशीर्षा० | वामकरे। |
| २ ॐ पुरुष ऽएव० | दक्षिणकरे। |
| ३ ॐ एतावानस्य:० | वामपादे। |
| ४ ॐ त्रिपादूर्ध्व:० | दक्षिणपादे। |
| ५ ॐ ततो विराडजायत० | वामजानौ। |
| ६ ॐ तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत:० | दक्षिणजानौ। |
| ७ ॐ तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतऽऋच:० | वामकट्याम्। |
| ८ ॐ तस्मादश्वा० | दक्षिकट्याम्। |
| ९ ॐ तं यज्ञं बर्हिषि० | नाभौ। |
| १० ॐ यत्पुरुषं व्यदधु:० | हृदये। |
| ११ ॐ ब्राह्मणोऽस्य० | वामबाहौ। |
| १२ ॐ चन्द्रमा मनस:० | दक्षिणबाहौ। |
| १३ ॐ नाभ्या ऽआसीदन्त० | कण्ठे। |
| १४ ॐ यत्पुरुषेण हविषा० | मुखे। |
| १५ ॐ सप्तास्यासन्० | अक्ष्णो:। |

१६ ॐ यज्ञेन यज्ञम्० मूर्ध्नि।

पुनः—

| | |
|---|---|
| १ ब्राह्मणोऽस्य० | हृदयाय नमः। |
| २ चन्द्रमा मनसः० | शिरसे स्वाहा। |
| ३ नाभ्या ऽआसीदन्त० | कवचाय हुम्। |
| ४ यत्पुरुषेण हविषा० | नेत्रत्रयाय वौषट्। |
| ५ सप्तास्यासन्० | शिखायै वषट्। |
| ६ यज्ञेन यज्ञम्० | अस्त्राय फट्। |

ध्यानम्— ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती
नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः।
केयूरवान् मकरकुण्डलवान् किरीटी
हारी हिरण्मयवपुर्धृतशङ्खचक्रः॥ १॥
शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्॥ २॥

॥ इति पुरुषसूक्तन्यासः॥

## अथ रुद्रयाग मंत्र न्यास विधिः

### रुद्रसूक्तन्यासः

नमस्त इति षोडशर्चस्य परमेष्ठी ऋषिः, नमस्त इत्यस्य गायत्री-छन्दः, यात इति त्रयाणामनुष्टुप्छन्दः, अध्यवोचदिति त्रयाणां पङ्क्ति-श्छन्द, नमोऽस्तु नीलग्रीवायेति सप्तानामनुष्टुप्छन्द, मा नो महान्तमिति द्वयोः कुत्स ऋषिर्जगतीछन्दः, सर्वेषामेको रुद्रो देवता, न्यासे हवने च विनियोगः।

| | |
|---|---|
| १ ॐ नमस्ते० | वामकरे। |
| २ याते रुद्र शिवा० | दक्षिणकरे। |
| ३ यामिषुं गिरिशन्त० | वामपादे। |
| ४ शिवेन वचसा० | दक्षिणपादे। |
| ५ अध्यवोचदधिवक्ता० | वामजानौ। |
| ६ असौ यस्ताम्रः० | दक्षिणजानौ। |
| ७ असौ योऽवसर्पति० | वामकट्याम्। |
| ८ नमोऽस्तु नीलग्रीवाय० | दक्षिणकट्याम्। |
| ९ प्रमुञ्च० | नाभौ। |
| १० विज्यन्धनु० | हृदये। |
| ११ या ते हेतिः० | वामबाहौ। |
| १२ परि ते धन्वना० | दक्षिणबाहौ। |
| १३ अवतत्त्यधनुष्ट्वम्० | कण्ठे। |
| १४ नमस्त ऽआयुधाय० | मुखे। |
| १५ मा नो महान्तम्० | नेत्रयोः। |
| १६ मा नस्तोके० | मूर्ध्नि। |

पुनः—

| | |
|---|---|
| १ या ते हेतिः० | हृदयाय नमः। |
| २ परि ते धन्वनः० | शिरसे स्वाहा। |
| ३ अवतत्य धनुष्ट्वम्० | शिखायै वषट्। |
| ४ नमस्त ऽआयुधाय० | कवचाय हुम्। |
| ५ मा नो महान्तम्० | नेत्राभ्यां वौषट्। |
| ६ मा नस्तोके० | अस्त्राय फट्। |

ध्यानम्—ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।
पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्।

॥ इति रुद्रसूक्तन्यासः ॥

## लक्ष्मी याग मंत्र न्यास विधिः

### * श्रीसूक्तन्यासः

हिरण्यवर्णामिति पञ्चदशर्चस्य श्रीसूक्तस्य आनन्द-कर्दम-चिक्लीतेन्दिरासुता ऋषयः, आद्यानां तिसृणामनुष्टुप्छन्दः चतुर्थ्याः प्रस्तारपंक्तिश्छन्दः, पञ्चमी-षष्ठयोस्त्रिष्टुप्छन्दः, ततोऽष्टानामनुष्टुप्छन्दः, अन्त्यायाः प्रस्तारपंक्तिश्छन्दः, श्रीरग्निश्च देवते न्यासेहवने च विनियोगः ।

| | |
|---|---|
| १ ॐ हिरण्यवर्णाम्० । | वामकरे । |
| २ ॐ तां मऽआवह० । | दक्षिणकरे । |
| ३ ॐ अश्वपूर्वाम्० । | वामपादे । |
| ४ ॐ कां सोऽस्मिताम्० । | दक्षिणपादे । |
| ५ ॐ चन्द्रां प्रभासाम्० । | वामजानौ । |
| ६ ॐ आदित्यवर्णे० | दक्षिणजानौ । |
| ७ ॐ उपैतु माम्० | वामकट्याम् । |
| ८ ॐ क्षुत्पिपासामलाम्० | दक्षिणकट्याम् । |
| ९ ॐ गन्धद्वाराम्० । | नाभौ । |

---

*हिरण्यवर्णामिति पञ्चदशर्चस्य श्रीसूक्तस्य आनन्दकर्दमचिक्लीतेन्दिरासुता ऋषयः आद्यत्रयस्यानुष्टुप्छन्दः, कां सोऽस्मीत्यस्य बृहतीछन्दः, चन्द्रां प्रभासामिति द्वयोस्त्रिष्टुप्छन्दः, उपैतु मां देवसख इत्यष्टकस्यानुष्टुप्छन्दः, अन्त्यस्य प्रस्तारपंक्तिश्छन्दः, श्रीरग्निश्च देवते व्यञ्जनानि बीजानि, स्वराः शक्तयः, बिन्दुः कीलकं महालक्ष्मीप्रीत्यर्थं न्यासे हवने च विनियोगः ।

१० ॐ मनसः काममाकूतिम्० हृदये ।
११ ॐ कर्दमेन प्रजा भूता० वामबाहौ ।
१२ ॐ आपः सृजन्त० दक्षिबाहौ ।
१३ ॐ आर्द्रां पुष्करिणीम्० कण्ठे ।
१४ ॐ आर्द्रां यष्करिणीम्० मुखे ।
१५ ॐ तां मऽआवह० नेत्रयोः ।
१६ ॐ यः शुचिः प्रयतो भूत्वा० मूर्ध्नि ।

पुनः —

१ कर्दमेन प्रजा भूता० हृदयाय नमः ।
२ आपः सृजन्तु० शिरसे स्वाहा ।
३ आर्द्रां पुष्करिणीम्० शिखायै वषट् ।
४ आर्द्रां यष्करिणीम्० कवचाय हुम् ।
५ तां म ऽआवह० नेत्राभ्यां वौषट् ।
६ यः शुचिः प्रयतो भूत्वा० अस्त्राय फट् ।

ध्यानम् — या सा पद्मासनस्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी
गम्भीरावर्त्तनाभिस्तनभरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया ।
लक्ष्मीर्दिव्यैर्गन्द्रैर्मणिगणखचितैः स्नापिता हेमकुम्भै-
र्नित्यं सा पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमाङ्गल्ययुक्ता ॥१॥

अरुणकमलसंस्था तद्रजःपुञ्जवर्णा
करकमलधृतेष्टाभीतियुग्माम्बुजा च ।
मणिमुकुटविचित्राऽलङ्कृताऽऽकल्पजालैः
सकलभुवनमाता सन्ततं श्रीः श्रियै नः ॥ २ ॥

॥ इति श्रीसूक्तन्यासः ॥

# गणेश याग मंन्त्र न्यास विधिः

## गणपतिसूक्तन्यासः

आ तू न इत्यष्टऋचात्मकस्य गणपतिसूक्तस्य वामदेव-नृमेध-कुत्सभरद्वाज-वसिष्ठ-पुरुमीढाजमीढ-दक्षा ऋषय,: प्रथमा गायत्री, द्वितीयतृतीये पत्थ्याबृहतीसतोबृहत्यौ, चतुर्थी त्रिष्टुप्, पञ्चमी जगती, षष्ठी त्रिष्टुप्, सप्तम्यष्टम्यौ गायत्र्यौ, आद्यास्तिस्र ऐन्द्रचः, चतुर्थ्यादित्या, पञ्चमी सावित्री, षष्ठी वायवी, सप्तमी ऐन्द्री, अष्टमी मैत्रावरुणी, सर्वासां न्यासे होमे च विनियोगः।

| | |
|---|---|
| ॐ आ तू न ऽइन्द्र वृत्रहन् | शिरसि। |
| अस्माकमर्द्धमा गहि | शिखायाम्। |
| महान् महीभिरूतिभिः | वामभुजे। |
| त्वमिन्द्र प्रतूर्त्तिषु | दक्षिणभुजे। |
| अभि विश्वा ऽअसि स्पृधः | वामनेत्रे। |
| अशस्तिहा जनिता विश्वतूरसि | दक्षिणनेत्रे। |
| त्व तूर्य तरुष्यत। | भ्रूमध्ये। |
| अनु ते शुष्मन्तुरयन्तमीयतुः | मुखे। |
| क्षोणी शिशुन्न मातरा | जिह्वायाम्। |
| विश्वास्ते स्पृधः श्नथयन्त मन्यवे | ग्रीवायाम्। |
| वृत्रं यदिन्द्र तूर्व्वसि | हृदि। |
| यज्ञो देवानां प्रत्येति सुम्नम् | वक्षसि। |
| आदित्यासो भवता मृडयन्तः | वामबाहौ। |

आ वोऽर्वाची सुमतिर्व्ववृत्यादम् दक्षिणबाहौ ।
अंहोश्चिद्या व्वरिवो व्वित्तारासत् उदरे ।
अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वम् लिङ्गे ।
शिवेभिरद्य परि पाहि नो गयम् वामकट्याम् ।
हिण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे दक्षिणकट्याम् ।
रक्षा माकिर्न्नो ऽअघशꣳस ऽईशत नितम्बे ।
प्र वीरया शुचयो दद्रिरे वाम् गुह्ये ।
अध्वर्युभिर्म्मधुमन्तः सुतासः वामणपादे ।
व्वह व्वायो नियुतो याह्यच्छा दक्षिणपादे ।
पिबा सुतस्यान्धसो मदाय जान्वोः ।
गाव ऽउपावतावतम् वामजङ्घायाम् ।
मही यज्ञस्य रप्सुदा दक्षिणजङ्घायाम् ।
उभा कर्ण्णा हिरण्यया नाभौ ।
काव्ययोराजानेषु ललाटे ।
क्रत्वा दक्षस्य दुरोणे स्तनयोः ।
रिशादसा सधस्थ ऽआ सर्वाङ्गेषु ।

ध्यानम्—गजाननं भूतगणादिसेवितं
कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम् ।
उमासुतं शोकविनाशकारकं
नमामि विघ्नेश्वरपादपङ्कजम् ॥ १ ॥
उद्यद्दिनेश्वररुचिं निजहस्तपद्मे
पाशाङ्कुशाभयवरान् दधतं गजास्यम् ।
रक्ताम्बरं सकलदुःखहरं गणेशं
ध्यायेत् प्रसन्नमखिलाभरणाभिराम् ॥ २ ॥

॥ इति गणपतिसूक्तन्यासः ॥

## विश्वशांतियाग मन्त्र न्यासः विधिः

### विश्वशान्तियज्ञ मन्त्रन्यासः

ऋचं वाचमिति चतुर्विंशतिमन्त्राणां प्रजापतिर्ऋषिः गायत्री छन्द विष्णुर्देवता, शान्त्यर्थं होमे विनियोगः ।

| | |
|---|---|
| १ ॐ दृते दृꣳ० ह मा ज्योक्ते० | हृदयाय नमः । |
| २ ॐ नमस्ते हरसे शोचिषे० | शिरसे स्वाहा । |
| ३ ॐ नमस्तेऽअस्तु विद्युते | शिखायै वषट् । |
| ४ ॐ यतोयतः० | कवचाय हुम् । |
| ५ ॐ सुमित्रिया नः० | नेत्रत्रयाय वौषट् । |
| ६ ॐ तच्चक्षुः० | अस्त्राय फट् । |

ध्यानम्– शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥

॥ इति विश्वशान्तियाग मन्त्रन्यासः ॥

# नवग्रहयाग मन्त्र न्यास विधिः

## * नवग्रहमन्त्रन्यासः

आ कृष्णेनेति हिरण्यस्तूपाङ्गिरस ऋषिस्त्रिष्टुछन्दः सविता देवता, इमन्देवा इति वरुण ऋषिः अत्यष्टिश्छन्दः सोमो देवता, अग्निर्मूर्धेति विरूपाक्षऋषिर्गायत्रीछन्दः भौमो देवता, उद्बुध्यस्वेति परमेष्ठी ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः बुधो देवता, बृहस्पत गृत्समद ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः बृहस्पतिर्देवता, अन्नात्परिस्रुत इति प्रजापत्यश्विसरस्वतीन्द्रा ऋषयः अतिजगतीछन्दः शुक्रो देवता, शन्नो देवीरिति दध्यङ्ङाथर्वणऋषिर्गायत्रीछन्दः शनिर्देवता, कया नश्चित्र इति वामदेवऋषिर्गायत्रीछन्दः राहुर्देवता, केतुं कृण्वन्निति मधुच्छन्दा ऋषिर्गायत्रीछन्दः केतुर्देवता, सूर्यादिनवग्रहाणां जपे होमे च विनियोगः।

| | |
|---|---|
| १ ॐ आ कृष्णेन० | हृदये। |
| २ ॐ इमन्देवाः० | उदरे। |
| ३ ॐ अग्निर्मूर्द्धा दिवः० | नाभौ। |
| ४ ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने० | कट्याम्। |
| ५ ॐ बृहस्पते० | ऊर्वोः। |
| ६ ॐ अन्नात्परिस्रुतः० | जान्वोः। |

---

* सर्वविधप्रतिष्ठापद्धतिषु नवग्रहाणां न्यासस्त्वित्थं प्रदर्शितः—

रविचन्द्राभ्यां नेत्रयोः। भौमाय हृदये। बुधाय स्कन्धे। बृहस्पतये जिह्वायाम्। शुक्राय लिङ्गे। शनैश्चराय ललाटे। राहवे पादयोः। केतवे केशेषु।

७ ॐ शन्नो देवीः० जङ्घयोः।
८ ॐ कया नश्चित्रः० पादयोः।
९ ॐ केतुं कृण्वन्० सर्वाङ्गेषु।

पुनः—

१ ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने० हृदयाय नमः।
२ ॐ बृहस्पते ऽअति० शिरसे स्वाहा।
३ ॐ अन्नात्परिस्रुतः० शिखायै वषट्।
४ शन्नो देवी० कवचाय हुम्।
५ ॐ कया नश्चित्रः० नेत्रत्रयाय वौषट्।
६ ॐ केतुं कृण्वन्० अस्त्राय फट्।

ध्यानम्—ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च।
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु॥

॥ इति नवग्रहमन्त्रन्यासः॥

# विविध देवी देवताओं के गायत्री मंत्र

## लक्ष्मी-गायत्री–

(क) महालक्ष्म्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥ ( ऋग्वेद-परिशिष्टभाग )

(ख) महालक्ष्म्यै च विद्महे विष्णुप्रियायै धीमही ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥ ( नारायणोपनिषत् ६ )

(ग) महालक्ष्म्यै च विद्महे महाश्रियै धीमहि ।
तन्नः श्रीः प्रचोदयात् ।

(घ) महालक्ष्यै च विद्महे महाश्रियै धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥

(ङ) महालक्ष्मीः च विद्महे विष्णुपत्नीं च धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥

(च) महादेवी च विद्महे विष्णुपत्नी च धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥

(छ) महाऽम्बिकायै विद्महे कर्मसिद्ध्यै च धीमही ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥ ( लिङ्गपुराण, उत्तरार्धं ४८।१३)

## विष्णु-गायत्री —

(क) नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि ॥
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥

( महानारायणोपनिषत् ६ लिङ्गपुराण, उत्तरार्ध ४८।१२ )

(ख नारायणाय विद्महे शेषशायिने धीमहि ।
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥

(ग) त्रैलोक्यमोहनाय विद्महे स्मराय धीमहि ।
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥

(घ) त्रैलोक्यमोहनाय विद्महे स्मराय धीमहि ।
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ।

---

## शिव-गायत्री--

(क) तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि ।
तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥
( नारायणोपनिषत् १४।२० लिङ्गपुराण, उत्तरार्ध ४८।७ )

(ख) तत्पुरुषाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि ।
तन्नः शिवः प्रचोदयात् ॥ ( लिङ्गपुराण, उत्तरार्ध ४८।५ )

(ग) सर्वेश्वराय विद्महे शूलहस्ताय धीमहि ।
तन्नो रुद्रः प्रचदोयात् ॥ ( लिङ्गपुराण, उत्तरार्ध ४८।२५ )

(घ) पुरुषस्य विद्महे सहस्राक्षस्य महादेवस्य धीमहि ।
तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ ( नारायणोपनिषत् ५ )

(ङ) तत्पुरुषाय विद्महे सहस्राक्ष-महादेवाय धीमहि ।
तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ ( तैत्ति० आ०, परि० १०१ )

(च ॐ महादेवाय विद्महे रुद्रमूर्तये धीमहि ।
तन्नः शिवः प्रचोदयात् ॥

---

## दुर्गा-गायत्री—

(क) कात्यायन्यै च विद्महे कन्यकुमारि च धीमहि ।
तन्नो दुर्गिः प्रचोदयात् ॥

(ख) महादेव्यै विद्महे दुर्गायै धीमहि ।
तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥

(ग) कात्यायन्यै विद्महे कन्याकुमार्यै धीमहि ।
तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ॥

---

## सूर्य-गायत्री

(क) आदित्याय विद्महे मार्तण्डाय धीमहि ।
तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् ॥

(ख) आदित्याय विद्महे प्रभाकराय धीमहि ।
तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् ॥

(ग) आदित्याय विद्महे सहस्रकिरणाय धीमहि ।
तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् ॥ ( सूर्योपनिषत् )

(घ) आदित्याय विद्महे सहस्राक्षाय धीमहि ।
तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् ॥

(ङ) आदित्याय विद्महे सहस्रकराय धीमहि ।
तन्नः सूर्य प्रचोदयात् ॥

(च) भास्कराय विद्महे दिवाकराय धीमहि ।
तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् ॥

(छ) भास्कराय विद्महे महद्द्युतिकराय धीमहि ।
तन्नः आदित्यः प्रचोदयात् ॥ ( नारायणोनिषत् ७ )

(ज) ॐ भास्कराय विद्महे महातेजाय धीमहि ।
तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् ॥

(झ) भास्कराय विद्महे महातेजसे धीमहि ।
तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् ॥

(ञ) सप्ततुरगाय विद्महे सहस्रकिरणाय धीमहि ।
तन्नो रविः प्रचोदयात् ॥

# यज्ञ - रहस्यम्

## तृतीयो भागः

## श्रौत और स्मार्तादिकर्मोंमें कुण्ड तथा मण्डप मुख्य है या गौण—

श्रौत; स्मार्त और तन्त्रिक ये तीन प्रकार के कर्म हैं। पौराणिक कर्म तांत्रिक में ही अन्तर्भूत हैं। पौराणिक कर्मको पृथक् मानने वाले चार प्रकार के कर्म मानते हैं। श्रौत और स्मार्त कर्म के प्रतिपादक आश्वलायन आदि श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र मन्वादिस्मृति और गौतमादि धर्मसूत्र भी हैं। इनमें कुण्ड मण्डप की परिभाषा देखने में नहीं आती है। परन्तु मण्डप का यज्ञशाला शब्दसे और कुण्ड का वेदी शब्द से व्यवहार होता है। 'वेदं कृत्वा वेदिं करोति' वेद्यामिव हुताशनः अमी वेदि परितः क्लृप्तधिष्ण्याऽः—इत्यादि स्थलों में वेदीशब्दसे कुण्ड का ग्रहण है, और यज्ञशाला, पत्नीशाला इत्यादि स्थलों में मण्डप के लक्षण से यज्ञशाला आदि का लक्षण भिन्न है। तान्त्रिक तो समचतुरस्र चारद्वार, चार उपचार मध्य में ऊँचा मण्डप कहते हैं। वैदिक तो एकद्वार, पताका आदि रहित तथा मध्योन्नति रहित मण्डप बनाते हैं। योनी, गर्त आदि सहित कुण्ड तान्त्रिकों को अभिमत है। वैदिकों को कुण्ड में योनि गर्तादि अभिमत नहीं हैं।

## काम्यकर्म में कुण्ड-मण्डपकी आवश्यकता—

नित्यं नैमित्तकं हित्वा सर्वमन्यत्समण्डपम्—कोटिहोमपद्यति और मात्स्योक्तवचन से काम्यकर्म में मण्डप आवश्यक है। नित्य तथा नैमित्तिक कर्म में ऐच्छिक है। नित्यं नैमित्तिकं होमं स्थण्डिले वा समाचरेत्। शारदातिलक मत से नित्य और नैमित्तिक कर्म स्थण्डिल या कुण्ड में करें। परन्तु काम्यकर्म को कुण्ड में ही करे।

## कुण्ड-मण्डप का प्रयोग—

तीन प्रकार के कर्म होते हैं— दृष्टफल अदृष्टफल और दृष्टादृष्टफलक। वृष्टिकामः कारीर्या यजेत— इत्यादिश्रुति से विहित कारीरेष्टयादि वृष्टिरूप ऐहिक फल का जनक होनेके कारण दृष्टफलक कर्म है। यावज्जीवमग्निहोत्रं जुहुयात् इत्यादि विधिबोधित अग्निहोत्रादि अदृष्टफलक कर्म हैं। दध्नेन्द्रियकामस्य जुहुयात् इत्यादि इन्द्रियकामनाके लिये अग्निहोत्रविधि दृष्टादृष्टफलक है। अग्निहोत्रविधि स्वस्वरूपसे अदृष्टफलका दधिरूप गुणांशसे दृष्ट इन्द्रियफलको भी उत्पन्न करता है। प्रश्न—प्रतियोगी और अभाव का विरोध होने के कारण दृष्ट और अदृष्ट का एकत्र समावेश कैसे होगा। उत्तर–हम दृष्टादृष्टका एकत्र समावेश नही कहते हैं। किन्तु दध्नेन्द्रियकामस्य जुहुयात् यह गुणविधि दृष्टादृष्टफलक है इतना ही कहते हैं। यह विरुद्ध नहीं है घट और घटध्वंस दोनों का कारण जैसा दण्ड है इसीप्रकार कुण्ड और मण्डप दृष्ट और अदृष्ट उभयफलक हैं। वप्रगर्तादि अंशसे हविका सम्यक् पाक होता है और होताओंको ज्वालादि संबन्ध नहीं होता इसलिए कुण्ड दृष्टफल है और नाभी, योनी, कण्ठ आदि अंश अदृष्टफलक भी है। यहाँ दृष्टफल संभव नहीं है। विधिबलात् नाभ्यादि निर्माण होता है अतः स्वर्गादि अदृष्टफलकी वहाँ कल्पना की जाती है – स स्वर्गः सर्वान् प्रत्यभीष्टत्वात्' इत्यादिशास्त्रसे अश्रुतफल में स्वर्गफल माना जाता है एवं मण्डप भी आतप वर्षादिका निवारक होने से दृष्टफलक है और स्तंभपरिमाण; स्तंभनिवेशका प्रकार विशेष इतर दारु का संनिवेशप्रकारविशेष इत्यादि नियमांशसे अदृष्टफलक भी है। जैसे व्रीहीन-वहन्ति— यहां पर अवहननविधि तण्डुलनिष्पादक होने के कारण दृष्टफलक है और अवहनन से ही निष्पादक करना नखविदलनादिना नहीं करना इत्यादि नियमांशसे अदृष्टफल भी है।

## कुण्डस्वरूप—

तत्तत्कर्मानुरूपपरिमाणवत् मेखला-गर्त-कण्ठ-योनि-नाभिमत्
अग्न्यायतनं तान्त्रिकाभिमतं कुण्डमुच्यते.।

## स्थण्डिलस्वरूप—

हवनकर्मपर्याप्तो वालुकादिद्रव्यैरास्तृतश्चतुरेकाद्यङ्गुलोत्सेधो भूभागः स्थण्डिलम्। इसमें कुण्डधर्म मेखलादि कोई मानते हैं कोई नहीं मानते हैं। अतः मेखलादि कृताकृत है।

## न्यूनाधिकप्रमाण भी कुण्ड और मण्डप कर्मोपयोगी होते हैं या नहीं—

शास्त्रमें कुण्डका प्रमाण होमसंख्याके अनुसार विहित है। उसमें भी—मुष्टिमात्रमितं कुण्डं शतार्धं संप्रक्षते। ( शारदा० ) एकहस्तमितं कुण्डं शतार्धं सम्प्रचक्षते। ( शारदा० ) यह दो प्रकार विहित है। सिद्धान्तशेखरमें—लक्षार्धे त्रिकरं कुण्डम् इत्यादिसे प्रकारान्तरविहित है। इसप्रकार परस्पर विरुद्ध वचनों की व्यवस्था कोटिहोमपद्धतिकार ने की है—एतत् शीघ्रदाहिघृतादिद्रव्यहोमविषयम्। तिलयवादिस्थूलद्रव्यहोमे तु होमसङ्ख्याविशेषाम्नातमेव कुण्डं ग्राह्यम्। घृतादि होमद्रव्यमें अल्पपरिमाण और स्थूलद्रव्यमें अधिक परिमाण का कुण्ड होता है। यह व्यवस्था बिकल्प जहाँ दो वचनका तुल्यबलविरोध हो वहाँ माना जाता है। 'तुल्यबलविरोधे विकल्पः'—यह शास्त्रसिद्धान्त है। वह विकल्प दो प्रकारका है—व्यवस्थितविकल्प और तुल्यविकल्प। जहाँ व्यवस्थापक कोई हो उसको व्यवस्थित कहते हैं। जहाँ व्यवस्थापक न हो उसको तुल्यविकल्प कहते हैं। जैसे-उदिते जुहोति, अनुदिते जुहोति' यह दो वाक्य हैं। प्रथमश्रुतिसे सूर्योदयानन्तर अग्निहोत्र विहित है और द्वितीयश्रुतिसे सूर्योदयात् प्राक् सिद्ध है। ये दोनों श्रुतियाँ अग्निहोत्र विधायक नहीं है। अग्निहोत्र तो—यावज्जीव-

मग्निहोत्रं जुहुयात्—इसीसे सिद्ध है। किन्तु अग्निहोत्र का अनुवाद करके तदङ्गभूत काल विधायक ये श्रुति है इसीलिये इनको गुणविधि कहते हैं। यद्यपि यहाँ विधिवाचक लिङ्गादि नहीं है। तथापि लट्का लिङ्गत्वेन विपरिणाम होता है। इन दोनों श्रुतियों का परस्परविरोध होने पर दोनों तुल्यबल है, अतः विकल्पका आश्रयण होता है। वह भी जिनके सूत्रमें उदितहोम विहित है, उनको उदित होमी होना चाहिये और जिनके सूत्र में अनुदितहोम विहित है उनको अनुदितहोम करना चाहिये। यह व्यस्थित विकल्प हैं। अतिरात्रे षोडशिनं गृह्णाति नातिरात्रे षोडशिनं गृह्णाति इत्यादि में व्यवस्वथापक न होनेसे तुल्यविकल्प हैं। अतः अत्तिरात्रयाग में षोडशिग्रह ग्रहण ऐच्छिक है। प्रकृतमें कुण्डके विषय में न्यूनाधिक व्यवस्थित परिमाण प्रतिपादक वाक्योंमें व्यस्थापक गुरुलघुद्रव्यादि है—अतः विकल्प माना जाता है। इस प्रकार यावत्संख्याक होममें यावत्परिमाण कुण्ड विहिति है वहाँ उसमें न्यूनाधिक परिमाणवाला कुण्ड न्यूनाधिक कहा जाता है। एतादृश न्यूनाधिक परिमाण कुण्डका भी कहीं कहीं उपयोग होता है। न्यूनसंख्योदिते कुण्डेऽधिको होमो विधीयते। अनुक्तकुण्डो न्यूनस्तु नाधिके शस्यते क्वचित्। ( कोटिहोमप० ) न्यूनसंख्यावाले कुण्ड में अधिक हवन होता है। अधिक संख्यावाले कुण्ड में न्यूनहवन नहीं नहीं होता है। इसी प्रकार अधिक कुण्ड में न्यूनहोम भी कहीं अभिमत है। कोटिहोम-पद्धति में—न्यूनसंखेऽपि स्थूलद्रव्यपरिमाणाधिक्यादावधिकसंख्योक्तमपि कुण्ड भवति। अर्थात्परिमाणम्—इति कात्यायनोक्तेः। न्यूनसंख्यहोम में भी अधिकहोमसंख्यावाला कुण्ड होता है—यह लिखा है। कुण्डरत्नावली में भी आहुति तारतम्यसे कुण्डविस्तार कहकर अन्त में कहा है कि कुण्डव्यस्था पृथुसूक्ष्ममानात् द्रव्यस्थल कार्या सुधिया सुधीभिः। कुण्ड व्यवस्था द्रव्यके स्थूल और सूक्ष्ममानसे अपनी बुद्धिसे विद्वानों को करना चाहिये। इससे सिद्ध होता है कि चर्वादिगुरुद्रव्य होम में अधिक प्रमाण भी कुण्डग्राह्य है। शतार्धेरत्निः स्यात्—इत्यादि वचनसे शतार्ध शत सहस्रादि हवन में कुण्ड का विधान सिद्ध

हुआ । परन्तु शतादि आन्तरालिक संख्याकहोम में कुण्डपरिमाण कितना हो इस शकाको दूर करने के लिये 'न्यूनसंख्यों दिते' यह वचन है । इसलिये नवशत अष्टशतादि अनुक्त कुण्डकहोम सहस्रहोमोदित कुण्ड में नहीं करना किन्तु-पूर्वकथितशतसंख्याकहोमकुण्ड में ही करना यह सिद्ध होता है । इस प्रकार न्यूनसंख्योदिते' यह वचन अनुक्त कुण्डक आन्तरालिक हो में न्यूनकुण्ड का विधायक हुआ । तब यही वचन अधिककुण्ड में गुरुद्रव्यक न्यूनहोम का निषेध नहीं कर सकता है। क्योंकि दो कार्य का विधान करने से वाक्यभेद दोष होता है। पूर्वार्द्ध से न्यूनकुण्ड में अधिक होमविधान और उत्तरार्द्ध से अधिक कुण्ड में न्यून होम का निषेध । विधानद्वय करने में 'अनुक्त कुण्डों न्यूनस्तु' यह अनुक्त कुण्डस्वरूप जो होमका विशेषण हैं यह बाधित होता है । कदाचित् कहें कि—'न्यूनाधिकं न कर्तव्यं कुर्याद्वि-नाशनम् ( परशुरा० ) इस वचनान्तर के रहते अधिक कुण्ड उपादेय नहीं हो सकता है तो इसका उत्तर यह है कि—यह वचन भी प्रकृ-तार्थ साधक नहीं है किन्तु इस वचन का ही नाधिकाङ्ग लक्षण रहित कुण्ड निषेध में ही तात्पर्य हैं। इस वचन के पूर्व "आयामखातविस्तारा-यथातथं तथातथम्" यह वचन है और 'खातेऽधिके भवेद्रोगी हीने धेनुधनक्षयः' । यह उत्तर बचन है । इसप्रकार पूर्वापरपर्यालोचनया अलक्षण कुण्ड का निषेधक ही परशुराम वचन है—अधिक कुण्ठ में अल्पा-हुति का नहीं यह स्पष्ट हैं ।

कोई विद्वान् 'अनुक्तकुण्डों न्यूनस्तु नाधिके शक्यते क्वचित्' यहाँ क्वचित् शब्द से अधिक कुण्डमात्रसे न्यूनहोमका निषेध करते हैं। परन्तु वह भी ठीक नहीं है, क्योंकि चार हाथके कुड में जिसमें दो दों हाथके चार भुजमान हैं वहां पर 'खातं क्षेत्रसमं प्राहुः इत्यादि शास्त्रसे दो हाथ के खात करने पर कुण्डावकाशरूप क्षेत्रफल आठ हाथ का होता है एवं द्वित्रि-हस्तादि कुण्ड में सर्वत्रफलके आधिक्य होने पर भी द्विहस्त त्रिहस्त चतुर्हस्त कुण्ड यही व्यवहार प्रामाणिक करते हैं । विचार करने पर तत्त-

होम के प्रति ये भी अधिक कुण्ड है, तो क्वचित शब्दसे यदि अधिककुण्डत्वावच्छिन्न में न्यूनहोम सामान्य निषेध माना जाय तो कुण्डों का भी निषेध हो जायगा । कोटिहोमपद्धति में स्पष्ट कहा है- कि – यद्यपि द्विहस्तत्रिहस्तादिकुण्डेषु हस्तमात्रमेव खातं युक्तम अन्यथा क्षेत्रफलाधिक्यात् । तथापि वचनादधिकमपि खातं न दोषाय। आगे चलकर लिखा है—एतेन कुण्डभूतलमेव क्षेत्रफलमितिवदंतः परास्ताः । गर्तस्य न्यूनाधिक्येऽपि भूतले प्रमाणाधिक्यन्यूनत्वाद्यसंभवात् । सिद्धस्य भूतलस्य फलत्वायोगाच्च । साध्यत्ववकाशः फलत्वेनाभ्युपगन्तुं युक्तम् न च ज्योतिष्टोमेन स्वर्गकामो यजेतेत्यादौ सिद्धस्य कथं फलत्वाभ्युगम इत्यात्र शंकनीयम् । तत्रापि साध्यस्य कर्तृस्वर्गसंबंधस्यैव फलत्वमिति सन्तोष्टव्यम् ।

कुण्डभूतल ही क्षेत्रफल है यह भी ठीक नहीं है। जिसप्रकार द्वित्रि हस्तादि कुण्ड में क्षेत्रफलके आधिक्य होने पर भी न्यूनहोम वचनबलसे होता है। इसीप्रकार चर्वादिगुरुद्रव्यहोम में भी अधिक कुण्ड ग्रहण शास्त्रकारों को अभिप्रेत है । इससे सिद्ध हुआ कि न्यूनाधिक कुण्ड भी वचनबलसे कहीं कर्मोपयोगी होता है । एवं न्यूनाधिक मण्डप भी कर्मोपयोगी होता है विशद्धस्तप्राणेन मंडपं कूटमे वा ( कोटिहोमप४ )। लक्षणरहित मंडप को कूट मंडप कहते हैं। यह कूटमंडप स्वलक्षण मंडपके अभाव है । सलक्षणमंडपा सभवे छायामात्रं कर्तव्यम् । तत्र अपूर्वप्रयुक्तत्वाद्धर्माणां यवेष्विव व्रीहिधर्माः मंडप पूजादयोऽप्यत्र भवन्ति ( कोटिहोम प० ) । अलक्षण मंडप में भी पत्रों में व्रीहिधर्म के सदृश मंडप पूजादि होते हैं। तात्पर्य यह है कि—दर्शपूर्णमासयागमें पुरोडाश के लिये व्रीहि अभिहित हैं । व्रीहि संस्कारके लिये—व्रीहीन प्रोक्षति । व्रीहीनवहन्ति । इत्यादि श्रुति है । व्रीहिके अभावमें यह गृहीत होते हैं । वहाँ यवों का भी प्रोक्षणादि संस्कार हो या नहीं इस संशय में 'व्रीहीन् प्रोक्षति' इत्यादि विधिवाक्यमें यवका ग्रहण नहीं है अतः यवका प्रोक्षणादि संस्कार नहीं

होने चाहिये ऐसा पूर्वपक्ष प्राप्त हुआ। सिद्धान्त यह है कि—व्रीहि प्रतिनिधियों का भी प्रोक्षणादि संस्कार होता है। असंस्कृत द्रव्याग योग्य नहीं होते हैं और अङ्गकर्म से जनित अपूर्वप्रधान कर्मसाध्य परमापूर्व को उत्पन्न करते हैं, वही परमापूर्व धर्म पुण्य इत्यादिशब्दों से कहा जाता है। यदि अङ्ग जन्य अपूर्व लुप्त कर दिये जाँय तो परमापूर्व विकल होगा। परमापूर्व विकल होने से स्वर्गादि इष्ट फलका साधक न होगा। इसलिये अङ्गापूर्व के लिये यवों में भी प्रोक्षणादि संस्कार होता। इसीप्रकार मंडपप्रतिनिधित्वेन उपादीय-मान छायामंडपमें भी अपूर्वोत्पत्तिके लिये वास्तुहोम मंडपपूजादि होते हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि छायामंडप भी कर्मोपयोगी है। इससे यह भी हुआ सिद्ध कि अलक्षणमंडपनिन्दापरक वचन सलक्षण-मंडपसंभव में अलक्षण मंडप निषेधपरक हैं।

—दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

# कुंड निर्माण में आवश्यक बातें

### कुण्ड-मण्डप बनाने वाले की परीक्षा आवश्यक—

परशुरामत से मण्डप और कुण्ड बनानेवाले से सतिसंभवमें निम्न-लिखित बातोंकी जानकारी कर लेनी चाहिये। सत्य बोलनेवाला हो। सदाचारी हो। विवेकसे कार्य करने में अति कुशल हो। स्थिर साहसी हो। कुण्ड मण्डप आदि शास्त्रके तत्वको जानने वाला हो। देवी-देवताओं में श्रद्धा हो। इन्द्रियों में विकार की भावना से परे हो। मैले कपड़े धारण करनेवाला न हो। रोगी न हो। बेकार के आडम्बरों को करनेवाला न हो। बहुत बोलने वाला न हो। किसी अन्य मतों पर कलह करने वाला न हो।

### मण्डपभूमि विभाग विचार—

तीन हाथ से सात हाथ के मण्डप का विभाग नहीं होता है। आठ हाथ से अठारह हाथ तक तीन भाग करे। बीस हाथ से अठाइस हाथ तक पाँच भाग करे। तीस हाथ से पचहत्तर हाथ से तक सात भाग करे। सौ हाथ मण्डप में दस भाग करे।

### मण्डप में स्तम्भ विचार—

सात हाथ के मण्डपमें चार स्तम्भ लगते हैं। आठ हाथ के मण्डप से लेकर अट्ठारह हाथ तक के मण्डप में सोलह स्तंभ लगते हैं। तीसहाथ मण्डप से लेकर पचहत्तर हाथ के मण्डप में चौसठ स्तंभ लगते हैं। सौ हाथ के मण्डप में एकसौ इक्कीस स्तंभ लगते हैं।

### मण्डप भूमि का नाम कथन

सात हाथ के मंडप को 'एकभू' कहते हैं। आठ हाथ मण्डप से लेकर अट्ठारहाथ के मण्डप को द्विभू कहते हैं। बीस हाथ से अट्ठाइस हाथ के मण्डपको 'त्रिभू' कहते है। तीस हाथ से पचहत्तर हाथ मण्डप को 'चतुर्भू'

कहते हैं। सौ हाथ के मण्डप को 'दशभू' कहते है। उसमें भी मध्यकोष्टचतुष्टय का एकीकरण से पञ्चभू कहा जा सकता है।

## अंगुलादि ज्ञान—

आठ परमाणु का—एक त्रसरेणु आठत्रसरेणु का एक रथरेणु—आठ रथरेणु का—एक बालाग्र आठबालाग्रका—एक लिक्षा आठ लिक्षा का—एक यूका, आठयूका का—एक यव आठयव का—एक अंगुल, चौबीस अंगुलका—एक हाथ और पाँच हाथ का—एक पुरुष होता है।

## यज्ञीयभूमि का विचार

अग्निकोण प्लवाभूमि—विद्वेष, मरण और व्याधिको देती है किसी के मत से पुत्र, आयु और धन का नाश करती है। दक्षिणप्लवाभूमि निश्चय ही मृत्युको देती है। नैऋ‍र्त्यप्लवाभूमि घर का नाश करती है। पश्चिमप्लवाभूमि धनका नाश करती है। वायुकोणप्लवाभूमि उद्वेगका करनेवाली होती है। ईशानकोणप्लवाभूमि शीघ्र ही लक्ष्मीको देनेवाली होती है। पूर्वप्लवाभूमि कार्योको सिद्ध करती है। उत्तरप्लवाभूमि वरदायिनी होती है। पूर्वोत्तरप्लवा भूमि सब कार्यो को सिद्धि करनेवाली होती है।

## परकीयादि भूमिमें मण्डपका विचार—

मण्डप बनाने के लिए अपनी भूमि ही अति उत्तम होती है। परकीय भूमि में स्वामी की आज्ञा बिना मण्डप बनाकर जो कार्य किया जाता है—वह निष्फल हो जाता है। अपने निजी घरमें मण्डप और कुण्ड बना सकते हैं। नदीतीरादि में मण्डप और कुण्ड बनाने में परकीयत्व दोष नहीं होता है।

---

विशेष – दानमयूखमत से आठ यव का एक अंगुल उत्तम कहा है।

मध्य-सात यव और अधम ६ यवका एक अंगुल होता है।

कुण्डार्कादौ–सूत्रस्याधौ विलीयन्ते यूकालिक्षादयस्तथा।

मरीचिकाम्–यवादून प्रमाण तु मण्डपादौ न चिन्तयेत्।

जहाँ मण्डप बनाना उचित समझते हों—उस भूमिमें बारह अँगुल लम्बा एक गढ़ा खोदकर ( प्रयोगसार )। घर में मण्डप बनावे तो घरकी पूर्वदिशा को ही मण्डपादिमें ग्रहण करे।

## यज्ञीयस्थलका विचार—

भस्म निकलनेसे यजमानका नाश होता है। जहाँ यज्ञ हो वहाँ चूँटी आदिके निकलने से उसी गाँवका नाश होता है। गिली मिट्टी बालू आदि निकलने से राष्ट्रका नाश होता है। केशके निकलने से स्त्री की मृत्यु होती है। तुषके निकलने से पुत्रकी मृत्यु होती है। कपाल के निकलने से ऋत्विक् को भय होता है। ईटोंके टुकड़े निकलने से बन्धु बान्धवों से वियोग होता होता है। तृणके निकलने से कर्म का क्षय होता है। आद्रसिकता निकलनेसे विद्याभय होता है।

## दिक्सधान विचार अत्यावश्यक—

दिक्साधन बिना कुण्डों को बनाने से मृत्यु होती है। कुण्डदर्पण। दिशाओंकी जानकारी में मूर्ख हो तो कुलका नाश होता है—यहवृद्ध-नारदका मत है। दिशाके अज्ञानमें धन का नाश होता है, (कुरुते दिङ्मूढ-मर्थक्षयम् ) कुण्डप्रदीप दिशाओंकी भ्रान्ति-भ्रांतिमान होता है - विधान-माला। पर्वतपर, नदी के किनारे पर विशेषकर घर आदि में तथा रुदायतन भूमि में दिक् साधन नहीं होता है।

## मण्डप प्रारम्भ में विचार—

तीन तरह के अधम, मध्यम और उत्तम मण्डपमें ऋत्विक् सदस्य तथा समाज के लोग सौकर्यतासे बैठ जाँय ऐसा मण्डप बनावे-विद्यार्णव-

---

विशेष—'प्रारभात्पूर्वतः कुर्यात्खननं कर्मसिद्धये।
जलान्तं प्रस्तरान्त वा पुरुषान्तमथापि वा ॥
पुनः संपूरयेत् खातं तत्र कर्म समारभेत्।
गृहे कुण्डे हस्तमितं खात्वा श्वभ्रं प्रपूनितम् ॥
( कुण्डमरीचिकायाम् )

तन्त्र। मण्डपके निर्माण के समय में 'धूम' आदि निकलनेकी व्यवस्था का विचार अवश्य करे—कुण्डनारदपञ्चरात्र। पवित्र—शुद्ध और चौकोर भूमिमें मण्डप बनाना चाहिये।

## कुण्डोंमें नाभि विचार-

नाभि के न रहने से बन्धुओं की मृत्यु होती है। नाभि के नाप की कमी और अधिकता होनेपर स्वयं यजमान का नाश होता है। नाभिहीने स्थान-नाश विधानमाला मत से नाभि के न रहने से स्थान का नाश होता है। नाभि कुण्ड के उदर में रहती है। नाभि अष्टदला कार या कुण्ड के अनुरूप होती है।

## मेखला विचार—

मेखलाओं के छिन्न-भिन्न होने पर यजमान का मरण होता है। 'मरणं हीनमेखले'। 'विधानमाला'। मेखला के अधिक या न्यूनाधिक में व्याधि उत्पन्न होती है और धन का नाश होता है। मेखला कुण्ड के आकार की बनानी चाहिये 'मेरुतन्त्रमत से' मेखलाके जर्जर तथा शृङ्गार हीनता पर यजमान का नाश करती है—

श्रृंगार रहिते यच्च कुण्डं जर्जरमेखलम्।
यजमान विनाशाय प्रोद्धातः स्फुटिते भवेत्॥
हारीतः-मरणं यजमानस्य जायते छिन्न-मेखले।
शोकस्तु मेखलोछ्राये मानाधिकरो भवते॥

एक, दो, तीन, नौ, सात और दस मेखला का हवन कुण्ड में विधान है। शक्तिसंगमतन्त्र। दो, चार, तीन और एक मेखला का विधान है। ईश्वर संहिता और बृहद्ब्रह्मसंहिता। एकमेखला का विधान संक्षेप हवन कर्म में है। जयाख्यसंहिता। तीन मेखला का विधान है। बड़े हवन में हैं। बृहन्नालतन्त्र। दो मेखला शूद्रों के लिए और एक मेखला संकर जातियों के लिये है। मेरुतन्त्र। पाँच मेखला पक्ष

में मनोनुकूल रंग लगावे । एक मेखला पक्ष में-मेखला के नीचे छिद्र होता है। दो मेखला पक्ष में—दूसरी मेखला में छिद्र होती है। तीन मेखला पक्षमें मध्य में छिद्र होता है और पाँच मेखला में चौथी मेखला में छिद्र होता है। ( 'कोटिहोमपद्धति' ) ।

## कुण्ड-विचार—

कुण्ड में कण्ठ और ओठ न रहनेसे पुत्रों का नाश होता है—यह एक मत है। कुण्ड में कण्ठ न रखने में किसी की भी मृत्यु होती है। यह भी एक मत है। कुण्ड में कण्ठ न रहनेसे स्त्रीका नाश होता है— यह भी एक मत है। कुण्ड में कंठ न रखने से किसी की भी मृत्यु होती है। यह भी एक मत है। कंठाधिक्ये भवेनाशः—इस हारीत वचन से कण्ठाधिक्य में भी नाश होता है।

बहिरेकांगलो कठो द्व्यङ्गुलः कश्चिदागमः ।
तेनाद्यः प्रथम पक्ष एवं श्रेयान् बहुसंमतत्वात् ।
'सांप्रदायिकास्तु प्रथम पक्षमेव मन्यन्ते बहुतन्त्रसंमतत्वात्'

[ शारदतिलके ]

भोक्तुर्भुक्तिः कठकोऽधः सुखाय चोर्ध्वं तस्मात्सैव दुखं प्रयच्छेत् ।
होम्यं तद्वत्कंठतोऽधः सुखाय तस्मादूर्ध्वं दुःखदं स्यात्पदन्हे ।

कंठके नीचे तक कुण्डमें शाकल्य की आहुती सुख देनेवाली है और कंठ के ऊपर जो आहुतियाँ कुण्ड में पड़ती है। वह दुःख को देनेवाली होती हैं।

## मण्डपाच्छादन विचार—

जनताकी सुविधाके लिए बाँस आदि द्वारा निर्मित जाली से दरवाजों को छोड़कर मण्डप को ढकना चाहिये [1]। कुत्ते, बिल्ली, मूसा, गो,

---

विशेष—देखिये-ज्ञानवर्ण, मेरुतन्त्र, नित्यषोडशिकार्णव, शौनकपरिशिष्ट, कोटिहोम, जयाख्यसंहिता, राजधर्मकौस्तुभ, वृहद्ब्रह्मसंहिता ।

बकरी, बैल, पागल, शत्रु भयंकर रोगी, विषदेनेवाला, अग्नि, लगाने वाला, लड़ाई करनेवाला, नास्तिक दंभी, वेश्यागामी आदि का मण्डप में प्रवेश न हो – ऐसा मण्डपाच्छादन करे। मण्डप की हर समय रक्षा होनी चाहिये। रात को क्रम से आदमी मण्डप के चारों तरफ घूमते रहें, जिससे चोर आदि द्वारा मण्डप की सामग्री तथा मूर्ति की चोरी का भय न हो।

## आचार्य कुण्ड निर्णय—

नवग्रहके नौ कुण्ड पक्ष में सूर्य के प्रधान हो जाने से आचार्यकुण्ड मध्य का ही होता है। इन कुण्डों की योनिका स्थान विभक्त। द्विमुखमें मध्य गत दो कुण्डों में दक्षिणवाला कुण्ड आचार्य कुण्ड होता है इन की योनि पूर्व होती है। शतमुख में विशेष वचन से नैऋत्यकोण का ही कुण्ड आचार्य कुण्ड होता। इन कुण्डोंकी योनि पूर्व ही होती है। दशमुखमे नैऋत्यकोण का ही कुण्ड आचार्य कुण्ड होता है। इनकी योनि पूर्वमें होती है। विष्णु, रूद्र आदिकी प्रतिष्ठा मात्रमें नौ कुण्डी पक्षमें ईशानकोण और पूर्वादिशाके मध्य वाला कुण्ड आचार्य कुण्ड होता है। पञ्चकुण्डी पक्षमें तो ईशानकोण ही आचार्य कुण्ड होता है।

राम बाजपेयी ने पञ्चकुण्डी पक्ष में भी ईशान और पूर्वदिशा का कुण्ड आचार्यकुण्ड माना है, पर उसमें कोई मूल नहीं मिलता है। ये कुण्ड-चतुरस्र योनि, अर्धचंद्र, त्रिकोण, वृत चतुरस्र, या पद्म बन सकते हैं। यदि सब एक प्रकार के बने तो भी 'कुण्डत्रयी दक्षिण योनिः' यह वचन वहाँ भी लगेगा। ऐसा मालूम होता है। प्रतिष्ठा में वहाँ ईशान, पूर्व, पश्चिम, उत्तर आदि का आचार्य कुण्ड होता है। प्रतिष्ठा में यदि चारकुण्ड पक्ष को स्वीकार करेंगे तो संभवतः पूर्वदिशा का कुण्ड आचार्य कुण्ड होता है। प्रतिष्ठा में सातकुण्ड पक्षको ग्रहण करने पर अचार्यकुण्ड पूर्वदिशाका ही निर्विवाद होगा।

त्रयोदशात्र कुण्डानि परितः कारयेद् बुध। उक्तलक्षणयुक्तानि प्रधानं त्वग्निकोण के अत्र मण्डपे वेद्या परितः दिक्षुद्वे विदिक्षु चैकेकम् प्रधानं च त्रयोदश कुण्डानि। आदौ पूर्वादि चतुर्दिक्षु एकैकंकुण्डं कोण चैकं प्रधान-

कुण्डं पञ्चकुण्डेभ्यो बहिः परितः--अष्ट दक्षु एकैककुण्डम् एवं त्रयोदश कुण्डानि ननु अग्निकोणे एकस्य कुण्डस्य विद्यमानत्वात् कथमत्र प्रधान कुंडकार्यमाह—अग्निकोणगात् कुण्डात् हस्तमात्रमनरतः व्यवस्थाने अग्निकोण एव साक्षात् मुख्यं प्रधानकुण्ड कारयेत। [ तंत्रसार ]।

जहाँ हवन प्रधान होगा, वहाँ पंचकुडी और पंचकुण्डीपक्ष में मध्यका ही कुण्ड आचार्य कुंड शास्त्रीय मतसे होता है। क्योंकि मत्स्यपुराण शारदातिलक आदि 'आचार्यकुण्ड मध्ये स्यात् गौरीपतिमहेन्द्रयोः' इत्यादि पञ्चदीक्षा और प्रतिष्ठा आदि को लेकर ही लिखा है। यह बात वहाँके प्रकरण को देखने से निर्णीत हो जाती है।

## कुण्ड विषयक विचार—

कुण्ड को परिमाण से हीन बनाने पर व्याधि होती है। कुंड की नाप से अधिक बनानेपर शत्रु बढ़ते हैं। कुंड निर्माण करनेपर पत्थर निकले तो अपमृत्यु होती है। 'विधानमालामत' से अनेक प्रकार का भय धन तथा आयुकी हानि होती है। कुंड बनानेपर हड्डी, केश और अँगार निकले तो धन का नाश होता है। अँगारों के टुकड़े निकलने पर रोग तथा पाषाण के टुकड़ों को देखने पर सौख्य होता है। 'विधानमाला'। शंख निकले तो कुल का नाश होता है। कुंड के बनाते समय राख निकले तो भय उत्पन्न होता है। कुंड के निर्माण समय में तुष निकले तो दरिद्री होता है। कुंड में नाप से अधिक खात होने पर धन नाश होता है। कुंड के टेढ़ापन होने से दुःख होता है। कुंड के न्यून या अधिक होनेसे यजमान का स्वयं नाश होता है। कुंडादिक के अधिक या न्यून होने पर यज्ञाचार्य का मरण होता है। कुंड के नापमें कमी रखने पर दरिद्रता होती है। विशेषज्ञों द्वारा कुंड न बनाने पर कुंड और मंडपादि निष्फल होता है। कुड आयु, पुत्र और सुख देने वाला कहा गया है, कुंड को खोदते समय सर्प, वृश्चिक देखने में रोग, मृत्यु तथा भय प्राप्त होता है। 'विधानमाला'। अंगार में स्वामी का नाश, खर्पर में स्त्री और धन-

क्षय, भस्म में—सन्ततिविच्छेद, सिकताओं में वनक्षय, गजास्थि में स्वामी का मरण, तुरयास्थि में धन मनुष्यों का नाश और पश्वास्थि में पशुओं का मरण होता है। कुंड के विस्तार रहित में यजमान का जीवन अल्प समय का हो जाता है। कुंड के टेढ़ेपन में और मानहीन में जठराग्नि मन्द हो जाती है। कुण्ड के आधिक्य से सन्ताप होता है। कुण्ड के बिना हवन करने से ऋत्विजों द्वारा मन्त्रों की सिद्धि देनेवाला नहीं होता है। अतः सौत्र या जंगम स्थिर कुण्ड करे। 'जयाख्यसंहिता'। जिस ग्रन्थ से चतुरस्र कुण्ड बनावे उसी ग्रन्थ से अन्य पद्म आदि कुण्ड बनावें, ऐसा कोई नियम या विधान नहीं मिलता है।

## चतुस्रादि कुण्डसे कामनापरक फल—

चतुरस्रकुण्ड शान्ति, विजय, लक्ष्मी, सिद्धि और सम्पूर्ण कार्योंको करनेवाला है। मुमुक्षार्थी वैष्णवों के लिए चतुरस्र कुण्डका विधान है जो विष्णुयागादियज्ञोंमें आचार्य कुण्ड मंडप के मध्य में प्रधान वेदी तथा दिशाओंमें कुण्डोंको बनाकर यज्ञकरते है। उनका यह मध्य में मत अशास्त्रीय ही प्रतीत होता है। गृहवास्तु और प्रसादवास्तु में वास्तुवेदी ईशानकोण में होती है, उसके दक्षिण में ग्रहवेदी होती है। महारुद्रादि यज्ञोंमें प्रधानवेदी ईशानकोणमें उसके दक्षिण दक्षिण ग्रहवेदी होती है। विष्णुयागादि में प्रधानवेदी दक्षिणदिशामें होती है। साधारण मत से प्राप्त होती है। विष्णु आदि प्रतिष्ठामें प्रधानवेदी मध्यम बनती है। शतमुख, द्विमुख, और एकमुख में प्रधानवेदी पूर्वदिशामें बनती है। कोटिहोमात्मक विष्णुयागमें ईशानकोण में ग्रहवेदी उसके दक्षिण में प्रधानवेदी होती हैं।

## विविध प्रकार के कुण्डों का निर्माण—

### चतुरस्रकुण्ड बनाने का क्रम—

**द्विघ्नव्यासं तुर्यचिह्न सपाशं सूत्रं शङ्कौ पश्चिमे पूर्वतोऽपि।**
**दत्त्वा कर्षेत्कोणयोः पाशतुर्ये स्यादेव वा वेदकोणं समानम्॥**

चौबीस अंगुल का गज लेकर चारों तरफ (पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर) एक सा नाप द्वारा नापने से मय लेपन द्वारा चतुरस्र कुण्ड एक हाथ का तैय्यार होता है।

### योनिकुण्ड बनाने का क्रम—

**क्षेत्रे जिनांशे पुरतः शरांशान् संवर्ध्य च स्वीयरदांशयुक्तान्।**
**कर्णाङ्घ्रिमानेन लिखेन्दुखण्डे प्रत्यक् पुरोऽङ्काद्गुणतो भगाभम्॥**

चौबीस अङ्गुल का चतुरस्र बनाकर उस चतुरस्र में दक्षिणोत्तर आधे पर एक लम्बी रेखा दे। तदनन्तर पश्चिम भाग के आधे भाग का दो हिस्सा पूर्व और पश्चिम की तरफ करे। फिर उसके आधे में अर्थात् कोने से एक रेखा दे जो टेढ़ी दूसरी कोने में जाकर मिले। इस तरह फिर दूसरे कोने से रेखा दे। इसी तरह दूसरे कोने में दे। इस प्रकार दोनों आधों में चार रेखा टेढ़ी होगी। फिर उस पूर्व निर्मित चतुरस्र के ठीक पूर्व दिशा की तरफ के मध्य से पाँच अंगुल, एक यव और दो यूका बढ़ा दें। फिर चतुरस्र के किये हुए ठीक मध्य अर्थात् दक्षिण दिशा से सटी एक रेखा टेढ़ी दे जो पूर्व के ठीक मध्य में बढ़ी हुई पाँच अङ्गुल एक यव और यूका वाली रेखा के ऊपरी हिस्से में मिल जाय। इसी तरह उत्तर दिशा से एक रेखा दे। अर्थात्—दक्षिणोत्तर रेखा बढ़े हुए पाँच अंगुल एकयव और दो यूका की रेखा में मिला दे। तदनन्तर नीचे

प्रकाल को दक्षिण की तरफ और उत्तर की तरफ बने हुए दोनों हिस्सों के ठीक मध्य से अर्थात्—अलग अलग घुमाकर पश्चिम भाग के ठीक मध्य की तरफ मिला दे। इसीतरह उत्तर की तरफ से प्रकाल द्वारा रेखा पश्चिम दिशा के ठीक मध्य में मिलाने से योनि कुण्ड तैय्यार हो जाता है।

## अर्धचन्द्र कुण्ड बनाने का क्रम—

स्वयतांयुतेषु भागहीनस्वधरिश्रीमितकर्कटेन मध्यात्।
कृतवृत्तदलेऽग्रतश्च जीवां विदधात्विन्दुदलस्य साधुसिद्ध्यै॥

चौबिस अङ्गुल का चतुरस्र बनाकर उस चतुरस्र के पूर्व दिशा से अढ़ाई अङ्गुल हटाकर (पञ्चकुण्डी पक्ष में उत्तर दिशा के ठीक मध्य की तरफ से अढ़ाई अङ्गुल हटाकर) दक्षिणोत्तर एक रेखा लम्बी दे। उसी रेखा के मध्य से उन्नीस अङ्गुल' एक यव, एक यूका, पाँच दिया और सात बालाग्र (१९ अङ्गुल, १ यव, १ यूका, ५ लिक्षा, ७ बालाग्र) प्रकाल से नाप कर अर्थात् साढ़े उन्नीस अङ्गुल की प्रकाल से नाप कर टेढ़ी रेखा देनेसे अर्धचन्द्र कुण्ड बनता है।

## त्रिकोण कुण्ड बनाने का क्रम—

बहन्यंशं पुरतो विधाय च पुनः श्रोण्योश्चतुर्थांशकम्।
चिन्हेषु त्रिषु सूत्रदानत इदं स्यात्त्रिकष्टोज्जितम्॥

चौबीस अङ्गुल के चतुरस्र के बाहर पश्चिम की तरफ से वायव्यकोण और नैऋत्यकोण की तरफ छः छः अङ्गुल और बढा दे। अर्थात् छः अङ्गुल वायव्यकोण में और छः अङ्गुल नैऋत्यकोण में बढ़ा दे। तदन्तर निर्मित उस चतुरस्र के ठीक पूर्वदिशा के मध्य से आठ अङ्गुल लम्बी रेखा सीधी पूर्वदिशा की तरफ बढ़ा दे। फिर वायव्यकोण में बढ़ी हुई रेखा के अन्तिम हिस्से से एक रेखा टेढ़ी दे, जो पूर्वदिशा में बढ़ी हुइ रेखा में मिले। उसीप्रकार नैऋत्यकोण से रेखा देने से त्रिकोण कुण्ड तैय्यार होता है।

### वृत्तकुण्ड बनाने का क्रम

**विश्वांशैः स्वजिनांशकेन सहितैः क्षेत्रे जिनांशे कृते।**
**व्यासार्धेन मितेन मण्डलमिदं स्याद् वृत्तसंज्ञं शुभम् ॥**

चौबीस अंगुल के चतुरस्र के ठीक मध्य से साढ़े तेरह अंगुल ( तेरह अंगुल, चार यव, दो यूका, पाँच लिक्षा और तीन बालाग्र ) का प्रकाल लेकर गोलाकार घुमाने से वृत्तकुण्ड निर्माण हो जाता है।

### विषमषडस्र कुण्ड बनाने का सरल क्रम

**भक्ते क्षेत्र जिनांशैर्धृतिमितलवकैः स्वाक्षिशैलांशयुक्तैः,**
**व्यासाद्यन्मण्डले तन्मितघृतगुणक कर्कटे चेन्दुदिक्तः।**
**षट्चिह्नेषु प्रदद्याद्रसमितगुणकानेकमोकन्तु हित्वा नाशे,**
**सन्ध्यत्तु दोषामपि च धृतिकृतैर्नेत्ररम्यं षडस्रम् ॥**

चौबीस अंगुल का चतुरस्र बनाकर उस चतुरस्र के ऊपर अठारह अंगुल और दो यव का एक गोलाकर वृत्त बनाकर उस बनाकर उस वृत्त में छः निशान बराबर-बराबर के लगा दे। तदन्तर उन निशानों पर रेखा देने से विषमषडस्र कुण्ड बन जायगा।

तात्पर्य यह है कि—एक रेखा रेखा टेढ़ी उत्तर दिशा से पूर्वदिशा के समीप दक्षांस में मिला दे। फिर एक टेढ़ी रेखा उत्तर दिशा की पहली रेखा समीप सटी से पश्चिम दिशा के समीप मुख मे मिला दे। फिर एक रेखा टेढ़ी दक्षिण दिशा से पश्चिम दिशा के समीप वाम श्रोणी में मिला देने से विषमषडस्र कुण्ड तैय्यार हो जाता है।

समषडस्र कुण्ड बनाने का क्रम—

**अथवा जिनभक्तकुण्डमानत्तिथिभागैः स्वखभूपभागहीनैः ।**
**मितकर्कटोद्भवे तु वृत्ते विधुदिक्तः समषड्भुजैः षडस्रम् ।**

चौबीस अंगुल का चतुरस्र बनाकर उस चतुरस्र के उपर चौदह अङ्गुल, सात यव और यूका का एक गोलाकार वृत्त बना दे। तदनन्तर उस वृत्त में बराबर बराबर के छः चिह्न कर देने से समषडस्रकुण्ड बन जाता है।

स्पष्टी करण यह है—उत्तर दिशा से टेढ़ी रेखा मुख पर मिला दे मुख से एक रेखा दक्षांस में मिला दे, दक्षांस से एक रेखा दक्षिण दिशा में दे। दक्षिण दिशा से एक रेखा टेढ़ी पुच्छ में दे। पुच्छ से एक रेखा वामश्रोणी में दे। वामश्रोणी से एक रेखा रेखा और दिशा में मिला दे।

पद्मकुण्ड बनाने का क्रम—

**अष्टांशाच्च यतश्च वृत्तशरके यादिमं कर्णिका युग्मे-**
**षोडशकेशराणि चरमे स्वाष्टत्रिभागोनिते ।**
**भक्ते षोडशधा शरान्तरधृते स्युः कर्कटेऽष्टौ छदाः,**
**सर्वास्तान्खनकर्णिकां त्यज निजायामोच्चकां स्यात्कजम् ॥**

चौबीस अंगुल का चतुरस्र बनाकर उस चतुरस्र के ठीक मध्य से एक गोलाकर प्रकाल द्वारा तीन अंगुल का वृत्त बनावे। तदनन्तर छः अंगुल का गोलाकार दूसरा वृत्त उसी के ऊपर बनावे। फिर नव अंगुल का वृत्त गोलाकार तीसरा और बारह अंगुल का गोलाकार वृत्त चतुर्थ उसी पर बनाने पर चौदह अंगुल, सात यव और तीन यूका अर्थात् साढ़े चौदह अंगुल का वृत्त गोल पाँचवा उसी पर बना दे। तदनन्तर दो वृत्त को छोड़कर अर्थात् प्रारम्भ के दो वृत्त तीन और छः का छोड़कर पश्चिम दक्षिण और उत्तर दिशामें एक चिह्न करे। फिर नैऋत्य, वायव्य, ईशान और अग्निकोण में एक-एक चिह्न करे। इस

तरह आठ चिह्न वृत्त में हुए-ऐसा निश्चय हो जाने पर उन दिशा और विदिशाओं के मध्य-मध्य में फिर में फिर एक एक चिह्न दे। ये चिह्न सोलह बराबर बराबर के होंगे। इस तरह सोलह चिह्न ( रेखा ) हो जाने पर उत्तर दिशा से एक चिह्न रेखा ) को छोड़ता हुआ पद्माकार रेखा देने से पद्मकुण्ड का निर्माण हो जाता है। तात्पर्य यह है कि-कुल आठ रेखा ( चिह्न ) छूटने से पद्म कुण्ड बनने में जरा भी कठिनाई नहीं होगी।

विषमअष्टास्र कुण्ड बनाने का क्रम—

**क्षेत्रे जिनांशे गजचन्द्रभागैः स्वाष्टाक्षिभागेन युतैस्तु वृत्ते।**
**विदिग्दिशोरन्तरतो ऽष्टसूत्रैस्तृतीययुक्तैरिदमष्टकोणम् ॥**

चौबीस अंगुल के चतुरस्र के ठीक मध्य से अठारह अङ्गुल, पाँच यव और एक यूका अर्थात् साढ़े अठारह अङ्गुल का एक गोलाकार वृत्त बनाकर उस निर्मित गोलाकर वृत्त में सोलह चिह्न बराबर करे। तदनन्तर दिशा और विदिशा के मध्य की रेखा से ( अर्थात् दिशाओं की और विदिशाओं की रेखाओं को छोड़कर ) बनाने से विषम अष्टास्र कुण्ड बन जाता है।

तात्पर्य यह है कि-पूर्वदिशा के समीप दक्षांश अंश से एक रेखा सीधी पश्चिम की तरफ पुच्छ अंश में मिला दे। फिर पूर्वदिशा और ईशान के मध्य अर्थात् पूर्वदिशा के समीप मुख अंश से एक रेखा पश्चिम दिशा के समीप वामश्रोणी में मिला दे। उत्तर के वामांस अंश से एक रेखा सीधी दक्षिण दिशा के दक्षपार्श्व में मिला दे। फिर वामपार्श्व से एक रेखा सीधी दक्षिण दिशा के समीप दक्षश्रोणी में मिला दे। पूर्वस्थित दक्षांस से एक टेढ़ी रेखा वामपार्श्व में मिला दे। फिर ईशान और पूर्वके मध्य मुख से एक रेखा टेढ़ी दक्षश्रोणी में मिला दे। पश्चिम दिशा स्थित पुच्छ से एक रेखा टेढ़ी वामांस अंश मे मिला दे और वामश्रोणी से एक रेखा टेढ़ी दक्षपार्श्व में मिला देने से विषम अष्टास्र कुण्ड बन जाता है।

## समअष्टास्र कुण्ड बनाने का क्रम

**मध्ये गुणे वेदयमैर्विभक्ते शक्रैर्निजर्ष्यङ्घ्रिलवेन युक्तैः ।**
**वृत्ते कृते दिग्विदिशान्तराले गतैर्भुजैः स्यादथ राष्टकोणम् ॥**

चौबीस अंगुल का चतुरस्र बनाकर उस चतुरस्र पर चौदह अंगुल, दो यव और तीन यूका का गोलाकार एक वृत्त बनाकर उसमें बराबर-बराबर के आठ चिह्न कर दें। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि—ये चिह्न दिशा और विदिशा में नहीं होने चाहिये। यदि ये चिह्न दिशा और विदिशा में पड़े तो कुण्ड निर्माण में विघ्न आ सकता है। एक रेखा टेढ़ी (क) उसका प्रकार यह है - मुख से प्रारम्भ कर वामांस में मिलावे। (ख) वामांस से सीधी रेखा प्रारम्भ कर वामपार्श्व में मिला दे। (ग) वामपार्श्व से एज टेढ़ी रेखा प्रारम्भ कर वामश्रोणी में मिला दे। (घ) वाम श्रोणी से एक सीधी रेखा पुच्छ में मिला दे। (ङ) पुच्छ से एक टेढ़ी रेखा दक्षश्रोणी में मिला दे। (च) दक्षश्रोणी से एक सीधी रेखा दक्ष पार्श्व में मिला दे। (छ) दक्ष पार्श्व से एक टेढ़ी रेखा दक्षांस में मिला दे। (ज) दक्षांस से एक सीधी रेखा सीधी मुख में मिला दे। इस तरह आठ चिह्न वाला सम अष्टास्र कुण्ड तैय्यार हो जायगा।

## नवकुण्डों पर कोटिहोमपद्धति का मत

ननु एतानि शारदातिलके वेदमुत्र्या प्रागादिदिक्षु दीक्षाङ्गत्वेनोक्तानि ।

**अष्टास्वाशासु कुण्डानि रम्याकाराण्यनुक्रमात् ।**
**चतुरस्रं योनिमर्द्धचन्द्रं त्र्यस्रं सुवर्तुलम् ।**
**षडस्रं पङ्कजाकारमष्टास्रं तानि नामतः ॥ इति ॥**

तत् एतेषामेव सर्वसिद्धिकरं कुण्डं चतुरस्रमित्यादिना क्रमेण फलानि श्रुतानि। तेनाङ्गभूतानामेव तेषां कुण्डानामकस्य तूभयत्वे संयोगपृथ क्त्वमिति-न्यायेन फलार्थत्वमपीत्येवं सति तत्र दीक्षाप्रकरणात्कानामेषां काम्यानां कथमत्र प्राप्तिः। यदा हि विकृतावपि प्राकृता काम्यो गुणो न गच्छतीतिन्यायस्तत्रा-

विकृतिभूतेऽत्र सुतरामप्राप्तिः। किञ्च— वेदेरत्रासत्वात्प्रागदिदिक्षु— उक्तान्यत्र कथं प्राप्नुयुः। कथञ्चित्प्राप्तौ त्वष्टकुण्डी प्राप्नुयात्।

अत्र ब्रूमः

**शारदायां मण्डप वेदि चोक्त्वा,**

**दीक्षाङ्गभूतानि कुण्डान्युक्तानि।**

**तदेतत्सर्वसाधारणं न**

**तु दीक्षामात्रविषयम्॥**

तदग्रे—अथ दीक्षां प्रवक्ष्यामि' इति दीक्षोपक्रमेण। प्राक् तत् प्रकरणाभावात्। होमादेश्चानुपस्थितत्वात्। एवं सति क्रियाविशेषानुपस्थितौ किमाश्रितानां कुण्डानां तत्तत्फलसाधनता बोध्येत। वाक्येनैव दीक्षाद्याश्रयदाने वाक्यभेदापत्तिः प्रकृतकुण्डानामनुपस्थितत्वात्तदाश्रितानां चतुरस्रत्वादीनां फलसम्बन्धे उच्यमानेऽपि कुण्डानामव्यापाररूपाणामाश्रयत्वायोग्यत्वात्तद्योग्यायाश्च क्रियाया अनुपस्थितत्वात्मागुक्तदोषानतिवृत्तिः। दीक्षादीनामत्रानुपस्थितौ कथमत्रत्य कुण्डमण्डपसम्बन्ध इति चेत्। तत्तत्प्रकरणस्थवाक्यैरिति ब्रूमः। दीक्षातुलापुरुषादिप्रकरणे हि मण्डपाष्टकुण्ड्याद्यङ्गत्वेन श्रुतम्। तत्प्रकारस्त्वयमनारभ्याधीतः सर्वसाधारणः पलाशत्वमिवेष्ट्याग्निहोत्रादिप्रकृति विकृति भावानापन्नहोमसाधनी भूतजुह्वाम्। एतेनात्राप्यष्टकुण्डीप्राप्नुयादित्यप्यपास्तम्। तदङ्गबोधकप्राकरणिकवाक्याभावात्।

न च दीक्षाया एव तत्र वक्ष्यमाणत्वात्तन्मात्रविषयत्वमस्य न तु साधारणमितिवाच्यम्। साधारणस्यैव स्वयं वक्ष्यमाणदीक्षार्थत्वेनात्र संग्रहमात्रात्तन्मात्रविषयत्वे मानाभावात्। अत एवं हेमाद्र्यादिभिरेतान्येव वाक्यानि तुलापुरुषाद्यङ्गाष्टकुण्डीप्रदर्शनार्थमुदाहृतानि। तस्मात्प्रकरणाभावादाश्रयाभावेन गुणफलसम्बन्धासंभवात्। तुलापुरुषादावष्टकुण्ड्या अङ्गत्मेव न तूभयार्थत्वम्। तेन सर्वसिद्धिकरं कुण्डमित्यादि सर्वकर्मसाधारण्येनैव व्याख्येयम्। सर्वसिद्धिकर कर्मणि चतुरस्रं कुंडमिति।

अत एवाग्रे स्पष्टमुक्त वर्तुलं शान्तिकर्मणीतिविज्ञानललिते च। अभिचारोपशान्त्यर्थे होमे इति। कामिके च शान्तिके पौष्टिके इति। सर्वसिद्धकरं कुण्डमित्यादिसामानाधिकरण्यं च प्रधानद्वारोपपादनीयम्। यथा यो वृष्टिकाम इत्यादि वृष्ट्याद्यर्थंसौभरे एव हीषिति वृष्टिकामाय निधनं कुर्यादित्यादिना वृष्टिकामाय यत्सौभरं तत्र हीषिति विशेषविधिर्भवति। एवमिहापि।

विशिष्टोद्देशेऽपि न वाक्यभेदः। उद्देश्यापर्यवसानात् अन्यथा यत्र क्वापि चतुरस्रादिविकल्प प्रसंगादिविस्तरभयान्नेहोच्यते। तस्मादेतैर्वाक्यैः साधारण्येन तत्तत्फलविशेषार्थहोमादौ कुण्डविशेषविधीयन्तेइत्ययुतहोमादौ शान्तिकत्वादिरूपेणानुष्ठीयमानेऽस्त्येषां कुण्डानां प्राप्तिरितिसिद्धम्।

तत्र त्वेतावान् विशेषः। तुलापुरुषादेरपि शान्त्याद्यर्थत्वेन तत्र प्राप्नुवन्त्येतानि कुण्डानि दिग्विशेषेष्वेव भवन्ति। ऐन्द्र्यां स्तंभे चतुःकोणमित्यादिकामिकादिवाक्यैस्तंभाद्यथकर्मसु प्राप्तचतुःकोणादिकुण्डेषु वेदितः पूर्वादिनियमात्प्राप्नुवन्ति।

अयुतहोमादौ तु मण्डपमध्यभाग एव भवन्ति। तस्यैव कुण्डदेशत्वसाधनादित्यलम्।

तुलापुरुषास्नातस्यापि मण्डपस्थप्राप्तिरत्रौपपादिता। तत्र तुलारोहणादेः प्रधानवेद्यां कर्तव्यत्वेन वेदेः प्रधानदेशत्वात्तस्याश्च मध्यकार्यत्वोक्त्या मण्डपमध्यदेशस्य प्रधानदेशत्वं गम्यते। एवं चात्र तस्मिन् मण्डपे प्रप्ते मध्यदेशस्य प्रधानदेशत्वमवगतं न त्यक्तुं नाय्यम्। अत्र च प्रधानहोमोऽयुतहोमादिसमाख्यावशात्। तेनापि मण्डपमध्यभागे कुण्डम्।

किञ्च भविष्योत्तरे—अयुतलक्षहोमाद्युक्त्वा कोटिहोमं वदन् मण्डपमध्यभागे कुण्डमाह—मध्ये तु मण्डपस्यापि कुण्डं कुर्यात् विचक्षणः। अष्टहस्तप्रमाणेन आयामेन तथैव च॥

तत्र-तत्र विशेषविधिबलादेव भविष्यतीति वाच्यम्। लक्षहोमादेव कुण्डस्य प्राप्तत्वात्तत्ता न विधेयं येन विशिष्टविधिः स्यात्। एवं सति तदनुवादेन मध्यदेशविधानेऽष्टहस्तप्रमाणविधाने च वाक्यभेदः स्यात्। अतोऽस्मदुक्तमार्गेण मध्यदेशप्राप्तकुण्डानुवादेन तत्प्रमाणान्तरविधिर्लाघवात्। विकृतिगतानुवादेन च

प्रकृतावनवगतविशेषसिद्धिर्न्याय्या । यथा सत्रेऽर्धित्वाद्यनुवादेनज्योतिष्टोमे दक्षिणावैषम्यसिद्धिः । तस्मादपि मण्डपमध्यभागे कुण्डम् ।

वसिष्ठसंहितायां तु स्पष्टमुक्तम्—

**मण्डपं प्रकृत्य कुण्डं तन्मध्यभागे तु कारयेच्चतुरस्रकम् ।**
**वितस्तिद्वयखातं तत्कुण्डं स चतुरङ्गुलम् ॥ इति ॥**

नवकुण्डों पर कुण्डकल्पलता का अपना मत—

कुण्डकल्पतायाम्—अथ वक्ष्यमाणानि कुण्डानि तडोत्सर्गादौ अष्टचतुरस्रादि-नानाप्रकराण्यष्टौ तदसंभवे चतुरस्राणि वर्तुलानि वा कृत्वा नवममाचार्यकुण्डं वृत्तं चतुरस्रं वा पूर्वैशानयोर्मध्ये कुर्यात् । तदुक्त

शारदायाम्—

**अष्टास्वाशासु कुण्डानि रम्याकाराण्यनुक्रमात् ।**
**चतुरस्रं योनिमर्द्धचन्द्रं त्र्यस्रं सुवर्तुलम् ॥**
**षडस्रं पङ्कजाकारमष्टास्रं तानि नामतः ।**
**आचार्यकुण्डं मध्ये स्याद् गौरीपतिमहेन्द्रयो ॥**

आम्नायरहस्ये—

**नवकुण्डविधानेन दिक्षु कुंडाष्टके स्थित ।**
**नवमं कारयेत्कुण्ड पूर्वैशानदिगन्तरे ॥**
**कुण्डानि चतुरस्राणि वृत्तनानाकृतानि च ।**

सोमशंभूः—

**शस्तानि तानि वृत्तानि चतुरस्राणि वा सदा ॥**

अन्यत्रापि—

**वेदास्राण्येव तानि स्युर्वर्तुलाण्यथवा क्वचित् ।**

पञ्चकुण्डीपक्षे—

कुर्यात्कुंडानि चत्वारि चतुर्दिक्षु विचक्षणः ।
पञ्चमं कारयेत्कुंडमीशदिग्गोचरे द्विज ॥

स्त्रीणां तु लिङ्गे विशेषः स्त्रीणां कुण्डानि विप्रेन्द्र योन्याकाराणि कारयेत् । अत्र च दर्शपौर्णमासयोः पञ्चदशसामिधेनीरनुब्रूयात् सप्तदशवैश्यस्येति । वैश्यकर्तृके सामिधेनीसादृश्यवत्स्त्रीकर्तृकतुलाकुण्डानां योन्याकारत्वनियमादाकारान्तरनिवृत्तिः ।

यद्यपि लैङ्गे—नवकुण्डीप्रक्रमात् कुडानीति बहुवचने यथा प्राप्तानुवादान्नव कुण्डीपक्षे एव योन्याकारत्वमितिप्रतिभाति । तथाप्युद्देश्यगतसंख्या ग्रहेकत्ववदविवक्षितत्वान्मत्स्यपुराणोक्ते ।

चतुःकुण्डीपक्षेऽपि—स्त्रीणां योन्याकारतैव भवति । तथा ब्रह्माण्डदौ तुलापुरुषविकारे एवमेवकुण्डं तस्यापि स्त्रीकर्तृकत्वे योन्याकारेति ।

नव पञ्चाय वैकं वा कतव्यं लक्षणान्वितम्—नचात्र वाक्ये पक्षात्रयस्यापि समविकल्पित्वे नवपञ्चकुंडीपक्षयोरनुष्ठानापत्तेः । तस्मात्तत् फलस्य कर्मनिष्पत्तेः तेषां लोकवत्यपरिमाणतः फलविशेषः स्यान्नवपञ्चककुण्डपक्षाणां फलतारम्यमेव कल्प्यम् । तानि सर्वाणि दासु स्थापनादिषु कर्मसु । हस्तमात्राणिकार्याणीत्यर्थः ।

पुराणोक्ततुलादानादौ तु नवकुण्डीपक्षः श्रेष्ठः पञ्चकुण्डीपक्षः मध्यमः एककुण्डीपक्षः कनिष्ठः । रुद्रानुष्ठानायुतहोमलक्षहोमेष्वकमेव कुण्डमित्युक्तम् ॥ इति ॥

प्रतिष्ठादिमें—मण्डप सोलह हाथ या चौदह हाथ होगा । उसमें स्तंभ बाहर के बाहर सात हाथ के होंगे और भीतर मण्डप के चार स्तंभ साढ़े आठ के होंगे । इन स्तभों का पंचमाश भूमि के भीतर में रहेगा । मध्यवेदी—एक हाथ ऊँची सवापाँच हाथ आठ अगुल लम्बी-चौड़ी सोलह हाथ के मण्डप में होगी । चौदह हाथ के मण्डप में चार हाथ सोलह अँगुल की होगी । ऊँची एक हाथ होगी । कुण्ड चौतीस अंगुल का होगा । उसका प्रकार यह है कि—चौतीस अंगुल का जो

गज रहेगा उस चौतीस अंगुल के गज में चौतीस अंगुल का चौबीस अंगुल ही बनाना। उस हिसाब से दो अंगुल की नीचे की पहली मेखला, दूसरी तीन अंगुल की मेखला और तीसरी ऊपर की मेखला चार की होगी। इनकी लंबाई नव अगुल की होगी। चौड़ाई प्रथम दो अंगुल चौड़ाई, और दो अंगुल लबाई, दूसरी तीन अंगुल चौड़ाई तीन अंगुल लम्बाई और तीसरी चार अंगुल चौड़ाई होगी। योनी उसी पूर्ववाले गज से बाहर अंगुल लम्बी पश्चिम दिशा के ठीक मध्य से होगी। इसमें एक अंगुल कुण्ड के भीतर, एक अगुल कण्ठ और दस अंगुल बाहर रहेगी। इनकी चौड़ाई आठ अंगुल होगी। ऊपर और पीछे की तरफ बारह अंगुल ऊँची और कुण्ड के भीतर ग्यारह अंगुल ऊँची होगी। मध्य मेखला में परिन्तरण छिद्र होगा। नाभी दो अंगुल चौड़ी चार अंगुल लम्बी होगी। ध्वजा-दो हाथ चौड़ी पाँच हाथ लम्बी वाहन के साथ होगी। पताका—सात हाथ लम्बी एक हाथ लम्बी एक हाथ चौड़ी शस्त्र सहित होगी। इनमें गेरु आदि से शस्त्र – और वाहन बनेंगे।

## शतमुखकुण्डका बनानेका क्रम द्वैतनिर्णयसिद्धान्तसंग्रह के मतसे

शतमुख में अर्थात् सौ हाथ के समचतुरस्र मण्डप के तीन भाग पूर्व पश्चिम, दक्षिण और उत्तर दिशा से करे। फी भाग ( हिस्सा ) तेतीस हाथ आठ अंगुल करे। इस तरह हो जानेपर मण्डप के मध्य नवमांश में दक्षिणोत्तर लम्बी तेतीस हाथ आठ अंगुल की रेखा बराबर को दे। प्रत्येक रेखा में पाँच-पाँच कुण्ड निर्मित होंगे। प्रत्येक कुण्ड का अन्तराल ( मध्य ) साढ़ेचार हाथ सात अंगुल होगा। अर्थात्—एक कुण्ड के बन जाने बाद दूसरा कुण्ड साढ़ेचार हाथ सात अंगुल जमीन छोड़कर बनेगा। इस तरह तरह दक्षिणोत्तर लम्बी रेखा में सब बीस कुण्ड बनेंगे। उन रेखाओं का अन्त सात हाथ आठ अंगुल होगा। सारांश यह है कि—एक रेखा दक्षिणोत्तर लम्बी देने पर दूसरी रेखा देते समय सात हाथ आठ अंगुल जमीन छोड़कर रेखा दे। इस तरह तीन और चार रेखा में व्यवस्था कर लेना चाहिये।

अब बचे हुए अस्सी कुण्डों का अवशिष्ट आठ नवमांशों में विभक्त करे। उसका प्रकार यह है कि प्रत्येक नवमांश में दो-दो कुण्ड बनेंगे। इस तरह आठ

आठ नवमांशों में कुल सोलह कुण्ड हुए। फिर उन्हीं आठ नवमांशों में क्रम से दिशा और विदिशा में आठ आठ आठ कुण्ड बन जाने से सौ कुण्डों का निर्माण सुगमतया से हो जायगा।

( क ) कुछलोग प्रधान वेदी ईशान देश में मानते हैं, पर बहुमत से पूर्वदिशा में ही प्रधान वेदी करना ही उचित है।

( ख ) इस मण्डप में स्तंभ मध्य के पचास हाथ के चारह गे। द्वितीय श्रेणी में—तेतीस हाथ आठ अंगुल के होंगे तृतीय श्रेणी में-पचीस हाथ के स्तभ होंगे।

( ग ) पूजन सोलह ही, स्तंभ का विशेष चिन्ह से चिन्हित करना चाहिये, यही विधान है। बाकी का कोई विधान तथ्य शास्त्रों में न ही मिलता है न देखने में ही आया है।

( घ ) सौ कुण्ड पचीस हाथ के मण्डप में न बनकर पचास हाथ के मण्डप में बन सकते हैं। लेकिन हजारों ब्राह्मण बैठकर इन कुण्डोंमें हवन नहीं कर सकते।

( च ) कुण्डस्य रूपं जानीयात्परमं प्रकृतेवपुः।
उदरं कुण्डमित्युक्तं योनिः पादौ तु पश्चिमे ॥

( छ ) कुण्ड तन्त्रोक्तमार्गेण निर्माथाथ सलक्षणम्।
रक्तमुच्छालिपिष्टाभ्याँ भूषयद्रकप्रिग यथा ॥

( ज ) विधानमालायाम्—

आयुर्वृद्धौ तथा शान्त्यै कोटिहोम चरेन्नृप।
कोटिहोमात्परं नास्ति कर्मारिष्टविनाशने।
न तत्तुल्यं तथा गङ्गा महोत्पातविनाशनम्।
कोटिहोमे यथाशक्तिलंक्षे वाऽप्ययुतं तथा ॥
प्रतिवर्षं प्रकर्तव्यं हवनं पुष्टिवर्धनम्।

### किसी के मत से दूसरा क्रम—

मध्य नवमांश में दक्षिणोत्तर लम्बी क्रम से चार रेखा दे। इन चार रेखाओं में क्रम से सात कुल अट्ठाइस कुण्ड होंगे। इनमें प्रत्येक कुण्ड का अन्तराल ( मध्य ) दो हाथ छः अंगुल का होगा।

अब अवशिष्ठ बहत्तर कुण्डों को आठ नवमांशों में विभक्त करे—

उसका प्रकार यह है कि—आठ नवमांशों में अलग-अलग दो-दो कुण्ड बनने से सोलह कुण्डों की व्यवस्था हो जायगी। तदनन्तर उन कुण्डों के बाहर परिधि रूप से तीन-तीन कुण्ड फिर बन जाने से चौबीस कुण्ड हो जायँगे। इसी रूप से चार-चार कुण्ड बनने से बत्तीस कुण्डों की व्यवस्था से गिनती में सौ कुण्ड हो जाते हैं।

इन कुण्डों का अन्तराल दो हाथ छः अंगुल ही होगा। ऐसी परिस्थिति में कुण्डों के समीप बैठने से उन कुण्डों की ज्वाला आदि द्वारा महान् क्लेश होगा। अतः यह पक्ष ही हेय है।

( १ ) इन कुण्डों में अग्निस्थापन नैऋ‍र्त्य कुण्ड में सर्वप्रथम करे। वही आचार्य कुण्ड होगा। क्योंकि कोई भी कुण्ड अत्यन्त मध्य स्थित न होने के कारण प्रागुदपवर्ग प्रचारानुरोध से नैऋ‍र्त्य कुण्ड ही आचार्य कुण्ड स्वीकृत न्यान्य प्राप्त है। यह शान्तिमयूख आदि निबन्धों का जोरदार मत है। प्रयोगपारिजातकार तो किसी तरह मध्य कुण्ड मानकर उसी को आचार्य कुण्ड कह उसी में सर्वप्रथम अग्निस्थापन करना चाहते है। यह ठीक नहीं। अतः नैऋ‍र्त्य कुण्ड से ही सर्वप्रथम अग्नि प्रणयन करे।

( २ ) कुछ आधुनिकों का मत है कि—

**कुर्यात्कुण्डानि चत्वारि प्रच्यादिषु विचक्षणः।**
**पञ्चमं कारयेत्कुण्डमीशानदिग्गोचरे॥**

और 'आचार्य कुण्डं मध्ये स्याद् गौरीपतिमहेन्द्रयोः। इन वचनों से ईशान आदि दिशा का कुण्ड आचार्य कुण्ड हो सकता है। क्योंकि इन वचनों का कोई बाधक वचन नहीं है।

पर यह कहना ठीक नही है। क्योंकि मत्स्य-पुराणादि में प्रतिष्ठा आदि प्रकरण में पठित होने से वहाँ ही चरितार्थ होंगे।

## शान्तिमयूखोक्त प्रकार से शतमुख कुण्ड का निर्माण—

सौ हाथ समचतुरस्र मण्डप का त्रिभाग हो जाने पर उस त्रिभाग के मध्य नवमांश में पूर्व दिया में— दक्षिण दिशा से उत्तर दिशा में ( उदक् संस्थ ) पाँच कुण्डों की एक पंक्ति लम्बी बनावे। इसी तरह पश्चिम दिशा में उदक् संस्थ–( दक्षिण से उत्तर ) तीन पंक्ती और हो जाने पर उनमें भी पाँच-पाँच कुण्ड बनेगे। इस तरह बीस कुण्डों की व्यवस्था हो जायगी।

इन पंक्तियों का अन्तराल आठ हाथ सात अंगुल होगा। और प्रत्येक कुण्ड का अन्तराल साढ़े सात हाथ सात अंगुल होगा।

अब अवशिष्ट अस्सी कुंडों की व्यवस्था बतलाते हैं—

उस मण्डप में बचे आठ नवमांशों के फी मध्य में दो-दो कुण्ड और बनने से सोलह कुंड होगे। फिर उन्ही आठ नवमांशों में बने दो दो कुण्डों के बाहर दिशा ओर विदिशा में आठ आठ कुण्ड और तैय्यार हो जाने स अस्सी कुण्डों की सुगमतया व्यवस्था हो जाती है। इस तरह सौ कुण्ड गिनती म आ जाते हैं।

( १ ) गौतमः —

कोटिहोमेषु नियमा बहवः सन्ति पार्थिव।
मौनं पद्मासनं ध्यानं हविष्यान्नं च भक्षणम्॥
स्थण्डिले शयनं गन्धताम्बूलादीनि वर्जयेत्।
मन्त्रान्तमुच्चरन् हुत्वा हविरुत्तानपाणिना॥
सत्यज्य विधिानेतान् ऋत्विजो वर्तन्सदा।
दोषाङ्गियमसन्त्यागान् न होमफल मश्नुते॥

( २ ) कोटिहोमे त्वाचार्यप्रार्थने विशेषः—

त्वं मे यतः पिता माता त्वं गतिस्त्वं परायणः ।
त्वत्प्रसादेन विप्रेंषे सर्वं में स्यान्मनोगतम् ॥
आपद्विमोक्षाय च मे कुरु यज्ञमनुत्तमम् ।
कोटिहोमाख्यमतुलं शान्त्यर्थं सार्वकालिकम् ॥

### दशमुख में पद्धति मत और किसी निबन्ध का मत –

पचास हाथ के समचतुरस्र मण्डप के नव भाग हो जाने पर उन नव भागों में क्रम से—कुंडों का निर्माण होगा । जैसे—मण्डप के निऋंतिदेश में – प्रथम कुण्ड, दूसरा—कुण्डपश्चिम देश में, तीसरा कुण्ड – वायुकोण में, चतुर्थ कुण्ड—दक्षिण दिश में, पाँचवाँ कुण्ड – मध्य के दक्षिण भाग के आधे हिस्से में और छठवाँ कुण्ड —मध्य के उत्तरार्ध भाग में होगा ।

यहाँ यह बात अवश्य वतला देना चाहिये कि—कुछ भाग पूर्वदिशा से और कुछ भाग पश्चिम दिशा से लेकर ही कुण्ड द्वय बनवाना चाहिए । अन्यथा कुण्ड बनने में बाधा पड़ सकती है ।

सातवाँ कुण्ड—उत्तर दिशा में, आठवाँ कुण्ड—अग्निदिशा में नवमा कुण्ड—पूर्वदिशा में और दशवाँ कुण्ड ईशानकोण में होगा । इन कुण्डों में आचार्य कुण्ड नैऋंत्य दिशा का ही प्रागुदपवर्गप्रचारानुरोध से होगा । जिसे प्रथम कुण्ड शब्द से कहा गया है । नवग्रहयाग में तो सर्वप्रधान सूर्य होने से मध्य का ही कुण्ड आचार्य कुण्ड होगा, यह शान्तिमयूखोक्ति ठीक है ।

### दशमुख शान्तिमयूख के मत में—

पचीस हाथ या पचास हाथ के समचतुरस्र मण्डप के नवभाग बराबर-बराबर के कर लेने पर पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर दिशा का ज्ञान मात्र हो ऐसे मध्य नवमांश से बिलकुल सटे चार कुण्डों को बनावे । तात्पर्य यह है कि ये दिशाओं के कुण्ड मध्यनवमांश में ही अधिक रहेंगे, और उनके बनाने की

व्यवस्था ऐसी हो जिससे ब्राह्मण भी सुख से बैठ जाँय। और पूर्वदिशा के नवमांश में प्रधान वेदी होगी। बाकी बचे ७ नवमांशों में से छः में क्रम से छः कुण्ड बनवा दे। एक नवमांश बिलकुल ही छोड़ दे। इस तरह दस कुण्डों की व्यवस्था होगी। इसी पक्ष को द्वैतनिर्णयसिद्धान्त संग्रह आदि निबन्धों ने भी लिखा है।

## शतमुख मण्डपका निर्माण प्रकार—

सौ हाथ समचतुरस्र—पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर दिशा से तैय्यार हो जानेपर उस मण्डप के चारों दिशाओं से सूत्रों द्वारा दस विभाग करने से प्रत्येक दस-दस हाथ परिमित सौ कोष्ठ होंगे। यह कुण्डरत्नावली और शान्तिसार का पक्ष है।

( १ ) प्राचीसूत्रमुदकसूत्र च दशधा विभज्य दश प्रागग्राणि दद्यात्। तेन दशहस्ताः शतं कोष्ठयः सम्पद्यन्ते। तेषां च मध्यं प्रसाध्य द्विहस्तकुण्डानि कुर्यात्। तानि चैकैकस्यां वीथ्यां दश दशेत्येव दशवीथी कुर्यादिति [ लिखितकोटिहोमपद्धतौ ]।

## द्विमुख मण्डप और कुण्ड—

पचीस हाथ के समचतुरस्र मंडप का भी भाग आठ हाथ आठ अंगुल करे। इस प्रकार नवभाग करने पर मध्य नवमांश में–पूर्व दिशा से और पश्चिम दिशा से कुछ हिस्सा लेकर उसके मध्य नवमांश में मिलाकर उसमें दो कुण्ड दक्षिणोत्तर बना देने से द्विमुख कुण्ड तैय्यार हो जायँगे। इसमें आचार्य कुण्ड दक्षिण दिशा वाला होगा। वही प्रधान कुण्ड कहा जायगा।

(१) क्रियासारे—

**नारिकेलदलैर्वापि पल्लवैर्वाथ वेणुभिः।**
**आच्छाद्या मंडपाः सर्वे द्वारवजे तु सर्वतः॥**

शारदातिलके—

**वितानधर्माद्यैरलं कुर्वीत मंडपम्॥**

गौतमीतन्त्रे—

पुष्पमालावितानाद्यं सर्वाश्चर्यमनोहरम् ॥

सिद्धान्तशेखरे—

कृतपल्लवमालाद्यं वितानैरुपशोभितम् ।
विचित्रवस्त्रसंछन्नं गुल्यस्तंभविभूषितम् ॥
फलैर्नानाविधैर्भक्ष्यैर्दर्पणैश्चामरैरपि ।
भूषितं मण्डपं कुर्याद्रक्तपुष्पसमुज्वलम् ॥

मण्डपस्तंभविषये—

कालोत्तरे-वस्त्रचन्दनपुष्पाद्यं वस्त्रचन्दभूषिताः ।

हयशीर्षपञ्चरात्रे—

दर्पणैश्चामरैर्घण्टैः स्तम्भान् वस्त्रैर्विभूषयेत् ॥

( २ ) कुंडकल्पलतायाम्—कोटिहोमं प्रकृत्य—हस्तैश्चतुर्भिस्तमध्ये कुण्डं कार्यं समन्ततः । तस्य चाकारविशेषानुक्तेः ।

### श्रौत और कर्मों में कुंड तथा मंडप मुख्य हैं या गौण स्मार्तादि—

श्रौत-स्मार्त और तान्त्रिक ये तीन प्रकार के कर्म हैं । पौराणिक कर्म तान्तित्रक में ही अन्तर्भूत हैं । पौराणिक कर्म को पृथक् मानने वाले चार प्रकार के कर्म मानते हैं ।

श्रौत और स्मार्त कर्म के प्रतिपादक आश्वलायन आदि श्रौत सूत्र गृह्यसूत्र मनु आदि स्मृति और गौतमादि धर्मसूत्र भी हैं । इनमें कुण्डमंडप की परिभाषा देखने में नहीं आती है । परन्तु मंडप का यज्ञशाला शब्द से और कुण्ड का वेदी शब्द से व्यवहार होता हैं ।

वेदं कृत्वा वेदिं करोति वेद्यामिव हुताशनः ।
अमी वेदिं परितः क्लृप्तधिष्ण्याः ॥

इत्यादि स्थलों में वेदी शब्द से कुण्ड का ग्रहण है। और यज्ञशाला, पत्नीशाला स्थलों में मंडप के लक्षण से यज्ञशाला आदि का लक्ष भिन्न है। तान्त्रिक तो सम चतुरस्र चार द्वार, चार उपद्वार और मध्य में ऊँचा मंडप कहते हैं। वैदिक तो एक द्वार, पताका आदि रहित तथा मध्येन्नति रहित मंडप बनाते हैं। योनी गर्त गर्तादि अभिमत नहीं हैं।

## कुण्ड मंडप की आवश्यकता—

नित्यं नैमित्तकं हित्वा सर्वमन्यत्समंडपम्—कोटिहोमपद्धति और मत्स्योक्त वचन से काम्यकर्म में मंडप आवश्यक है। नित्यं तथा नैमित्तिक कर्म में ऐच्छिक है। नित्यं नैमित्तिकं होम स्थण्डिल वा समाचरेत्। शारदालिक मत से नित्य और नैमित्तिक कर्म स्थण्डिल या कुण्ड में करें, परन्तु काम्यकर्म को कुण्ड में ही करे।

## कर्मभेद उनके उदारण विभिन्न मतों से—

कर्म तीन प्रकार के हैं, नित्य नैमित्तिक और काम्य। अहरहः सन्ध्यामुपासीत पञ्चयज्ञान्न हापयेत्। यावज्जीवमग्निहोत्रं सुहयात्। दर्शपूर्णपूर्णमासाभ्यां यजेत इत्यादि नित्यकर्म हैं। षण्णवतिश्राद्धादि नैमित्तवश किये जाते हैं। नित्य और नैमित्तिक कर्म न करने से प्रत्ययाय होता है। जिस कर्म को करने से प्रत्ययाय न हो और करने से वृद्धि हो उसे काम्य कहते हैं। जैसे—तीर्थयात्रा, व्रत, दान, यज्ञ, शान्तिक तथा पौष्टिक—यह मीमांसकमतानुसारिकर्मकाण्डियों का सिद्धान्त है।

**यज्ञों दान तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्।**
**एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च॥**

कर्तव्यानीति में पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् ( भ० गी० अ० १८ ) इत्यादि वचन से सिद्ध है कि फलाभिलाषी न होकर क्रियमाणकाम्यकर्म भी निष्काम कर्म होते हैं। यह वेदान्तियों का सिद्धान्त है।

## कुण्डमण्डप का प्रयोजन—

तीन प्रकार के कर्म होते हैं—दृष्टफल अदृफल और दृष्टफलक। वृष्टिकामः कारीर्या यजेत इत्यादिश्रुतिसे विहित कारीरेष्टयादि वृष्टिरूप ऐहिक फल का जनक

होने के कारण दृष्टफलक कर्म है। यावज्जीवमग्निहोत्रं जुहुयात्। इत्यादि विधि-बोधित अग्निहोत्रादि अदृष्टफलक कर्म है। दध्नेन्द्रियकामस्य जुहुयात् इत्यादि इन्द्रियकामना के लिये अग्निहोत्रविधि दृष्टादृष्टफलक है। अग्निहोत्रविधि स्वस्वरूप से अदृष्टफलको दधिरूप गुणांश से दृष्ट इन्द्रियफल को भी उत्पन्न करता है। प्रश्न-प्रतियोगी और अभाव का विरोध होने कारण दृष्ट और अदृष्ट का एकत्र समावेश कैसे होगा। उत्तर-हम दृष्टादृष्ट का एकत्र समावेश नहीं कहते है किन्तु दध्नेन्द्रिय कामस्य जुहुयात् यह गुणविधि दृष्टादृफलक है। इतना ही कहते हैं, यह विरुद्ध नहीं है। घट और घृध्वंस दोनों का कारण जैसा दण्ड है। इसी प्रकार कुण्ड और अदृष्ट उभय फलक हैं। वप्र-गर्तादि अंश से हवि का सम्यक् पाक होता है और होताओं को ज्वाला आदि सम्बन्ध नही होता। इसलिये कुण्ड दृष्टफलक है और नही, भी योनी, भी कण्ठ आदि अंश से अदृष्टफलक भी है वहाँ दृष्टफल सम्भव नहीं है विधिवलात् नाभ्यादि निर्माण होता है। अतः स्वर्गादि अदृष्टफल की वहाँ कल्पना की जानी है। स स्वर्गः सर्वान् प्रत्यविष्टत्वात् इत्यादिशास्त्र से अश्रुतफल में स्वर्गफल माना जाता है। एवं मण्डप भी आतप वर्षादि का निवारक होने से दृष्टफलक है और स्तम्भपरिमाण, स्तम्भनिवेश का प्रकार विशेष इतर दारु का सन्निवेशप्रकारविशेष इत्यादि नियमांश से अदृष्टलक भी है। जैसे-व्रीहीनवहन्ति यहाँ पर अवहननविधि तण्डुलनिष्पादक होने के कारण दृष्टफल है और अवहनन से ही निष्पादक करना नखविदलनादिना नहीं करना इत्यादि नियमांश से अदृष्टफल भी है।

## मण्डप का लक्षण—

मण्डपोऽस्त्री जनाश्रयः—अमर०। यद्यपि मण्डपशब्द सामान्य जनाश्रयवाची है। तदनुसार उत्सार्थ गृहमण्डपाम्। लतामण्डपः। सभामण्डपः। इत्यादि प्रयोग भी मिलते हैं। तथापि प्रकृतोपयोगी तान्त्रिक परिभाषासिद्ध मण्डपलक्षण कहते हैं-पञ्चरात्राद्युक्तरचनावत् यज्ञायनत्व मण्डस्य लक्षणम्। पञ्चरात्राद्युक्त रचनावाला यज्ञ का आयतन मण्डप होता है। विशेषण न कहें तो वैदिक-यज्ञशालादि में अव्याप्ति होगी। और विशेष न कहें तो तो देव प्रसादादि में अतिव्याप्त है, इस-लिये दोनों आवश्यक है।

### मण्डप का स्वरूप—

मण्डप दो प्रकार का है-स्थिरस्वास्तुरूप और चलवास्तुरूप। प्रतिष्ठाद्यैककर्मोपयूक्तोऽस्थिरद्रव्यनिर्मितश्चलः। शिलेष्टकादिनिर्मितः पर्यायेण बहुकर्मोपयुक्तः स्थिरमण्डप इत्युच्यते। अस्थिर द्रव्य निर्मित चल और स्थिर द्रव्य निर्मित अचल मण्डप होता है। गर्भागारस्य पुरतः सुजनासीति मण्डपः। तत्र नन्दी तु संस्थाप्यो देवस्याभिमुखः स्थितः। तदग्रे नवरङ्गाख्ये मण्डपं रचयेत्सुधीः। तत्पुरो बलिपीठं च तदग्रे ध्वजवजदण्डकम्। तत ईशानदिग्भागे यागमण्डपमारचेत्। स्थिरवास्तुविधानेन शिवयागादिसिद्धिये। नात्र दार्वादिनियमो भविता द्वारमेक मुदीरितम्। तदा–तदा यागकाले तोरणं स्यात् पृथक्-पृथक्। यद्व्यं देवसदनं तद्द्रव्येणैव कारयेत्। नात्रोपयुक्तत्वदोषो भवितात्र स्वतः क्वचित्। तत्तत्कर्मसु पार्थक्याद्-द्वास्तुहोमादिकं चरेत् ( क्रियासार )।

### मण्डप का प्रकार-

तत्तत्कर्मोपयुक्तद्वादशहस्तादि विस्तारवान् प्रान्ते द्वादशभिर्मध्ये चतुर्भिश्चस्तम्भैर्विधृतः मध्योच्छ्रितश्चतुर्दिक्षु क्रमावतीर्णपटलश्चतुरस्रश्चतुर्दिक्षु द्वारतोरणवान् यथोक्तदारुसन्निवेशवान् किञ्चिदुच्छ्रितभूतभूमिकस्तान्त्रिकाभिमतोमण्डपः।

### कुण्ड का स्वरूप—

तत्तत्कर्मानुरूपपरिमाणवन् मेखला गर्त-कण्ठ-योनि-नाभिमत् अग्न्यायतनं तान्त्रिकाभिमतं कुण्डमुच्यते।

### स्थण्डिल का स्वरूप—

हवनकर्मपर्याप्तो वालुकादिद्रव्यैरास्तृतश्चतुरेकाद्यङ्गुलोत्सेधो भूभागः, स्थण्डिलम्—इसमें कुण्डधर्म मेखलादि कोई मानते है कोई नहीं मानते है। अतः मेखलादि कृताकृत हैं।

### न्यूनाधिकप्रमाण में भी कुण्ड और मडप कर्मोपयोगी होते हैं या नहीं—

शास्त्रमें कुण्डका प्रमाण होमसंख्याके अनुसार विहित है। उसमें भी मुष्टिमात्रकितं कुण्ड शतार्धे संप्रचक्षते ( शारदा० ) एकहस्तमिदं कुण्ड शतार्धे

सम्प्रचक्षते ( शारदा० ) यह दो प्रकार विहित है। सिद्धान्तशेखरमें त्रिकर व्यवस्था कोटिहोमपद्धतिकार ने की है— एतत् शीघ्रदाहिघृतादिद्रव्यहोमविषयम्। तिलयवादिस्थूलद्रव्यहोमे तु होमसंख्याविशेषाम्नातमेव कुण्ड ग्राह्यम्। घृतादि होमद्रव्यमे अल्पपरिमाण और स्थूलद्रव्यमें अधिक परिमाण का कुण्ड होता है। यह व्यवस्था विकल्प जहाँ दो वचनका तुल्यवलविरोध हो वहाँ माना जाता है। तुल्यबलविरोध विकल्पः—यह शास्त्रसिद्धान्त है। वह विकल्प दो प्रकारका है व्यवस्थिविकल्प और तुल्यविकल्प। जहाँ व्यवस्थापक कोई हो उसको व्यवस्थित कहते हैं। जहाँ व्यवस्थापक न हो उसको तुल्य कहते हैं। उदिते जुहोति अनुदिते जुहोति। यह दो वाक्य हैं। प्रथमश्रुतिसे सूर्योदयानन्तर अग्निहोत्र विहित है और द्वितीयश्रुतिसे सूर्योदयात् प्राक्सिद्ध है। ये दोनों श्रुतियाँ अग्निहोत्र विधायक नहीं हैं। अग्निहोत्र तो—यावज्जीवमग्निहोत्रं जुहुयात्—इसीसे सिद्ध है, किन्तु अग्निहोत्र का अनुवाद करके तनङ्गभूतकाल विधायक ये श्रुति हैं इसीलिये इनको गुणविधि कहते हैं। यद्यपि यहाँ विधिवाचक लिङ्गादि नहीं है। तथापि लट्का लिङ्गत्वेन विपरिणाम होता है इन दोनों श्रुतियों का परस्परविरोध होने पर दोनों तुल्यबल हैं, अतः विकल्प का आश्रयण होता है। वह भी जिनके सूत्रमें उदितहोम विहित है—उनको उदित होमी होना चाहिये और जिनके सूत्र में अनुदितहोम विहित है— उनको अनुदित होम करना चाहिये। यह व्यवस्थित विकल्प है। अतिरात्रे षोडशिनं गृह्णाति। नातिरात्रे षोडशिनं गृह्णाति। इत्यादि में व्यवस्थापक न होनेसे तुल्यविकल्प है। अतः अतिरात्रयाग में षोडशिग्रह ग्रहण ऐच्छिक है। प्रकृतिमें कुण्ड के विषय में न्यूनाधिक व्यवस्थित परिमाण प्रतिपादक वाक्यों में व्यवस्थापक गुरुलघुद्रव्यादि हैं अतः विकल्प माना जाता है। इस प्रकार यावत्संख्याक होममें यावत्प्ररिमाण कुण्ड कहा जाता है। एतादृश न्यूनाधिक परिमाण कुण्डका भी कहीं कहीं उपयोग होता है। न्यूनसंख्योदिते कुण्डेऽधिको होमो विधीयते। अनुक्तकुण्डे न्यूनस्तु नाधिके शस्यते क्वचित् ( कोटिहोमपद्धतिः ) न्यूनसंख्यावाले कुण्ड में अधिक हवन होता है अधिक संख्यावाले कुण्ड में न्यूनहवन नहीं होता है। इस वचनसे न्यून कुण्ड में अधिक-होम शास्त्रकारों का अभिमत है तथा यह सिद्ध है। इसी प्रकार अधिक कुण्ड में

न्यूनहोम भी कहीं अभिमत है कोटिहोमपद्धति में न्यूनसङ्ख्येऽपि स्थूलद्रव्यपरिमाणाधिक्यादावधिकसंख्योक्तमपि कुण्ड भवति। अर्थात्परिमाणम्—इति कात्यायनोक्त। न्यूनसंख्यहोम में भी अधिकहोमसंख्यावाला कुण्ड होता है- यह लिखा है। कुण्डरत्नावली में भी - (आहुति) तारतम्यसे कुण्डविस्तार कहकर अन्तमें कहा है कि—कुण्ड व्यवस्था पृथुसूक्ष्ममानाद् द्रव्यस्य कार्या स्वधिया सुधीभिः कुण्डव्यवस्था द्रव्यके स्थूल और सूक्ष्ममानसे अपनी बुद्धिसे विद्वानों को करनी चाहिये। इससे सिद्ध होता है कि—चर्वादिगुरुद्रव्यहोम में अधिक प्रमाण भी कुण्ड ग्राह्य है। शतार्धेरत्निः स्यात्—इत्यादि वचनसे शतार्ध शत शहस्रादि हवन में कुण्ड का विधान सिद्ध हुआ। परन्तु शतादि आन्तरालिक संख्याक होम में कुण्ड परिकोण कितना हो इस शंकाको दूर करने के लिये 'न्यूनसंख्यादिते' यह वचन है। इसलिये नवशत अष्टशतादि अनुक्त कुण्डकहोम सहस्रहोमोदित कुण्ड में नहीं करना किन्तु पूर्वकथितशतसंख्याकहोमकुण्ड में ही करना यह सिद्ध होता है। इस प्रकार 'न्यूनसंख्योदिते' यह वचन अनुक्त कुण्डक आन्तरालिक होम में न्यून कुण्डका विधायक हुआ। तब यही वचन अधिक कुण्ड में गुरुद्रव्यक न्यून होम का निषेध नहीं कर सकता है। क्योंकि दो कार्य का विधान करने से वाक्य भेद दोष होता है। पूर्वार्द्ध से न्यूनकुण्ड में अधिक होमविधान और उत्तरार्द्धसे अधिक कुण्ड में न्यून होम का निषेध विधानद्वय करने में 'अनुक्त कुण्डो 'न्यूनस्तु' यह अनुक्त कुण्ड स्वरूप जो होम का विशेषण है, यह बाधित होता है। कदाचित् कहें कि—

न्यूनाधिकं न कर्तव्यं कुण्ड कुर्याद्धिनाशनम् परशुरा० ) इस वचनान्तर के रहते अधिक कुण्ड उपादेय नहीं हो सकता है, तो इसका उत्तर यह है कि यह वचन भी प्रकृतार्थ साधक नहीं है, किन्तु इस वचन का ही नाधिकाङ्ग लक्षण रहित कुण्ड निषेध में ही तात्पर्य है। इस वचन के पूर्व—

'आयामखातविस्तारायथातथं तथातथम्' यह वचन है और 'खातेऽधिके भवेद्रोगी हीने धेनुधनक्षय—यह उत्तर वचन है। इस प्रकार पूर्वापरपर्यालोचनया अलक्षण कुण्ड का निषेधक ही परशुराम वचन है, कि अधिक कुण्ड में अल्पाहुति का नहीं यह स्पष्ट है।

कोई विद्वान्—अनुक्तकुण्डो न्यूनस्तु नाधिके शस्यते क्वचित् । यहाँ क्वचित् शब्दसे अधिक कुण्डमात्रमें न्यूनहोम का निषेध करते हैं, परन्तु वह भी ठीक नहीं है, क्योंकि चार हाथ के कुण्ड में जिसमें दो-दो हाथ के चार भुजमान हैं वहाँ पर 'खात क्षेत्रसमं प्राहुः' इत्यादि शास्त्र से दो हाथ के खात करने पर कुण्डावकाशरूप क्षेत्रफल आठ हाथ का होता है, एवं द्वित्रिहस्तादि कुण्डमें सर्वत्र क्षेत्रफल के आधिक्य होने पर भी द्विहस्त त्रिहस्त चतुर्हस्त कुण्ड यही व्यवहार प्रमाणिक कहते हैं, विचार करने पर तत्तद्धोम के प्रति ये भी अधिक कुण्ड हैं। तो क्वचित् शब्द से यदि अधिक कुण्डत्वावच्छिन्न में न्यूनहोमसामान्य निषेध माना जाय तो इन कुण्डों का भी निषेध हो जायगा । कोटिहोमपद्धति में स्पष्ट कहा है कि—यद्यपि द्विहस्तत्रिहस्तादिकुण्डेषु हस्तमात्रमेव खातं यूक्तम् अन्यथा क्षेत्रफलाधिक्यात् । तथापि वचनादधिकमपि खातं न दोषाय, आगे चलकरलिखा है—

एतेन कुण्डभूतलमेव क्षेत्रफलमितिवदन्तः परास्ता ।
गर्तस्य न्यूनाधिक्येऽपि भूतले प्रमाणाधिक्यन्यूनत्वाद्यसंभवात् ।
सिद्धस्य भूतलस्य फलत्वायोगाच्च ।
साध्यस्त्ववकाशः फलत्वेनाभ्युपगन्तुं युक्तम् ।
न च ज्योतिष्टोमेन स्वर्गकामो यजेतेत्यादौ सिद्धस्यम् ।
स्वर्गस्य कथं फलत्वाभ्युपगम इत्याशङ्कनीयम् ।
तत्रापि साध्यस्य कर्तृस्वर्गसम्बन्धस्यैव फलत्वमिति सन्तोष्टव्यम् ।

कुण्डभूतल ही क्षेत्रफल है, यह भी ठीक नहीं है। जिस प्रकार द्वित्रिहस्तादि कुण्डमे क्षेत्रफलके आधिक्य होने पर भी न्यूनहोम वचनबलसे होता है। इसी प्रकार चर्वादिगुरुद्रव्यहोम भी में अधिक कुण्ड ग्रहण शास्त्रकारों को अभिप्रेत है । इससे सिद्ध हुआ कि न्यूनाधिक कुण्ड भी वचनबल से कहीं कर्मोपयोगी होता है एवं न्यूनाधिक मण्डप भी कर्मोपयोगी होता है। विशुद्धस्तप्रमाणेन मण्डपकूटमेव वा ( कोटिहोमप० ) । लक्षणरहित मण्डप को कूटमण्डप कहते हैं । यह कूटमण्डप स्वलक्षण मण्डप के अभाव में है ।

सलक्षण मण्डपासम्भवे छायामात्रं कर्तव्यम् ।

तत्र अपूर्वंप्रयुक्तत्वाद्धर्माणां यवेष्विव व्रीहिधर्माः

मण्डपपूजादयोऽप्यत्र भवन्ति ॥ ( कोटिहोम पद्धति )

अलक्षण मण्डप में भी यवों में व्रीहीधर्म के सदृश मण्डप पूजादि होते हैं। तात्पर्य यह है कि —दर्शपूर्णमासयाग में पुरोडाश के लिए व्रीही संस्कार के लिये—व्रीहीन् प्रोक्षति । व्रीहीनवहन्ति । इत्यादि श्रुति हैं। व्रीही के अभाव गृहीत होते हैं। वहाँ यवों का भी प्रोक्षणादि संस्कार हो या नहीं इस संशय में 'व्रीहीन् प्रोक्षति' इत्यादि विधिवाक्य में यव का ग्रहण नहीं है। अतः यव का प्रोक्षणादि संस्कार न होना चाहिये ऐसा पूर्वपक्ष प्राप्त हुआ। सिद्धान्त यह है कि व्रीहि प्रतिनिधियों का भी प्रोक्षणादि संस्कार होता है। असंस्कृत द्रव्य-याग योग्य नहीं होते हैं और अङ्ग कर्मसे जनित अपूर्वसाध्य परमापूर्व को धर्म पुण्य इत्यादिशब्दों से कहा है। यदि अङ्गजन्य लुप्त कर दिये जाँय तो परमापूर्व विकल होगा तथा परमापूर्व विकल होने से स्वर्गादि इष्ट फल का सार्थक न होगा। इसलिये अङ्गापूर्व के लिये यवों में भी प्रोक्षादि संस्कार होता हैं। इसी प्रकार--"मण्डपप्रतिनिधित्वेन उपादीयमान छायामण्डपमें भी अपूर्वोत्पत्ति के लिये वास्तुहोम मण्डपपूजादि होते हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि छाया मण्डप भी कर्मोपयोगी है। इससे यह भी सिद्ध हुआ कि अलक्षणमण्डपानिन्दा परक वचन सलक्षण मण्डप सम्भव मे अलक्षण मण्डप निषेधपरक हैं।

## स्थण्डिलका स्थान—

कुण्डमेवं विधं स्यात् स्थण्डिले वा समाचरेत्—इत्यादिप्रमाणसे स्थानापन्न स्थण्डिल का भी वही स्थान है जो कुण्ड का है। तत्स्थानापन्नस्तद्धर्मं लभते स्थानधर्माणां स्थाण्यतिदेशः । कुण्डस्थानापन्न स्थण्डिल भी कुण्डस्नान में ही होता है स्थानान्तर में नहीं । सीमाभावे पूतीकानभिषुणुयात्— इत्यादि स्थल में सोम स्थानान्न पूतीकाओं में भी क्रय आप्यायनादि सब धर्म होते हैं। अतः हवन प्रधानकर्म में एक कुण्ड पक्ष में मध्य में कुण्ड होना निश्चित है तो कुण्डभाव में स्थाण्डिल भी मध्य में होगा। यदि मध्य में कुण्ड और १००। २०० आहुति

भी मण्डप में करना है। तब भी मध्यस्ति कुण्ड में अधिक प्रमाण में भी वह होना उचित है, कुण्डापार्श्व में स्थण्डिल निर्माणकर नहीं।

## कुण्डसिद्धिके मतानुसार कुण्डों का नाप—

( क ) एक हाथ के कुण्ड में चौबीस अंगुल होता है।
( ख ) दो हाथ के कुण्ड में चौंतीस अंगुल होता है।
( ग ) तीन हाथ के कुण्ड में इकतालीस अंगुल पाँच यव होता है।
( घ ) चार हाथ के कुण्ड में अड़तालीस अंगुल होता है।
( ङ ) पाँच हाथ के कुण्ड में तिरपन अंगुल पाँच यव होता है।
( च ) छः हाथ के कुण्ड में अट्ठावन अंगुल छः यव होता है।
( छ ) सात हाथ के कुण्ड में तिरसठ अंगुल चार यव होता है।
( ज ) आठ हाथ के कुण्ड में छाछठ अंगुल सात यव होता है।
( झ ) नव हाथ के कुण्ड में पचहत्तर अंगुल होता है।
( ञ ) दस हाथ के कुण्ड में पचहत्तर अंगुल सात यव होता है।

( १ ) पौष्कलसंहितायाम्—

नाकुंड हवनं यस्मात्सिद्धिकृःमंत्रयाजिनाम्।
तस्माकुण्ड सदा कार्यं सौत्रं वा जङ्गमं स्थिरम्॥

( २ ) उत्तरतन्त्रे—

नवैकादशकुण्डानि कुर्याद्उत्तममण्डपे।
चतुष्कुण्डी मध्यमे यात्कानिष्ठेककुण्डकम्॥

पुरश्चार्यार्णवे—

नव पक्षार्थ चैकं वा कर्तव्यं लक्षणान्वितम्।

( ३ ) क्रियासारे—

दिक्षु द्वाराणि चत्वारि कुर्यान्मण्डप मध्यतः।

( ४ ) कुंडकल्पतायाम्—

वर्जयेन्निम्बकाष्ठानि शकरार्कभवानि च।

अगस्तिशिग्रुवृक्षोभैमण्डप नैव कारयेत् ॥

( ५ ) यत्रादूनं प्रमाणं तु मण्डपादौ न चिन्तयेत्।

सूत्रस्याधो विलीयन्ते यूकालिक्षादयस्तथा ॥

( ६ ) पञ्चमेखला पक्ष में मेखलाओं को यथारुचि रंग द्वारा सुशोभित करे यह कोटिहोमपद्धति का मत है ॥

( ७ ) ध्वजापतादि अधिक भी मण्डप की शोभा बढ़ाने में रख सकते है। दश दिक्पालों की ध्वजा और पताकाओं से इनका कोई सम्बन्ध नहीं है। यह कोटिहोम पद्धतिकार लिखते हैं।

( ८ ) पवमानपद्धौ—समुद्रगा नदीतीरे सङ्गमे वा शिवालये। आरामे विष्णुगेहे वा देवखातादिसन्निधौ ॥ गृहस्येशानभागे वा गङ्गातीरे विशेषतः। स्थण्डिले पर्वताग्रे वा गृहाग्रे वा गृहाङ्गणे ॥ मण्डपस्तु प्रकर्तव्य शुभलक्षण-गृहाग्रेयदि कुर्वीत तत्समा कुण्ड परित्यजेत् ॥

( ९ ) अर्धचन्द्रकुण्ड—चतुरस्त्रक्षुत्र का चौबीस हिस्सा कर सवा दो अंगुल पूर्व दिशा में सवा दो हाथ पश्चिम दिशा में छोड़कर दक्षिणोत्तर रेखा देने से अर्धचंद्र कुण्ड बना जाता है।

दूसरा प्रकार—चतुरस्त्र कुण्ड में नव रेखा कर आदि और अन्त में एक-एक भाग को छोड़कर दक्षिणोत्तर रेखा द्वारा देने से तय्यार हो जाता है।

( १० ) पद्मकुण्ड—बारह अंगुल चार यव का एक वृत्त बनाकर उसके बाहर पन्द्रह अंगुल एक यव और दो यूका का दूसरा वृत्त बनाकर रेखा द्वारा कुण्ड बन सकता है। या छः छः अंगुल के पाँच वृत्त बनाकर पद्म बनावे। देखिये विशेष निर्णय सिन्धु में।

( ११ ) अरणी की लम्बाई चौबीस अंगुल, छः अंगुल और ऊँचाई चार अंगुल होती है।

( १२ ) जिस लकड़ी में रज्जू लपेट कर मन्थन किया जाता है । उसका नाम चात्र है । वह बारह अंगुल का होता है ।

( १३ ) चात्र को रोकने के वास्ते छिद्र युक्त जो ऊपर से लगाया जाता है। उसका नाम ओविली है । उसका भी प्रमाण बारह अंगुल होता है ।

( १४ ) जिस रस्सी से मन्थन किया जाता है । उसका नाम नेत्र है ।

( १५ ) चात्र के नीचे के हिस्से में उत्तरारणि से पृथक कर जो कील लगायी जाती है । वह आठ अंगुल की होती है । उसका नाम प्रमन्थ है ।

( १६ ) मन्थन के समय में अरणी को पृथ्वी पर केवल न रखकर कंबल मृग चर्म आदि के ऊपर रखने का विशेष नियम है ।

# कुण्ड-मण्डपके सम्बन्धमें आवश्यक विचार व कुण्डोंके भेद

## आठ प्रकार के कुण्ड–

चतुरस्र कुण्ड, योनिकुण्ड, अर्धचन्द्र कुण्ड, त्रिकोण, कुण्ड, वृत्त कुण्ड, ( वर्त्तुल कुण्ड ), षडस्र कुण्ड, पद्म कुण्ड और अष्टास्र कुण्ड— ये आठ प्रकारके कुण्ड होते हैं।

## एक कुण्ड–

एक कुण्ड के यज्ञ में मण्डपके मध्यमें ही कुण्ड बनता है। एक कुंड के यज्ञ चतुरस्त्र अथवा पद्म कुण्डका निर्माण किया जाता है, किन्तु कामना-भेदसे अन्य कुण्डका भी निर्माण हो सकता है।

## पाँच कुण्ड–

पाँच कुण्डके यज्ञमें पूर्वमें चतुरस्त्र, दक्षिणमें वृत्तार्ध ( अर्धचन्द्र ), पश्चिम में वृत्त ( वर्त्तुल ), उत्तर में पद्म और मध्यमें चतुरस्त्र कुण्ड ही ( आचार्यकुण्ड ) होता है।

## नव कुण्ड–

नव कुण्डके यज्ञ में पूर्व में चतुरस्त्र, अग्निकोणमें योनिकुण्ड, दक्षिणमें अर्धचन्द्र ( वृत्तार्ध ), नैर्ऋत्योणमें त्रिकोणमें, पश्चिममें वृत्त ( वर्त्तुल ), वायव्यकोणमें षडस्त्र, उत्तरमें पद्मकुण्ड, ईशान कोणमें अष्टास्त्र ( अष्टकोण ) और मध्यमें चतुरस्र कुण्ड ही ( आचार्यकुण्ड ) होता है।

## चार कुण्ड–

चार कुण्डके यज्ञ में बीचमें जो प्रधानवेदी होती है। पूर्वमें चतुरस्त्र, दक्षिणमें अर्धचन्द्र, पश्चिममें वृत्त और उत्तरमे पद्मकुण्ड होता है।

## नव कुण्डों की योनिपर विचार–

नव कुण्डके यज्ञ में चतुरस्त्र कुण्डकी योनि दक्षिण दिशामें उत्तराग्र होती है।

अग्निकोणमें योनिकुण्ड होता है। इसमें योनि नहीं होती।

दक्षिणमें अर्धचन्द्र कुण्डकी योनि दक्षिण दिशामें उत्तराग्र होती है।

नैऋर्त्य कोणमें त्रिकोण कुण्डकी योनि पश्चिम दिशामें पूर्वाग्र होती है।

पश्चिममें वृत्त कुण्डकी योनि पश्चिम दिशा में पूर्वाग्र है।

वायव्य कोणमें षडस्त्र कुण्डकी योनि पश्चिम दिशा में पूर्वाग्र होती है।

उत्तरमें पद्मकुण्ड की योनि पश्चिम दिशा में पूर्वाग्र होती है।

ईशानकोणमें अष्टास्त्र कुण्ड ( अष्टकोण ) की योनि पश्चिम दिशामें पूर्वाग्र होती है।

मध्यमें चतुरस्त्र कुण्डकी योनि पश्चिम दिशामें पूर्वाग्र होती है।

## पाँच कुण्डोंकी योनि पर विचार–

पाँच कुण्डके यज्ञमें मध्यके कुण्ड की ( चतुरस्त्र कुण्डकी ) योनि पश्चिम दिशा में पूर्वाग्रही है।

पूर्वमें चतुरस्त्र कुण्डी योनि दक्षिण दिशा उत्तराग्र होती है।

दक्षिणमें अर्धचन्द्र कुण्डकी योनि दक्षिण दिशा में उत्तराग्र होती है।

पश्चिममें वृत्त कुण्डकी योनि पश्चिम दिशा में पूर्वाग्र होती है।

उत्तरमें पद्मकुण्डकी योनि पश्चिम दिशा में पूर्वाग्र होती है।

## चार कुण्डों की योनि का विचार-

पूर्वमें चतुरस्त्र कुण्डकी योनि दक्षिण दिशामें उत्तराग्र होती है। दक्षिणमें अर्धचन्द्र कुण्डकी योनि दक्षिण दिशामें उत्तराग्र होती है। पश्चिममें वृत्त कुण्डकी योनि पश्चिम दिशामें पूर्वाग्र होती है। उत्तर पद्मकुण्डकी योनि पश्चिम दिशामें पूर्वाग्र होता है।

## मेखला और रंगका विचार कुण्डमें-

प्रत्येक कुण्डमें तीन-तीन मेखला होती हैं। ऊपरकी मेखलाका सफेद रंग, मध्यकी मेखलाका लाल रंग और नीचे की मेखलाका काला रंग होता है।

## कुछ कुण्डोंका अलग-अलग फल—

चतुरस्त्र कुण्ड समस्त प्रकारकी सिद्धिको देनेवाला है। योनिकुण्ड पुत्रको देनेवाला है। अर्धचन्द्र कुण्ड ( वृत्तार्ध कुण्ड शुभ फलको देनेवाला है। त्रिकोण कुण्ड शत्रुओंका नाश करनेवाला है। वृत्तकुण्ड ( वर्तुलकुण्ड ) शान्ति-स्थापन करनेवाला है। षडस्त्रकुण्ड मृत्युच्छेदन करनेवाला ( मृत्युको दूर करनेवाला ) है। पद्मकुण्ड वृष्टिको देनेवाला है। अष्टास्त्र कुण्ड रोगको हटानेवाला है।

## वर्णभेद से कुण्डनिर्माण की व्यावस्था—

एक कुण्डके यज्ञमें वर्णभेदसे ही कुण्ड बनाना चाहिये। जैसे—ब्राह्मण लिये चतुरस्त्र, क्षत्रियके लिये वृत्त ( वत्तुल ), वैश्यके लिये अर्धचन्द्र ( वृत्तार्ध ) और शूद्रके लिये त्रिकोण कुण्ड कहा गया है। अथवा वर्णचतुष्टयके लिये चतुरस्त्र या वृत्त कुण्ड कहा गया है।

स्त्री यदि यज्ञ करे, तो उसके लिये योनिकुण्ड अथवा चतुरस्त्र कुण्ड के लिए कहा गया है।

## विविध यज्ञों के कुण्डादि का विचार—

१—विष्णुयागमें १, ५ और ९ कुण्डों के निर्माण का विधान कुण्ड-मण्डपके ग्रन्थों में मिलता है।

२—प्रतिष्ठा और तुलादानादि के लिये ७ कुण्डका विधान 'नारद-पञ्चरात्र' में और चार कुण्डका विधान 'दानमयूख' में मिलता है।

३—एक कुण्ड के विष्णुयागमें एक कुण्डके महाविष्णुयाग में और एक कुण्डके अतिविष्णुयागमें ६ हाथ ( ५८ अंगुल और ६ यव ) का कुण्ड होता है।

४—विष्णुयाग ५ कुण्ड एक-एक हाथ ( चौबीस अंगुल ) लंबे और चौड़े होते।

५—महाविष्णुयागमें ५ कुण्ड दो-दो हाथ ( चौंतीस अङ्गुल ) लंबे और चौड़े होते हैं।

६—अतिविष्णुयागमें ५ कुण्ड चार-चार हाथ (अड़तालीस अङ्गुल ) के लंबे और चौड़े होते हैं।

७—रुद्रयागमें भी विष्णुयागकी तरह १, ५ और ९ कुण्ड होते हैं। कुछ लोग रुद्रयपदेन ११ कुंड बनाते हैं।

८—नवग्रहयागमें सूर्यकी प्रधानता होनेके कारण मध्य का कुंड ही प्रधानकुण्ड ( आचार्यकुंड ) होना चाहिये, यह 'शन्तिमयूखका' मत है।

९—कोटिहोममें १००, १०, २ अथवा १ कुंड होता है।

१०—सौ कुण्डोंके यज्ञमें सभी कुंड वृत्त, पद्म अथवा चतुरस्र होते हैं। दस कुंडोंके यज्ञमें सभी कुंड वृत्त, चतुरस्र अथवा पद्म होते हैं।

दो कुंडोंके यज्ञमें दोनों कुंड वृत्त, चतुरस्र अथवा पद्म होते हैं। एक कुण्डके यज्ञमें वृत्त चतुरस्र अथवा पद्मकुण्ड होता है।

११—कोटिहोममें प्रधानकुण्ड नैर्ऋत्यकोणमें होना चाहिये, यह 'शान्तिमयूख' आदिका मत है।

१२—कोटिहोम में प्रधानवेदी पूर्व दिशामें होती है।

१३—कोटिहोममें अग्निस्थापन प्रधानकुंडमें ही करना चाहिये और प्रधानकुंड से ही अग्नि ले जाकर अन्य कुंडों में अग्निस्थापन करना चाहिये।

१४—कोटिहोममें सौ कुंड हो, तो प्रत्येक कुंड एक-एक हाथ लंबा और चौड़ा होता है।

कोटिहोममें दस कुंड हो, तो प्रत्येक कुंड छ-छ हाथ लंबा और चौड़ा होता है।

कोटिहोम में दो कुंड हों, तो दोनों कुण्ड छः-छः हाथ लंबे और चौड़े होते हैं।

कोटिहोममें एक कुण्ड हो, तो आठ हाथ का अथवा दस हाथ का अथवा सोलह हाथ का कुण्ड होता है।

## आहुतियों के अनुसार कुण्ड का प्रमाण—

पचास से कम आहुति कुण्ड में नहीं होती, किन्तु स्थण्डिल होता है। पचास से निन्यानवे आहुति में इक्कीस अङ्गुलका ( बँधी हुई मुट्ठी भर हाथका ) कुण्ड होता है।

सौ से नौसौ निन्यावे तक आहुतिमें २१½ अंगुल ( अरत्निमात्र ) का कुण्ड होता है।

एक हजार—आहुतिमें १ हाथका कुण्ड होता है।

दस हजार– आहुतिमें २ हाथका कुण्ड होता है।

एक लाख—आहुतिमें २ हाथका कुण्ड होता है।

दस लाख—आहुतिमें ६ हाथका कुण्ड होता है।

एक करोड़—आहुतिमें ८ हाथका कुण्ड होता है।

शारदातिलक का मत है कि कोटिहोम में १० हाथका कुण्ड होना चाहिए—

'दशहस्तमितं कोटिहोमेऽपि दृश्यते।

किसी आचार्यका मत है कि कोटिहोममें सोलह हाथका कुण्ड होना चाहिये।

[ पेज ३६२ से ३६७ तक ]

[ उद्‌घृत अंश ]

# ग्रहपीठ व ग्रहकुण्ड आदि के निर्माण का प्रकार

## सूर्यपीठ[1]

### ( ग्रहों की आकृति बनाने का प्रकार )

एक अंगुल, सात यव और छः यूकाको प्रकालसे नापकर मध्यसे वृत्त बनावे तो द्वादशांगुलात्मक सूर्यका क्षेत्रफल होगा। १ अङ्गुल, ७ यव, ५ यूका और ४ लिक्षा का वृत्त बनावे। यह लघुपीठमाला का मत है।

---

(१) लघुपीठमालायम्—सूर्यस्यार्काङ्गुलं वृत्तमेकाद्रीषुचतुः कृतम्। तद् व्यासार्धं तेन सम्यक् जायते नेत्रसुन्दरम ॥ १ ॥ एक १ अद्रि ७ इषु ५ चतु ४ भिः क्रमेण अंगुल-लिक्षाभिर्व्यासार्द्धम्। तद्विगुणो व्यासः ३। ७। चान्द्र सिद्धाङ्गुल वेदकोणं वेदाद्रिपक्षयुक् ॥ २ ॥ वेद ४ आद्रि ७ पक्ष २ क्रमेणांगुलादिभिः इदं कोटिमानं भुजमान च। भौमस्याब्धिफलं अत्र्स्रं त्रिखा बुधिराहतम् ॥ ३ ॥ त्रि ३ ख० शून्य अम्बुधम ४ श्वत्वारोङ्गुलाद्याः' तै आ हतं भौमस्य चतुरङ्गुलं फलं त्रिकोणं पीटं त्रिकोणे त्रयो-भुजाः समप्रमाणाः। तत्राधस्तना भूमिः उपरितनी भुजो तन्मानं ३। ०। ४। चतुर्यवान्तरं वेदाङ्गुलं स्यात्त भुजद्वयम्। ऊर्ध्वाधस्तद्वयार्द्धश्च प्रत्येकं स्याच्चतुर्यवा। भूमिः षड्यववेदाभ्यां भुजाभ्यां षट्त्रिकोणम् तद्युक्तं बाणसमयं बुधपीटं प्रचक्षते ॥ ४ ॥ तर्काङ्गुलं गुरोः पीठ दस्रानलभुजद्वयम् ॥ ५ ॥ दस्रौ द्वयङ्गुलौ द्वौ भुजौ अनलौ व्यङ्गुलौ द्वौ भुजौ कोटिसंज्ञतश्चैकभुजैककोट्यौर्धातः फलं षडुल गुरुपीठम् ॥ शुक्रस्य पीठपञ्च स्रं कु न गेषु मिः व्यासेन वृत्ते पूर्वादिसमाज्याः पद मन्धगा। प्राञ्छिते बाह्यतो वृत्ते नवाङ्गुलफल मतम्। ६॥ वेदा ब्धि वेदा-ब्धि भूमिधनुः पीटं शनेश्चमात् मध्यस्थचतुरस्रस्य मानहीनात् षडङ्गुलम्। चतुरस्रे त्वपते चतुर्धनुः एकं धनुः फलं ग्राह्यं हीत्वा धनुस्त्रिकम ॥ ७ ॥

वेदाङ्गुलैर्वेदकोणे पूर्वतो रेखयोरिह तिर्यग ह्यग्यम्भोधिवृद्धिरधो बाह्वधमानतः। वृत्तेर्द्धे राहुपीठं स्याच्छूर्प सिद्धङ्गुलं शुभम् ॥ ८ ॥ प्रथमत

## चन्द्रपीठ—

चार अङ्गुल, सात यव और दो यूका का गज लेकर पूर्वकी तरफ एक लम्बी सीधी रेखा दे। उतनी ही दक्षिण दिशा की तरफ, उत्तर की तरफ तथा पश्चिम दिशा की तरफ देने से चतुरस्रपीठ बन जाता है।

---

एकं चतुरस्र तत्र भुजमानं ४।०।०। तदेव कोटिमानं ४।०।०। यत्र पूर्वयो रेखयोः तिर्यग् दक्षिणोत्तर द्वि ३ अग्नयः त्रयः अंभोधयः ४ दक्षिणे अर्धम् १।१।६। उत्तरे अर्धम्—१।१।६। अंगुलयवयूकानां वृद्धिः। अधो भूरमर्ध कृत्वा वृत्तद्वयं कार्यम्। चोपरिभूमिः ६।३।४ अधोभूमिः ४।०।०। अधोवृत्तव्यासार्धम्—१।०।०। तद्द्विगुणो व्यासः २।०।०। पूर्वापरौ गतौ बाहूकोटिरर्द्धाङ्गुला भवेत्। ऊर्ध्वमेकाङ्गुल हित्वा-हित्वा चापः शरागुंलम् चतुरेकांगुलयव लग्नास्यं व्यस्रभारभ केतोर्ध्वजा कुण्ड स्याद् गजा-गुऽलमित शुभम् ॥९॥ यावा भूमिः सप्तविंशाङ्गुलाब्धियावावृत्ताद्वावृत्ताज्यातियेः स्यात्। त्रयोविंशस्तत्र लम्बाङ्गुलश्च राहोः शूर्पं कुण्डमेत द्विचित्रम् ॥ प्रकारान्त-रपक्षः—सिद्धाऽङ्गुलो भवैल्लम्बः पश्चाद् भूमिर्नखाङ्गुला। पूर्वार्विंशतिः प्रोक्ता शूर्पं स्यात् ऋजु कोणके ॥ इत्यनेन पश्चाद् वृत्तं नास्तीति ध्वानितम्।

संग्रहाऽर्द्धं साधरामेण चापेन्तज्र्याहः स्याद् वृत्तपादो दिगंकात्।
सूत्राद्द्रोद्राद्बाह्यमौर्व्यर्हमेवं वृत्तं दद्याज्ज्यास्पृगेवं परार्द्धम् ॥
इषुवेदमितेन दीर्घदोष्णा गजदोष्णा लघुतापि च त्रिषष्ठिः।
जिनलम्बगणेन वार्द्धषट्त्रि भुप्रत्राधात्पूवदन्ति केतुकुण्डम् ॥
एकेन युग्मत्रिभिरङ्गुलीभिः परेणं धृत्या च मिलेन दोष्णा।
सुदीर्घवेदास्रमुशन्तिकुण्डं निगद्यतेऽथो द्विविधं शरोभम् ॥

नोट—देखिये-विशेष निर्णयसिन्धु-सटीक कृष्णभट्टी पृ० १०९१ और लिखित ग्रहपीठमाला की टीका में भी देखें।

**रूप नारायण मत से**—३ अंगुल, ७ यव, २ यूका और ४ लिक्षाका एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर उस वृत्तके ठीक मध्यसे दक्षिणोत्तर ७ अङ्गुल, छः यव और ५ यूका की एक लम्बी रेखा दे। ऐसा करने से दो वृतार्ध होंगे। उसमें से पश्चिम हिस्सेके वृत्तार्ध को मिटा देने से चौबीस अङ्गुलात्मक अर्धचन्द्र हो जायगा।

## मंगलपीठ–

**तीन** अंगुल और चार यूकाको गजसे नापकर उत्तर की तरफ एक सीधी रेखा दे। उस रेखाके अन्तिम सिरोंसे अर्थात् दोनों कोनें से अलग-अलग एक-एक टेढ़ी रेखा उतनी देनेसे मंगलपीठ बन जाता है या एक यूका, ५ यव और दो अंगुल लम्बी दक्षिणाग्र रेखा दे। ( दक्षिणाग्र या उत्तराग्रकरे–यह संस्काररत्नमालाका मत है।

**मंगलपीठ का दूसरा प्रकार**— ३ अंगुल ४ यव और छः यूका की एक लम्बी रेखा उत्तरदिशा की तरफ दे। तदनन्तर वायव्यकोणसे एक टेढ़ी रेखा २ अंगुल, ४ यव और छः यूका की ठीक दक्षिण दिशामें दे। वैसे ही ईशानकोणसे जो रेखा दे वह भी दक्षिण दिशावाली रेखा में मिलानेसे त्रिकोणपीठ बनेगा।

## बुधपीठ–

मध्यसे चार यव छोड़कर एक रेखा दक्षिणसे उत्तरकी तरफ चार अंगुल की लम्बी सीधी दे। वैसे ही चार अंगुल की मध्यरेखासे ४ यव छोड़कर उत्तरसे दक्षिणकी तरफ दे। तदनन्तर उत्तरदिशा की तरफ वाली रेखा के अन्तिम सिरे से दो यव पूर्व दिशाकी तरफ और यव पश्चिम दिक्षाकी तरफ बढ़ा दे। वैसे ही नीचे दक्षिणदिशाका दोनों रेखाओंको दक्षिणकी तरफ बढ़ा दे। फिर पूर्वदिशा में बड़ी २ यव वाली रेखाके अन्तिम सिरेसे दो अंगुल छः यव की एक रेखा टेढ़ी दे जो उत्तर मिले। वैसे ही पश्चिमकी तरफसे रेखा दे। ऐसा करनेसे बुधपीठ बन जाता है।

**रूपनारायण के मत से**—एक अंगुल, सात यव और छः यूका का एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर उस वृत्तके ठीक मध्य में एक लम्बी रेखा दक्षिणोत्तर दे। फिर उस आधे दो वृत्तों में से एक आधे वृत्तको मिटा देनेसे षडङ्गुलात्मक बुधपीठ बना जाता है।

## गुरुपीठ—

दो अंगुल चार यव और दो यूकाका एक गोलाकार वृत्त बनाकर उस वृत्तमें चार अंगुल चार यूका तथा दो लिक्षाका दूसारा वृत्त बनावे। तदनन्तर उस वृत्तमें बराबर-बराबर के सोलह चिह्न कर विदिशा के पाँचवे चिह्न से प्रारंभकर आठ पत्र बनाने से नव अंगुलात्मक पद्मा-कार आकृति वाला गुरुपीठ बन जाता है।

**रूपनारायण के मतसे**—मध्य से दो अंगुल की दक्षिणदिशाकी तरह एक सीधी रेखा करे, तदनन्तर पूर्व और पश्चिम की तरफ तीन-तीन अंगुलकी सीधी रेखा दे। फिर उत्तरदिशा की तरफ दो अंगुल की रेखा दे। ऐसा करनेसे दीर्घचतुरस्र गुरुपीठ बना जाता है।

## शुक्रपीठ—

**प्रकारान्तर**—एक अंगुल, सात यव और पाँच यूका का एक वृत्त बनाकर उस वृत्तमें पूर्वदिशासे दो अंगुल, दो यव और तीन यूका पर चिन्ह करनेसे पंचकोणात्मक शुक्रपीठ बन जाता है।

**रूपनारायण के मतसे**—तीन अंगुल, एक यव, दो यूका और चार लिक्षा को प्रकार से पूर्वदिशा, पश्चिम और उत्तरदिशासे नाप कर बनानेसे चतुष्कोण ( चारकोनेवाला ) शुक्रपीठ बन जाता है।

**प्रकारान्तर**—छः यूका छः यव और दो अंगुलके प्रकालसे नापकर एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर उस वृत्तके पूर्वदिशासे तीन अंगुल यव ओर छः यूका पर एक चिह्न करे। अर्थात्-कुल ५ चिह्न करे। फिर फी चिह्न से एक चिह्न छोड़कर तीसरे चिन्ह पर जो रेखा

दी जायगी उस रेखा का नाप २ यूका, तीन यव और ५ अंगुल परिमित होगा। उसे बाहू कहते हैं। इसी तरह की ४ रेखा ( बाहु ) और दे। तदनन्तर कोणोंको छोड़कर बाहुवों और वृत्तको मिटानेसे पंचकोणात्मक शुकपीठ बन जायगा।

प्रकारान्तर पक्षसे—एक अंगुल ७ यव और पाँच यूकाका वृत्त बनाकर उस वृत्तसे बराबर के पाँचभाग करने से शुक्रपीठ बन जाता है। यह पक्ष लघुपीठमाला का है।

## शनिपीठ—

चार अंगुल, चार यूका और चार लिक्षाका एक गोलाकार वृत्त बनाकर उस वृत्तके ठीक मध्य से एक जीवा अर्थात् लम्बी रेखा छः अंगुल, तीन यव और ५ यूका की (या ६। ६। ५) देने से धनुषाकार पीठ बन जाता है।

अथवा—छः अंगुल ३ यव और ५ यूका की दक्षिणोत्तर एक जीवा-रेखा दे। तदन्नतर ७ अंगुल, १ यव और तीन यूका के नापकी रस्सी या प्रकाल द्वारा नापनेसे धनुषाकार शनिपीठ हो जाता है। या-७।१।३। की दक्षिणोत्तरेखा दे व तदनन्तर ६।३।५ की देने से धनुषाकार शनि-पीठ वन जाता है।

अथवा—छः यूका ५ यव और दो अंगुल का वृत्त बनाकर वृत्त के ठीक मध्यसे छः यूका ५ यव और तीन अंगुल की एक लम्बी रेखा देनेसे शनिपीठ बन जाता है।

प्रकारान्तर पक्ष से— २ अंगुल, ५ यव, ४ यूका और ४ बालग्रका एक गोलाकार वृत्त बनाकर उस वृत्तके भीतर ठीक मध्यमें—३ अंगुल, ६ यव और ४ यूका के परिमाणसे ज्या देनेसे शनिपीठ बन जाता है।

प्रकारान्तरपक्षसे—एक वृत्त ४ अगुल, ४ यूका और ४ लिक्षाका बनाकर उस वृत्तमें एक चतुरस्र बनावे। ( उस चतुरस्र की भुजा ६।३।५ होगी और कोटी भी ६।३।५ होगी। अर्थात्—बराबर का

चतुरस्त्र बनेगा )। तदनन्तर वृत्त में जो चतुरस्त्र बना है। उस चतुरस्त्रसे बाहर और वृत्तके भीतर पूर्वदिशा, दक्षिणदिशा और उत्तरशिामें जो निकलती है उन जगहों को (अर्थात् –वृत्तके सहित जगहोंको चतुरस्त्र की तीन रेखाओंको मिटानेके धनुषाकर पीठ बन जायगा।

अथवा—२ अंगुल की भुजा और तीन अंगुल की कोटी बना कर शनिपीठ बन सकता है। यह भी लघुपीठमाला का मत है।

[1]प्रकारान्तर-( १ ) मुख काव्यास छः यव तीन यूका होगा। अर्थात् छः यव और तीन यूका का एक गोलाकार वृत्त बनावे। उसी में आँख, कान आदि बनावे। (२) तदनन्तर दक्षिणोत्तर लम्बी रेखा तीन अंगुल और चार यव की करे। उसीको पूर्वका भू कहते हैं। ( ३ ) फिर मध्य की लम्बाई तीन अंगुल की होती हुई अन्त में सकरी होगी। ( ४ ) कन्धे की चौड़ाई एक अंगुल और दो यव की होगी। ( ५ ) हाथ की लम्बाई सवा दो अंगुलकी होगी। ( ६ ) कटीभागकी

---

१. सार्धत्रांगुलमिता ३ । ४। पूर्वभागे भूः। तत्पश्चिमे भागे सार्धांगुलद्वयमित २।४ मुखम् । मध्ये—त्र्यङ्गुलमितो लम्बः । तत्पश्चिमभागे चरणो कार्यों। सपादमेकांगुला भूः १।२ षड्यवोन्मितं ६ मुखम् । त्र्यङ्गुलमिती लम्बः ३। एतादृशो दक्षिणचरण। तथैव वामः सपादमेकाङ्गुला १ । २ भूः। षड्यवोन्मितं मुखम् सार्धद्वयमितांगुलो लम्बः । एतादृशो दक्षिणहस्तः। तथैव धामः। तत्पूर्वभागे षड्यवयूकात्रय ६।३ मितेन। कर्कटेन वृत्तो तच्छिरः। एवं कृते सति द्वाविंशत्यङ्गुलक्षेत्रफलात्मकं २२ नर कृतिः शनिमण्डलं भवति।

क्षेत्रफल— (क) उदरक्षेत्रफल ९ अंगुल। (ख) मुख का क्षेत्रफल २ (ग) चरण का क्षेत्रफल ६ अंगुल। (घ) हाथ का क्षेत्रफल ५ अंगुल। कुल क्षेत्रफल जोड में २२ होगा।

लम्बाई दक्षिणोत्तर दो अंगुल चार यवकी होगी। ( ७ ) जांघकी एक अंगुल दो यवकी होगी। ( ८ ) चरणकी लम्बाई तीन अंगुल की होगी। ( ९ ) चरणका भाग ६ यव का होगा।

## राहुपीठ—

चार अंगुल पूर्व, चार अंगुल पश्चिम, चार अंगुल दक्षिण और चार अंगुल उत्तर रेखा एक चतुरस्र समकोण बनाकर उस चतुरस्र के बाहर ईशानकोण और अग्निकोण में २ अंगुल ३ यव ४ यूकाका आधा १।१।६। दक्षिण दिशाकी तरफ और १।१।६। उत्तर दिशा की तरफ बढ़ा दे। तदनन्तर बढ़े हुए भागोंसे क्रमसे एक एक टेढ़ी रेखा वहाँसे नैर्ऋत्यकोणमें और एक टेढ़ी रेखा वायव्यकोणमें बढ़ा दे। फिर उस चतुरस्र का नीचे की पश्चिम की तरफ दो भाग कर ( अर्थात् दो-दो अंगुल पर मध्यकर ) उनमें दो वृत्तार्ध अलग २ बनाये। वृत्तका व्यासार्ध १।०।० होगा अलग-अलग, अर्थात-प्रथम भाग में एक वृत्तार्ध दूसरे भाग में दूसरा वृत्तार्ध बनाकर भीतर का चतुरस्र मिटादेनेसे शूर्पाकार पीठ होता है।

[1]प्रकारान्तर पक्षसे—( १ ) मुख एक अंगुल यवाधिक व्यासार्ध से एक वृत्त बनावै। मुख और उदर मध्यमें दों यवका एक चतुरस्र चारों

---

१. तत्र उदरे अंगुलत्रयमित भुजः। अङ्गुल चतुष्टमिता कोटिः। उर्ध्व-भागों पार्श्वयोः सार्द्धाङ्गुल दीर्घौ एकांगुल विस्तृतौ द्वौ करौ। तवन्मितावधो भागे पार्श्वयोर्द्वौ चरणौ। यवाधिकैकाङ्गुलव्यासार्धेन कृतं मण्डलं मुखम्। मुखो-दरयोर्मध्ये यवद्वयकितश्चतुरस्रो गलः। मुखादग्रे यवद्वयेनोष्ठौ पुच्छे त्रिभुजे अङ्गुल-त्रयमिता भूमिः। सार्धाङ्गुलो लम्बः। एवं कृते पञ्चविंशत्यङ्गुल क्षेत्रफलात्मकं मकराकृति राहुमण्लं भवति।

क्षेत्रफल—(क) भुज और कोटी का क्षेत्रफल १२ अङ्गुल। (ख) मुख का क्षेत्रफल ४ अङ्गुल। ( ग ) ओष्ठ और गले का-एक अंगुल। (घ) हाथ और चरण का क्षेत्रफल ६ अंगुल। कुल जोड़ २५ क्षेत्रफल होगा।

तरफ से गला होगा। मुखके आगे दो यवका ओष्ठ रहेगा। (२) तीन अंगुल की भुजा रहेगी। (३) हाथ की चौड़ाई एक अङ्गुल चार यवकी होगी। (४) कोटी चार अङ्गुल की होगी। (५) नीचे पूछ ठीक मध्य में (अर्थात्-पुच्छे त्रिभुजे अंगुलत्रयमिता भूमिः) त्रिभुज करने पर ठीक मध्य से एक लम्बी रेखा उत्तरदिशा की तरफ जो होगी वह तीन अंगुल की होगी।

## प्रकारान्तरपक्ष लघुपीठमाला और संस्काररत्नमालासे-

(१) मध्य से पूर्व दिशामें चार अंगुल रेखा सीधी दे। (२) दक्षिणदिशासे—चार अंगुल सीधी रेखा दे। (३) पश्चिमदिशामें चार अंगुलकी सीधी रेखा दे। (४) और उत्तरदिशा में—चार अंगुलकी सीधी रेखा देना। ऐसा करनेसे चतुरस्र तय्यार हो जायगा। तदनन्तर उस चतुरस्रके बाहर अग्निकोणमें दक्षिणकी तरफ एक सीधी रेखा छः यूका, १ यव और एक अंगुल की हो। उस रेखाके अन्तिमसिरे पर चिन्ह करे। इसी तरह उत्तर की तरह (ईशानकोणमें) छः यव एक अंगुलकी सीधी रेखा बढ़ा दे। फिर नैर्ऋत्यकोणसे एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षिण दिशा (अग्निकोण) में बढ़े हुए भागके अन्तिमचिन्ह पर मिले। वैसे ही-वायव्यकोण से एक टेढ़ी रेखा दे जो उत्तरदिशा में (ईशानकोण) में बढ़े हुए भाग के अन्तिमसिरे में मिले।

तदन्तर—उस चतुररत्र के नीच के हिस्से में (अर्थात्-वायव्य और नैर्ऋत्यवाले में) अर्थात् पश्चिमदिशामें उस चतुरस्रका दो दो अंगुल का मध्यसे एक अंगुल के व्यासार्ध पर चिन्ह करे। ऐसा करने पर प्रकाल द्वारा अलग-अलग दो वृत्त बनावे। फिर चतुरस्र के भीतर का अर्धवृत्त और चतुरस्र मिटानेसे शूर्पाकारका बनेगा।

## केतुपीठ—

पूर्वदिशासे पश्चिमदिशामें एक लम्बी रेखा आठ अंगुल की दे। तदनन्तर पूर्वदिशा से चार यव अर्थात्—आधा अंगुल हटाकर दूसरी लंबी रेखा उस रेखासे हटाकर दक्षिण दिशाकी तरफ दे। फिर पश्चिम दिशासे दक्षिणवाली रेखासे अधोभागसे पाँच अंगुल पर चिन्ह करें और पूर्वदिशासे अर्थात्—ऊपरसे एक अंगुल छोड़कर उसी रेखा पर चिह्न करे। एक अंगुलसे एक सीधी रेखा चार अंगुल, एक यव की दक्षिण तरफ वैसे ही पाँचवें भागसे दूसरी रेखा टेढ़ी दे जो ऊपर वाली रेखा ४ अंगुल और १ यव में मिले। ऐसा करनेसे मध्यवाली रेखा होगी। उससे केतुपीठ बन जाता है।

प्रकारान्तर पक्षसे—( १ ) कोटी पाँच अंगुल लंबी ( २ ) वङ्ग का त्रिकोणलंबाई दो अंगुल ( ३ ) भुजा चार अंगुल की ( ४ ) सम चतुरस्त्र एक अंगुल की मध्य में मुष्टिका।

## सूर्यकुण्ड-

२७ अंगुल ६ यूकाके आधेको प्रकाल द्वारा नापकर मध्य विन्दु से एक गोलाकार वृत्त बनावे। इस कुण्डका नाम सूर्य कुण्ड होता है।

## चन्द्रकुण्ड—

१३ अंगुल ७ यव और ४ यूका आधा १६।६।५। को प्रकालसे नापकर मध्य बिन्दु से एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर उस

---

( १ ) तत्र खड्गाकृतौ फलकस्य चतुरङ्गुलो भुजः। पञ्चङ्गुला कोटिः। खड्गाग्रत्रिकोणे अंगुलद्वयमित्त लम्बः। चतुरंगुला भूमिः। उपरि समचतुरस्रा अंगुलैकामुष्टिका। एवंकृते पञ्चविंशत्यङ्गुलक्षेत्रफलात्मकं खड्गाकृति केतुमण्डलं भवति।

वृत्तसे (क) ईशानकोण से एक सीधी रेखा दे जो अग्निकोणमें मिले। (ख) अग्निकोणसे एक सीधी रेखा दे जो नैऋर्त्यकोणमें मिले। (ग) नैऋर्त्यकोणसे एक सीधी रेखा दे जो वायव्यकोणमें मिले। (घ) वायव्यकोणसे एक सीधी रेखा दे जो ईशानकोणमें मिले। ऐसा करने से वृत्तके भीतर एक चतुरस्र बनेगा उस चतुरस्र को चन्द्रकुण्ड कहा जाता है।

## मंगलकुण्ड—

४२ अंगुल, तथा १ यव का आधा कर प्रकाल द्वारा मध्य बिन्दु से एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर पूर्व दिशा मुख) बिन्दु से एक

---

क्षेत्रफल—भुज और कोटी का २० (ख) त्रिभुज का क्षेत्रफल ४ (ग) मुष्टिका क्षेत्रफल १ कुल २५ क्षेत्रफल हुआ।

(१) ३८ अंगुल दो यव और तीन यूकाका आधा कर प्रकालसे नापकर मध्य बिन्दुमें एक गोलाकार वृत्त करे। उस वृत्तमें दिक् साधानार्थ पूर्वदिशा (मुख) से एक लंबी लकीर दे जो पश्चिम (पुच्छ) दिशामें मिले। तदनन्तर उत्तर दिशा (वामपार्श्व) से एक एक लकीर लंबी रेखा दे दक्षिणदिशा (दक्षपार्श्व) में जाकर मिले। फिर दक्षिण से उत्तर वाली जो रेखा (लकीर) दिक्साधनके लिये दी है। उस लकीरका चार भाग कर उसके चतुर्थ भाग पर (अर्थात् तीसरे चिह्न पर) प्रकाल को रख उत्तर दिशासे दूसरे वृत्त की तरह बनावे। (यह ध्यान रखे की दूसरे वृत्त की रेखा पश्चिम दिशा) और मुख (पूर्वदिशा की रेखाको स्पर्श करती आ रही है या नहीं) तदनन्तर तीसरे चिह्न से एक सीधी रेखा पूर्वदिशा और पश्चिमदिशा की तरफ देनेसे अर्धचन्द्र चन्द्रमा) कुण्ड बन जाता है। तात्पर्य यह है कि यहाँ पर जा दो वृत्त बनाये गये हैं उस दूसरे वृत्त से ही अर्धचन्द्र बनेगा। प्रथम वृत्तके मध्यसे नहीं बनेगा।

**अथवा**—एक कुण्डपक्ष में वृत्तका दिक्साधन कर उस वृत्त में दो चिह्न और करनेसे चार भाग होगे। उसके तीसरे चिह्नसे पूर्वदिशाकी तरफ वृत्त बनावे। तदनन्तर तीसरे चिह्न से ही दक्षिणोत्तर एक सीधी रेखादेनेसे अर्धचन्द्रकुण्ड बन जाता है।

सीधी रेखा दे जो पश्चिम दिशा ( पुच्छ ) में मिले । फिर दक्षिण-दिशा ( दक्षपार्श्व ) एक सीधी रेखा दे जो उत्तरदिशा ( वालपार्श्व ) में मिले । वायव्यकोण से एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षिणदिशा में मिले । ईशानकोण से एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षिणदिशा में मिले । ऐसा करने से त्रिकोणकुण्ड बन जाता है ।

अथवा—नैर्ऋत्यकोण से एक सीधी रेखा दे जो वायव्यकोण में मिले । नैर्ऋत्यकोण से एक टेढ़ी रेखा दे जो उत्तरदिशा में मिले । वायव्यकोण से एक टेढ़ी रेखा दे, जो उत्तरदिशामें मिले । ऐसा करने से त्रिकोणकुण्ड बन जाता ।

## बुधकुण्ड का प्रथमप्रकार—

मध्य बिन्दु से चार अंगुल हटाकर दक्षिणदिशा की तरफ एक रेखा सीधी ३६ अंगुल की दे । ( अर्थात् मध्य बिन्दु से चार अंगुल इधर और १८ अंगुल उधर रेखा देने से ३६ अंगुल होगा ) वैसे ही मध्य बिन्दु से चार अंगुल हटाकर उत्तरदिशा की तरफ एक रेखा सीधी दे जो ३६ अंगुल की होगी ।

तदन्तर दोनों रेखाओं की समाप्ति पर उत्तरदिशा की ओर एक रेखा पूर्वसे पश्चिम दिशाकी तरफ दे जिसका नाप २४ अंगुल होगा ।

( तात्पर्य यह है कि २४ अंगुल की जो रेखा दी जायगी उस रेखा का आधा १२ अंगुल होगा । उस बारह अंगुल के मध्य बिन्दु वाली रेखा के अन्तिम सिरे पर रखने पर पूर्वदिशा की तरफ १२ अंगुल रेखा का नाप होगा । पश्चिमदिशा की तरफ भी १२ अंगुल रेखा का नाप होगा । यों निश्चयात्मक हो जाने पर मध्य बिन्दु से अंगुल हटाकर दक्षिण दिशा की तरफ जो ३६ अंगुलत्मक रेखा दी है और ४ अंगुल हटाकर उत्तर दिशा की तरफ जो रेखा दी है उन रेखाओं के मध्य में चार २ अंगुल और आजायेगा । ऐसी स्थित में दोनों छोर में अलग अलग आठ अंगुलके बनेगा । ) इसी प्रकार अन्य प्रकारों में व्यवस्था समझ लेनी चाहिये ) फिर मध्यबिन्दुमें एक सीधी

दे जो दोनों रेखाओंके बराबरके नापकी हो। इस तरह कुल लंबी ३६ अङ्गुलात्मक तीन रेखा हुई ऐसा पूर्ण ज्ञानहोनेपर मध्यवाली रेखा के अन्तिमसिरेसे एक रेखा सीधी उत्तर दिशाकी तरफ २४ अङ्गुलकी दे।

तदनन्तर—पूर्वदिशासे पश्चिमदिशावाली रेखा के दोनों कोनेसे एक एक टेढ़ी रेखा दे जो कि उत्तरदिशामें जाकर मिले ऐसा करनेसे बाण कुण्ड बन जाता है।

## द्वितीयप्रकार—

मध्य विन्दूसे ५ अंगुल दक्षिण दिशाकी तरफ हटाकर एक सीधी रेखा दे जो रेखा ३६ अंगुलात्मक होगी। तद्वत् मध्यविन्दू से ५ अंगुल हटाकर उत्तरदिशाकी तरफ एक रेखा सोधी ३६ अंगुलात्मक दे। अर्थात्—मध्यविन्दूसे ५ अंगुल हटाकर पूर्वदिशाकी तरफ ३६ अंगुलकी एक सीधी रेखा दे। तद्वत् मध्यबिन्दूसे पश्चिमदिशाकी तरफ ६ अंगुल हटाकर ३६ अंगुलकी एक रेखा सीधी दे। तदनन्तर—उत्तरदिशाकी तरफ मध्य विन्दुवाली रेखाको २३ अंगुल या २४ अंगुल एक सीधी रेखा उत्तर दिशाकी तरफ बढ़ा दे। फिर उत्तरदिशाकी तरफ जहाँ ३६ अंगुलात्मक रेखायें समाप्त हो चुकी हैं वहाँसे पूर्वदिशासे पश्चिम दिशाकी तरफ १८ अङ्गुल की एक सीधी रेखा दे। फिर इस १८ अंगुलकी रेखा के दोनों ओर से एक एक टेढ़ी रेखा दे जो जो उत्तर-दिशामें मिले। ऐसा करनेसे प्रकारान्तर बाणकुण्ड बनेगा।

## तृतीयप्रकार कुण्डरत्नावलीका—

९८ अंगुल और ७ यूका के आधे को प्रकाल से नापकर मध्य विन्दु से ४ अंगुल, ५ यव और ५ यूका हटाकर एक सीधी रेखा दक्षिणोत्तर ( पूर्वदिशाकी तरफ) दे। जिसकी लंबाई ३८।३।५।१२।४ अंगुल होगी। जिसे 'दण्डवृहज्ज्या' शब्दसे कहसकते हैं। तद्वत्—मध्य विन्दुसे दक्षिणोत्तर ( पश्चिम दिशाकी तरफ ५ अंगुल, ५ यव और ५ यूका हटाकर एक सीधी रेखा दे। जिसका माप ३८।५।१२।४ अंगुल होता है।

तदनन्तर मध्यविन्दुमें एक रेखा दक्षिणोत्तरदे जो रेखा पूर्वरेखाओंके बराबर हो अर्थात् ३८।५।१।२।४ अंगुल की अर्थात् तीनों रेखायें बराबर की हो ऐसा निश्चय हो जानेपर उत्तरदिशाकी तरफ मध्य रेखाकी समाप्ति पर बायी तरफसे ८ अंगुल, ३ यव और ४ यूका की एक रेखा दे। ७ यवकी एक सीधी रेखा पूर्वसे पश्चिमकी तरफ दे। दूसरी दाहिनी तरफ ८ अंगुल ३ और ४ यूका की एक रेखा दे। ( अर्थात्-वृत्तका आठ भाग कर पूर्व-मुख, अग्निकोण अंश ( स्कन्ध ) दक्षिणपार्श्व, निर्ऋतिकोण-श्रोणी ( कटी ) पश्चिम—पुच्छ, वायव्यश्रोणी (कटी) उत्तरपार्श्व, ईशानअंश (स्कंध) तरफ—मुख ( पूर्वदिशा ) के समीप स्कन्धसे एक सीधी रेखादे जो पुच्छके समीप श्रेणी ( कटि ) में मिले। उस रेखा का मध्य और मध्यविन्दूसे जो रेखाकी समाप्ति हुई है-मध्य एक होगा। इसके मध्यसे पूर्वदिशा की तरफ ८ अंगुल ३ यव और ४ यूकापर एक चिह्न करे। वैसे ही मध्य से पश्चिमकी तरफ ८ अंगुल ३ यव और ४ यूका पर चिह्न करे) फिर उत्तरदिशाकी तरफ पार्श्वका बायें का आधा और दाहिनेके आधे पर एक रेखा दे। तद्वत् दक्षिणकी तरफ दे। फिर मध्य विन्दुवाली रेखा के अन्तिमसिरे से एक सीधी रेखा जो उत्तर दिशाकी तरफ जाय। जिसका नाम १५।७।४।७।२।४ है। यदि मध्यशर २।१। ६।६।५७ को १५।७।४।७।२ से घटा दे तो उपरका हिस्सा रेखा का चाप हुआ। तदनन्तर दाहिनी तरफ ( दक्षिण तरफ ) पार्श्वका चार भाग करे। आदिके दो भाग छोड़कर 'मध्यके भाग अन्तिम सिरेसे दक्षिणदिशावाली रेखाके अन्तिमसिरे से एक टेढ़ी रेखा जो मध्य के अष्टास्त्रिज्याके भीतर मध्यवाली रेखाके कोनेमें मिले। वैसे ही उत्तर वाली रेखा के अन्तिम सिरे से एक टेढ़ी रेखा दे। फिर मध्यकी बची रेखा मिटा दे और वृतादि मिटानेसे बाणकुण्ड बनेगा।

गुरु कुण्ड—

१६ अंगुल, ३ यव और ७ यूका का आधा ( १८।१।७।४ ) कर

प्रकालले नापकर मध्य विन्दुसे एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर वृत्त के बराबर के चौबीस चिह्न कर ७ चिह्नको छोड़कर एक रेखा सीधी ( पूर्वदिशाकी तरफ ) दक्षिणोत्तर वृत्त के भीत्तर दे इस रेखा वृत्तके भीतर दे जिसका नाप ३१।४।६।२।५। होगा। सात रेखा छोड़ कर ( पश्चिमदिशाकी तरफ ) दक्षिणोत्तर दे। फिर दोनों कोनोंको ( जिसके मध्यमें तीन तीन रेखा रहेगी ) रेखा द्वारा मिला दे। इन दो रेखाओं का नाप अलग अलग १७ अंगुल, १ यव, ७ यूका और ४ लिक्षा होता है।

तात्पर्य यह है कि—दक्षिणदिशा के समीप दक्षपार्श्वसे एक सीधी रेखादे–जो उत्तरदिशाके समीप वामांश में मिले। जिसका नाम (३१। ४ ६।२।५ होगा। फिर दक्षश्रोणीसे एकरेखा सीधी देंगे जो वाम-पार्श्वमें मिलेगी। जिस रेखाका नाप ( ३१।४।६।२।५ ) होगा। जिसको 'वृहज्जा' से पुकारा जाता है। तदनन्तर वामपार्श्वं एक सीधी रेखा देंगे, जो वामांशमें मिलेगी जिसका नाम १८।१।७।४ होगा जिसको 'लघुज्या' से कहा जाता है। फिर दक्षश्रोणीसे एक सीधी रेखा दें, जो दक्षपार्श्व में मिलेगी इस रेखाका नाम १८।१।८४ है। जिसे लोग 'लघुज्या' कहते है। ऐसा करनेसे आयत गुरुकुण्ड बन जाता है।

## द्वितीय प्रकार–

जो रेखा ऊपर ३१।४।६।२।५।की है। वह इस दूसरे प्रकार में ३२ अंगुलकी रहेगी जिसे 'वृहज्ज्या' शब्द से कहा जाता है। दूसरे रेखा जो ऊपर १८। १। ७।४।की कही है। वह यहाँ दूसरे प्रकार में १८ अंगुल की कही है। जिसे 'लघुज्या' शब्द से कह सकते हैं।

## शुक्रकुण्ड--

३१ अंगुल और १ यव आधे व्यासको प्रकालसे नापकर एक वृत्त गोलाकार बनाकर उस वृत्तके बराबर पाँच भाग कर ( क )

पूर्वदिशासे एक टेढ़ी रेखा दक्षपार्श्व में मिला दे। ( ख ) दक्षपार्श्वसे एक टेढ़ी रेखा नैर्ऋत्यकोण में मिला दे। ( ग ) नैर्ऋत्यकोण से एक सीधी रेखा वामश्रोणी में मिला दे। (घ वामश्रोणीसे एक टेढ़ी रेखा वामांश में मिला दे। ( ङ ) वामांशसे एक टेढ़ी रेखा पूर्वदिशावाली रेखा में मिला दे। ऐसा करने से 'पञ्चास कुण्ड' बन जाता है।

## द्वितीयप्रकार—

एक चतुरस्र २४ अंगुल का बनाकर उस चतुरस्र के बाहर चारों दिशाओं में पूर्व, पच्छिम, दक्षिण, उत्तर २४ अंगुलका सातवां भाग प्रत्येक दिशा में बढ़ाकर चतुरस्रको मध्य और चतुरस्रके बाहरके बढ़े हुए हिस्सेमें प्रकाल रख एक वृत्त गोलाकार बनाकर पूर्वोक्त व्यवस्था से ५ रेखा करने से पञ्चास्र कुण्ड बन जाता है।

## शनिकुण्ड—

मध्य केन्द्र से २९।२।५ के आध से (१४।५।२।)से एक गोलाकार वृत्त बनाकर उस वृत्त के दक्षपार्श्वको केन्द्र मानकर दक्षिणदिशा को केन्द्र मानकर प्रथम वृत्तके आधेसे प्रकाल घुमानेसे अर्थात् प्रथमवृत्तके मध्यमें पिलसिन रखे दक्षिण दिशामें प्रकालका शंकु रखकर घुमा देनेसे दूसरा वृत्त बनेगा। तात्पर्य यह है कि दूसरे वृत्तके आधे में चला जायगा। फिर उन दोनों वृत्तोंमें ज्या दक्षिणोत्तर मध्य से दे। तदनन्तर दोनों वृत्तोंके बाहर मध्य हिस्सेसे ४ अंगुल, ७ यव और १ यूका बायीं तरफ और ४ अंगुल, ७ यव और १ यूका दाहिनी तरफर बढ़ा दे। इस पूर्ण रेखा का नाप ५३।५।७ होगा और केवल दोनों तरफ का मिलाकर षष्ठांश ९।६।१ होगा अर्थात् ५३।५७। से ९।६।१ घटादेंगे तो भीतर वृत्तोंकी ज्याका नाप ४३।७।६ होगा। फिर बायें वृत्तके आठ भाग बराबर बराबर के करे। ( १ ) पूर्वदिशाको मुख कहे। ( २ ) अग्निकोणको अंगुश ( स्कन्ध ) कहे। ( ३ ) दक्षिणदिशाको पार्श्व कहें। ( ४ )

निऋर्तिकोणको श्रोणी कहे। (५) पश्चिमदिशाको पुच्छ कहे। वायव्यकोण श्रोणी (कटी) कहे। (६) उत्तरदिशाको पार्श्व कहे। ईशानको ङ्गुश (स्कन्ध) कहे। इसी प्रकार दाहिने वृत्त में भी आठ भाग की कल्पना करे।

तदनन्तर—बायें पार्श्वमें बढ़ी रेखा (४।७।१) के अन्तिम सिरेसे एक टेढ़ी रेखा दे, जो अंश और पार्श्वका जो मध्य है उसमें मिले। वैसे ही दाहिने तरफ रेखा (५।७।१) के अन्तिमसिरेसे अंश और पार्श्वका जो मध्य रेखामें मिला दे। फिर कारीगरसे कहकर कुण्ड रत्नावली के नकशे (सिद्धरूप को को दिखाकर उपरी भाग में अर्थात् पार्श्व और ङ्गुंश के मध्य में जो रेखा टेढ़ी दी है, वहाँ से धनुष्य के रूपको कुछ उठा दे और दूसरी तरफ वृत्त के ऊपरी भाग से स्कन्ध और पार्श्वके मध्यवाली टेढ़ी रेखा से धनुषका आकार बनावे। फिर सब नीचे के भागको मिटादेनेसे धनुषाकार कुण्ड बन जाता है। यही पक्ष उत्तम है।

मध्यकेन्द्रसे—दक्षिणदिशाकी तरफ १०।४।५। अंगुल हटाकर एक चिह्न करे। इस चिह्न से एक वृत्त १४।५।२ का बनावे। तदनन्तर मध्यकेन्द्रसे दक्षिणदिशाकी तरफ १०।४।५ अंगुल हटाकर १४।५।२ का वृत्त बनावे। तदनन्तर वृत्तके बराबर बराबरके आठ भाग करे। (१) पूर्वदिशा—मुख होगा (२) अग्निकोण ङ्गुश (स्कन्ध) होगा (३) दक्षिणदिशा पार्श्व (४) निऋर्तिकोण श्रोणी (५) पश्चिम दिशा पुच्छ (६) वायव्यकोण—श्रोणी कटी (७) उत्तर-दिशा पार्श्व (८) ईशानकोण-ङ्गुश (स्कन्ध) होगा। इसी प्रकार बायें वृत्त में भी कल्पना करे। तदनन्तर वृत्त में कल्पना करे। तदनन्तर वृत्तके भीतर ठीक मध्यसे एक रेखा दक्षिणोत्तर लंबी सीधी दे। फिर वृत्तके बाई तरफ (दक्षिणोत्तर लंबी रेखा के अन्तिम सिरे से) दक्षिण दिशासे एक रेखा लंबी—५।७।१ बढ़ा दे। वैसे ही उत्तर दिशा से एक लंबी रेखा ४।७।१। बड़ा दे। तदनन्तर—

दक्षिणदिशामें पार्श्व और स्कन्ध के मध्य में चिह्न कर ४।७।१। वाली रेखाके अन्तिमसिरेसे एक रेखा टेढ़ी ले जाकर पार्श्व और स्कन्धके मध्य चिह्न में मिला दे। वैसे ही उत्तर दिशा में—पार्श्व और स्कन्ध-के मध्यमें चिह्न कर ४।७।१ वाली—रेखाके

अ ब = ४२ ॥ अगुल, अ क = ३ ॥ अंगुल, क ब = २१ अंगुल, □ क ड उ ब = संग्राहार्धफलम् = ७३ अंगुल ४ यव, इ प क = वृत्तपाद-फलम् = ७८।४, प च ज त्रिभुजफलम् अ क इ त्रिभुज फल = कोणां-शफलम् $\frac{७७}{४} = \frac{४९}{८} = \frac{१५}{८} + ४९ = \frac{२०३}{८}$ = अंगुल २५। यव ३।

ज्यास्पृक् सूत्रान्तश्चतुरस्रम् = प फ ज उ □ तत्फलम् अर्थात्-चतुरस्र-फलम् = ११०। यह आधे का फल है। अर्थात्-मध्यसे साढ़े चौबीस अंगुल का एक आधा चाप बनावे इसका फल—२८७।३ होगा। दोनों चापका फल ५७६ होगा। मध्यसे जो एक रेखा पूर्व पश्चिम होगी वह १७ अंगुल की होगी।

अर्थात्—प और उ व्यासार्धवृत्तम्। एतत् वृत्तबहिर्गतं यद् चतुरस्रं तदेवागन्तुकं समचतुरस्रम्। तत्रैको भुजः अंगुल। ४८४ = २२ × २२ = आगन्तुक चतुरस्रफलम्। ३८० = वृत्तफलम्। यस्य व्यासः = २२। १०४।

---

नोट कुण्डरत्नावाली में जो १ श्लोक है उसकी जगह 'मध्याद् व्यासाग्नि भागे स्वरविलवविहीने कृते' ऐसा पढ़ा जाय तो अच्छा मालुम होता है। व्यास २९।२।४ का तृतीयांश निकाल कर ९।६।१ को द्वादशांश-अर्थात् स्वमति व्यास का (२९।२।४ का जो द्वादशांश-हो उसको तृतीयांश में घटा दे को ७।२।५ होगा।

[ (२) २९।२।४ का आधा १४।५।२ हुआ १४।५।२ को २९।२।४ में जोड़ेगे तो ४३।७।६ होगा। अर्थात्—सार्द्धव्यासार्ध होगा। उसमें षष्ठांश जोड़ेगे तो ९।६।१ को ५३।५।७ होगा। इतनी बढ़ी वृत्तों में और बाहर ज्या होगी। २९।२।४ का चतुर्थांश ७।२।५। ]

नोट विशेष निर्णयसिन्धु में देखें।

## राहुकुण्ड का प्रथमप्रकार—

३८ अगुल ३ यव और २ यूकाके आधेको ( १९।१।५ ) प्रकाल से नापकर मध्य विन्दुसे एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर (१) मुखसे एकसीधी रेखा दे जो वामश्रोणीमें मिले। (२) दशांशसे एक सीधी रेखा दे जो पुच्छमें मिले। (३) वामांश से एक सीधी रेखा दे जो दक्षपार्श्वमें मिले। (४) वामपार्श्वसे एक सीधी रेखा दे जो दक्ष-श्रोणीमें मिले। ऐसा करने से मध्यमें एक चतुरस्र बन जाता है। फिर वामपार्श्व से एक टेढ़ी रेखा दे जो वामांशसे मिले। अर्थात् वामांश-वाली रेखा और मुखवाली रेखा के सन्धिमें जाकर मिले। वैसे ही दक्षश्रोणीसे एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षपार्श्वमें मिले। अर्थात्-पुच्छवाली रेखा और दक्षपार्श्ववाली सन्धिमें जाकर मिले। फिर—जो रेखा वामांशसे दक्षपार्श्वकोणमें गई है उस रेखा में अर्थात्— वामांश और मुख की सन्धि से और दक्षपार्श्व पुच्छवाली रेखाकी सन्धि के बीचके हिस्सेका मध्यसाधन कर दो वृत्तार्ध बनावे। अर्थात्—आधे वृत्त बनाने से शूर्पकुण्ड बन जाता है।

---

(१) सग्राहोर्धे सार्धरामेण चापेन्तर्जोर्हा स्याद् वृत्तपादोदिकङ्कात्। सूत्राद्रौद्राद्बाह्यमौर्व्यर्हमेवं वृत्तं दद्याज्ज्यास्पृगेवं परार्धम्॥ चापे यदर्ष तत्र सार्धत्र्यङ्गुलेन संग्राहः भागः कर्तव्यः। ततः दशाङ्गुलात्सूत्रा-दन्तर्ज्यार्हः वृत्तपादः कर्तव्यः। तथा तत्र एकादशाङ्गुलेन सूत्रेण चापज्यास्पृक् बाह्यज्यार्ह वृत्तं दद्यात्। तथा च व्यासं ग्राहचिन्हयोरन्तरं २१ एकत्रिंशत्यङ्गुलं भवति। एवमेव द्वितीयार्धं भवति। अन्तर्बहि-र्ज्यार्हत्वं तदसत्वार्थम्। अत्र फलं संग्राहार्धफलम्—७३।४। वृत्तपाद-फलम्-७८।४। ज्यास्पृक् सूत्रान्तश्चतुरस्रफलम् तत्र एका कोटिः ११ पराकोटिः १० कोणांशफलम् २६ तत्रागन्तुके चतुरस्रे अंशत्रयं ७८ स्पृक् सूत्रान्तश्चतुरस्रफलम् तत्र एका कोटिः १० कोणांशफलम् २६ तत्रागन्तुके चतुरस्रे अंशत्रयं ७८ त्यक्त्वा शेषांशो ग्राह्यः २६। तथा

द्वितीय प्रकार—३९ अंगुल ६ यूकाका आधा नापकर मध्य बिन्दुसे एक गोलाकार वृत्त बनावे। तदनन्तर पूर्ववत् सब क्रिया करे। केवल वामांशवाली रेखामें जो दो वृत्तार्ध (शूर्पके आकारकी तरह बने हैं) वे इन दूसरे प्रकार में न बनकर केवल उतनी जमीनका मध्य साधनकर मध्यमें प्रकाल रख ईशानवाली सन्धिसे घुमाकर दूसरी सन्धि में मिला देनेसे शूर्पकुण्ड बन जाता है।

राहुकुण्ड—तात्पर्य यह है-दक्षश्रोणीसे रेखाका नाप ७२ अंगुल ४ यव है। दक्षपार्श्व से वामांशकी रेखाका नाप १५ अंगुल है और चतुरस्रके भीतर वाली रेखा पुच्छ और मुखकी रेखाका नाप अलग अलग ६३ अंगुल है। दक्षश्रोणी और वामपार्श्व वाली रेखा जो चतुरस्र के बाहर पड़ेगी वह अलग २६ अंगुल २ यव है अर्थात् दोनों छोर दक्षश्रोणी और वामपार्श्व १२ अंगुल ४ यव है। वामांशवाली रेखाका अर्थात् चतुरस्रका मध्य (१५ अंगुलका आधा ७।। अंगुल का) साधन कर प्रकालसे घुमा दे तो धनुषाकारकुण्ड बन जाता है। यह लघुपीठमालाका प्रकार है।

अथवा—२८ अंगुल दक्षश्रोणीवाली रेखा दक्षपार्श्वकी रेखा १० अंगुल की मुख और पुच्छ की रेखा जो चतुरस्र के भीतर है। वह अलग अलग २४, २४ अंगुल को है। इसमें इतने ही बननेसे शूर्प बनजाता है। यह लघुपीठमालाका दूसरा प्रकार है।

---

च ७३।४। एवं ७८।४ एवं ११० एकत्र २२८ एवं परार्धस्य २८८ मिलितम्—५७६।

नोट—जोड़ में २८८।७३।४, ७८।४, ११, २५ ३, २८८। आता है। पाँच यव का अन्तर पड़ता है।

नोट—मुद्रित संस्काररत्नमाला, संस्कारगणपति, कुण्डरत्नावली, लिखित—ग्रहपीठमाला आदि भी देखिये।

## केतु कुण्ड का प्रथम प्रकार—

(१) (क) मध्य विन्दु से ३ अंगुल हटाकर एक सीधी रेखा पूर्व से पश्चिम अर्थात्—दक्षिण दिशा में दे जिसका नाप ५४ अगुल होगा। (२) मध्य बिन्दु से ४ अंगुल हटकार एक सीधी रेखा पश्चिम से पूर्व अर्थात्—उत्तर दिशा में दे जिसका नाप ४५ अंगुल होगा। (अर्थात् मध्य विन्दु से ४ अंगुल हटाकर साढ़े बाइस अंगुल की रेखा पूर्व दशामें और साढ़े बाइस अंगुल पश्चिम दिशामें (दक्षिण दिशा में) दे। वैसे ही साढ़े बाइस अंगुल की सीधी रेखा पश्चिम दिशा में और २२॥ अंगुल पूर्व दिशा में (उत्तर दिशा में) दे, (३) तदनन्तर दक्षिण दिशा वाली रेखा में—पूर्व दिशा से ९ अंगुल पर एक चिह्न करे। (४) उस चिह्न से फिर ९ अंगुल पर दूसरा चिन्ह करे ऐसा करने से दो चिन्ह नव नव अंगुल के अलग २ हुए। वैसे कुल जगह १८ अंगुल हुई। (४) तदनन्तर जो पूर्व दिशा से ९ अंगुल पर चिन्ह किया है उस चिन्ह से २४ अंगुल की एक सीधी रेखा दक्षिण दिशा की तरफ ले जाय। (५) दक्षिण दिशा वाली रेखा के पूर्व दिशासे एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षिण दिशा में २४ अंगुल वाली रेखा के अन्तिम सिरे में मिले। वैसे ही दूसरे ९ अंगुलात्मक चिन्ह से एक टेढ़ी रेखा दे जो २४ अंगुल वाली रेखा के अन्तिम सिरे में मिले। ऐसा करने से केतु कुण्ड ध्वजाकर बन जाता है। (क) मध्य बिन्दु को स्पर्श करती हुई एक रेखा मुख से प्रारंभकर (पूर्व दिशा से) पुच्छ (पश्चिम दिशा तक) में मिला दे।

## द्वितीय प्रकार—

जैसे मण्डप १६ हाथ है तो फी भाग ५ हाथ ८ अंगुल होगा। तो वायव्यकोण का भाग भी ५ हाथ ८ अंगुल का होगा उसका मध्य दो हाथ ९९ अंगुल होगा। उस मध्यसे (२९।०।०।६) इक्कीस अंगुल ६ लिक्षा उत्तर की तरफ हटकर एक चिन्ह कहे उस चिन्ह से २९ अंगुल शून्य यव ६ यूका एक गोलाकार वृत्त बनाकर उस मध्य से

( यह मध्य की दण्ड बृहज्या ५८। १ । ४ होगी ) दो अंगुल और ५ यूका हटाकर एक रेखा दे जो पूर्व में पश्चिम दिशा की तरफ हो अर्थात् दक्षिण दिशा की तरफ हो। वैसे ही उसी मध्य से २ अंगुल और ५ यूका हटाकर उत्तर की तरफ एक पूर्व से पश्चिम एक रेखा दे। जिन दोनों रेखाओं का नाम अलग ५८।० । ३ होगा। तदनन्तर पूर्व दिशा से एक रेखा दक्षिणोत्तर देकर दोनों रेखाओं के अग्रभाग को मिला दे। वैसे ही पश्चिम दिशा से दक्षिणोत्तर दोनों रेखाओं के अग्रभाग से रेखा द्वारा मिला दे।

तदनन्तर दक्षिण दिशा वाली रेखा का ४ भाग बराबर बराबर करे। फी भाग १४ अंगुल, ४ यव, शून्य यूका और छः बालाग्र होगा। अर्थात् दक्षिण दिशा का अपूर्व दिशा से एक चिन्ह १४ । ४ । ० । ६ पर करे। तदनन्तर दूसरा चिन्ह वहाँ से १४ । ४ । ० । ६ पर मध्यसे करे। वही रेखा का मध्य होगा। तदनन्तर पूर्व दिशा जो १४ । ४ । ० । ६ पर चिन्ह किया है। वहाँ से एक सीधी रेखा दक्षिण दिशा की तरफ दे जिसका नाप २३ । ४ होगा। अर्थात् वहाँ से जो रेखा चलेगी वह अग्निकोण ( दक्षांश ) परिधिके २४ अंशमें लगेगी। फिर पूर्व दिशा से एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षिण दिशा में दी हुई रेखा के अन्तिम सिरे में मिले। और मध्य में पश्चिम दिशा से एक टेढ़ी रेखा दे जो दक्षिण वाली रेखा के अन्तिम सिरे में मिले। ऐसा करने से ध्वजाकार कुण्ड बनेगा।

---

नोट—३५ अंगुल की जो रेखा दक्षिण दिशा में दी गई। जिसे 'दण्ड बृहज्जा' शब्द से कह सकते हैं। उस रेखा के पाँच भाग करे। फी भाग ७ अंगुल का होगा।

नोट—व्यास ५८ । १ । ४ । गुणलव १९ । ३ । १ । ३ । इनांश १ । ४ । ७ । ३ । गुणलव और द्वादश का जोड़ २१ ।०।०।६ । होगा।

## तृतीय प्रकार केतु कुण्ड का कुण्डरत्नावली से–

५८ अंगुल, १ यव और ४ यूका के आधे को १४।४।३। प्रकाल से नाप कर मध्यविन्दु से दो अंगुल और ५ यूका हटाकर एक रेखा दक्षिण दिशा की तरफ ( पूर्व से पश्चिम दिशा की तरफ दे। तद्वत् मध्य विन्दु से दो अंगुल और ५ यूका हटाकर उत्तर दिशा की तरफ ( पूर्व से पश्चिम दिशा की तरफ ) दे। इस रेखा नाप अलग-अलग ५८ अंगुल, ३ यूका होगा जिसे ध्वजदण्ड बृहज्ज्या शब्द से कहा जाता है। तदनन्तर पूर्व दिशा से दोनों रेखाओं को मिला दे रेखा द्वारा दक्षिणोत्तर। वैसी ही पश्चिम तरफ मिला दक्षिणोत्तर। ध्वजदण्ड बृहज्ज्या से दक्षिण दिशावाली रेखा जो है। जिसका नाप ५८।३। है उसका चार भाग करे प्रत्येक भाग अर्थात्—फी भाग १४ अंगुल, ४ यव, शून्य यूका और छः बालाग्र होगा। अर्थात् पूर्व दिशा से १४। ४।०।६ पर चिह्न करे। वह प्रथम चिह्न से १४।४।०।६। पर दूसरी चिह्न करे। तदनन्तर प्रथम चिह्न से एक रेखा दक्षिण दिशा की तरफ दे, जिस रेखा का नाप लंबाई २३।०।७।४ होगा। फिर—पूर्व दिशा के कोने से एक टेढ़ी रेखा दे, जो दक्षिण दिशा में बढ़ी हुई रेखामें ( २३।१।७।४ ) में मिले। वैसे ही दक्षिण दिशा से एक रेखा २३।०। ७४ वाली में मिले। ऐसा करने से केतु कुण्ड बन जाता है।

विशेष—कुण्डरत्नावली में जो श्लोक है—[ मध्यात् घायोर्दिशायां ततिगुण ] ३ लवके स्वेन भागेन हीने कृते। ऐसा पढ़ा जाय तो उत्तम मालुम होता है। व्यास ५८।१।४ तृतीयांश १९।३।१।४ स्वद्वादशांश हुआ। व्यास ५८।१।४ का १२ वाँ भाग ४।६।६।३ हुआ इसको तृतीयांश से घटाने से १४।४।३।०। होगा। यही पक्ष उत्तम है।

अर्थात् मध्य केन्द्र से १४।४। । का एक वृत्त बनाकर उस वृत्तमें पूर्व ओर पश्चिम में एक रेखा लंबी दे जिसकी लंबाई ५८।१।१४ होगी। इस रेखा के मध्य भाग से एक रेखा दक्षिण की तरफ ( अंगुल और

२ यूका हटाकर होगी। इस रेखा का जो होगा उस मध्यमें पूर्व दिशा की तरफ १४।४।३। पर एक चिह्न होगा। इसकी लम्बाई दक्षिण की तरफ २३।०।६।४ होगी।

## अ१ कुण्डों में योनि का स्थान निर्देश—

कुण्डरत्नावल्याम्—

पश्चास्रं च त्र्यस्रक बाणकुण्डं दीर्घाम्नायास्त्रीति सौम्याग्निकाणि।
चापं शूर्प पश्चिमज्य च केतुर्दक्षाग्रः स्यात्सौमिकं चोत्तरास्यम्॥

निर्णयसिन्धुटीकायाम्—

षष्टिर्बाणैः सौम्यदिश्यग्र एव त्र्यस्रं तादृक्शूर्पक पश्चिमास्यम्।
बार्हस्पस्पत्यं सौम्यदीर्घं धनुस्तत्पश्चाद् दिग्ज्यं शुक्रियं सौम्यकोणम्॥

——: ❀ :——

नोट—(१) मध्य विन्दु की रेखा का नाप ५८ अंगुल २ युका होगा जिसे दण्ड बृहज्ज्या शब्द से कहते हैं। और २५।१।४।४ वाली रेखा का नाप मध्य विन्दु से होगा। दक्षिण दिशा वाली रेखा से तो १३।०।७।४ होगा। पूरी रेखा का नाप दक्षिण से उतर जायगी। अर्थात् पूर्वदिशा से जो मध्य १४।४।०।६ पर करेंगे वही रेखा पूरी ५०।३।१ की होगी।

# परिशिष्ट भागः

यज्ञसम्बन्धित विविध विषयों पर विवेचन

१—किसी भी यज्ञ को पूर्ण करवाने के लिए सर्वप्रथम आचार्य का वरण किया जाता हैं पश्चात् ब्रह्मा, गणपति, सदस्य, उपद्रष्टा ऋत्विकका वरण क्रमानुसार ही होता है।

२—प्रधानत: यज्ञ दोप्रकार के होते हैं, श्रौतयज्ञ तथा स्मार्न्तयज्ञ है।

३—वैदिक ग्रन्थों के अनुसार यज्ञ के दो भेद हैं - यज्ञ और महायज्ञ

४—मनु ने शूद्र प्रकरण में लिखा हैं कि - यदि शूद्र मंत्ररहित यज्ञ करना चाहे तो वे कर सकते है।

५—यज्ञादि कर्मों में समस्त नई सामग्री का उपयोग करना चाहिये।

६—काना, कोढ़ि, मूर्ख, क्रोधी, वर्णशंकर, कालेदाँत वाला, निन्दित, पतित, नपुंसक, कुदेश अर्थात विदेश में रहने वाले अंगहीन, भयंकर आकृतिवाला अधिककृष्णवर्ण वाले ब्राह्मणोंसे जपादि-कार्य न करावें।

७—अत्रि स्मृति के अनुसार—भेड़-बकरी पालनेवाला, चित्रकार, वैद्य, ज्योतिषी इन चार प्रकार के ब्राह्मण यदि बृहस्पति के तुल्य विद्वान् हो तो भी इनका यज्ञादिमें पूजन नहीं करना चाहिये।

८—धार्मिक कार्यो में सिले हुए, जले हुए, फटेहुए तथा किसी अन्य के वस्त्र को धारण करने का निषेध है।

९—यज्ञ करने वाले यजमान को यज्ञ के अंत में ब्राह्माण को गौ और वस्त्र देना चाहिये।

१०-देवयात्रा, विवाह यज्ञक्रिया तथा सभी प्रकार के उत्सवों में स्पर्शास्पर्श का विचार नही होता है।

११-यज्ञ की समाप्ति पर ब्राह्मणों को यथाशक्ति दक्षिणा देनी क्योंकि ब्रह्मवैवर्तपुराण में भी दक्षिणा रहित यज्ञका निषेध किया गया है। तथा यज्ञ में अन्य ऋत्विजों की अपेक्षा आचार्य को द्विगुणित दक्षिणा देनी चाहिये।

१२-यज्ञार्थ शूद्र से धन मांगने से मनुष्य मरने के बाद चाण्डाल होता है।

१३-जिस कर्म में बैठकर स्वाहाकार पूर्वक हविद्रव्य का त्याग किया जायें उसे होम कहते है।

१४-होम में मृगी, हंसी तथा सूकरी यह तीन प्रकार की मुद्रा कही गयी है। मुद्रा के बिना किया गया होग सर्वथा निष्फल होता है।

१५—उत्तम मण्डप बत्तीस, चौबीस, बीस, अठारह तथा सोलह हाथ का लंबा और चौड़ा कहा गया है।
मध्यम मण्डप चौदह तथा बारह हाथ का लंबा और चौड़ा कहा गया है।
अधम मण्डप दसहाथ का लंबा और चौड़ा कहा गया है।
कुछ लोग हाथके मण्डपकों भी अधम कहते हैं।

१६ —मण्डपकी ऊँचाई एक हाथ या आधा होती है।

१७—मण्डके भीतर चारों दिशाओं में चार वेदी बनती हैं। जैसे—ईशानकोणमें ग्रहवेदी, अग्निकोणमें योगिनीवेदी, नैर्ऋत्योणमें वास्तुवेदी और वायव्यकोण में क्षेत्रपालवेदी बनती है।

१८—विष्णुयाग में प्रधानवेदी पूर्व और दक्षिण दिशा के मध्य में ही होती हैं।

१९—रुद्रयागमें प्रधानवेदी ईशानकोण में ही होती है।

२०—रुद्रयागमें प्रधानवेदीके दक्षिणमें 'ग्रहवेदी' होती है।

२१—प्रधानवेदी एक हाथ ऊँची और दो हाथ चौड़ी होती है। अन्य क्षेत्रपाल आदि की चारों वेदियाँ एक-एक हाथ ऊँची तथा एक-एक हाथ चौड़ी होती है।

२२—ग्रहवेदीमें तीन सीढ़ी (वप्र) होती हैं। ग्रहवेदीकी तरह वास्तु, क्षेत्रपाल और योगिनी वेदीमें भी तीन-तीन सीढ़ी (वप्र) ही होनी चाहिये।

२३—प्रधानवेदीमें दो सीढ़ी (वप्र) होती हैं।

२४—ग्रहवेदी आदि सभी वेदियोंकी ऊपर की मध्य की सीढ़ी तीन-तीन अंगुल ऊँची और दो-दो अंगुल चौड़ी होती हैं। नीचेवाली तीसरी सीढ़ी दो अंगुल चौड़ी होती है।

२५—ग्रहवेदी आदि सभी वेदियों की तीनों सीढ़ियोंमें ऊपरवाली सीढ़ी सफेद रंगकी, मध्यवाली लाल रंगकी, और नीचेवाली काले रंगकी होती है।

२६—प्रधानवेदीकी ऊपरवाली सीढ़ी सफेद रंगकी और नीचेवाली लाल रंगकी होती हैं।

२७—यज्ञमण्डप में सोलह स्तम्भ होते हैं। बड़े मण्डपमें अर्थात् सौ हाथके मण्डपमें पच्चास हाथके मण्डपमें और बत्तीस हाथके मण्डपमें यज्ञमण्डपकी मजबूतीके लिये सोलह स्तम्भ से अधिक स्तम्भ भी लगाये जा सकते हैं।

२८—सोलह हाथ के यज्ञमण्डप में भीतरवाले चार स्तम्भ नौ हाथके और बाहरवाले बारह स्तम्भ पाँच हाथके होते हैं।

२९—मण्डपस्थ स्तम्भों के पाँचवें हिस्सेको भूमिमें गाड़ देना चाहिये।

३०—यज्ञ-मण्डपमें स्तम्भों के लगानेका क्रम यह है कि-यज्ञमण्डप जितना बड़ा हो, उसमे आधे प्रमाणके भीतरी चार स्तम्भ और बाहरी बारह स्तम्भ सात हाथ के लगाने चाहिये।

३१—यज्ञमण्डप के स्तम्भ यज्ञिय वृक्षके अथवा बाँसके अथवा अन्य पवित्र वृक्षके लगाने चाहिये।

३२—यज्ञमण्डप के स्तम्भों की मोटाई सोलहअंगुल, दसअंगुल अथवा यथेच्छ कही गई है।

३३—यज्ञमण्डपके सोलह स्तम्भों में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, सूर्य, गणेश, यम नागराज, स्कन्द ( कार्तिकेय ) वायु, सोम, वरुण, अष्टवसु, धनपद ( कुबेर ), बृहस्पति और विश्वकर्मा—इन सोलह देवताओंका स्थापन होता है।

३४—यज्ञ-मण्डपके सोलह स्तम्भों में इस प्रकार रंगीन वस्त्र लगाना चाहिये—मण्डपके भीतरवाले चार स्तम्भोंमें क्रमशः १-ईशान कोणके स्तम्भमें लाल वस्त्र, २—अग्निकोणके स्तम्भमें सफेद वस्त्र, ३- नैर्ऋत्यकोणके स्तम्भमें काला वस्त्र ४—वायव्य कोणके स्तम्भमें पीला वस्त्र ही होना चाहिये।

मण्डपके बाहरवाले बारह स्तम्भोंमें इन रंगों के वस्त्र होने चाहिये—१ ईशानकोणके स्तम्भमें लालवस्त्र, २—ईशान और पूर्वके स्तम्भके मध्य में सफेद वस्त्र, ३—पूर्व ओर अग्निकोणके स्तम्भके मध्यमें कालावस्त्र, ४-अग्निकोणके स्तम्भमें काला वस्त्र, ५-अग्निकोण और दक्षिणके मध्यके स्तम्भमें सफेद वस्त्र, ६—दक्षिण और नैर्ऋत्यकोणके मध्यके स्तम्भमें धूम्र वस्त्र, ७-नैर्ऋत्यकोणमें सफेद वस्त्र, ८-नैर्ऋत्य और पश्चिमके मध्यके वस्त्र, ९—पश्चिम और वायव्यकोणके मध्यके स्तम्भमें सफेद वस्त्र, १०-वायव्यकोणमें पीला वस्त्र, ११- उत्तर और वायव्य-कोणके मध्यमें पीला वस्त्र और १२—उत्तर और ईशानकोणके मध्यमें लाल वस्त्र ही होना चाहिये।

३५-दश दिक्पाल की दस ध्वजा होती हैं। ये ध्वजा त्रिकोण ही होती है।

३६-ध्वजा दो हाथ चौड़ी और पाँच हाथ लंबी होती है। किसी आचार्य का मत है कि-ध्वजा एक हाथ चौड़ी और एक हाथ लंबी होती है।

३७-पूर्व दिशा मेंपीले रंगकी ध्वजा इन्द्रकी होती हैं तथा इसका वाहन सफेद रंगका हाथी होता है। अग्निकोणमें लाल रंगकी ध्वजा अग्निकी होती है। इसका वाहन सफेद रंगका मेढ़ ( मेढ़ा ) होता है।

दक्षिण दिशामें काले रंगकी ध्वजा यमकी होती है तथा इसका वाहन लाल रंगका महिष ( भैंसा ) होता है। नैर्ऋत्यकोणमें नील

रंगकी ध्वजा निर्ऋतिकी होती है व इसका वाहन सफेद रंगका सिंह होता है।

पश्चिम दिशामें सफेद रंगकी ध्वजा वरुणकी होती है तथा इसका वाहन धूम्र वर्णकी मछली होती है। वायव्यकोणमें धूम्र अथवा हरे रंगकी ध्वजा वायुकी होती है व इसका वाहन काले रंगका हरिण ( मृग ) होता है।

उत्तर दिशा में सफेद अथवा हरे रंगकी ध्वजा सोमकी होती है और इसका वाहन सुवर्णके तुल्य अश्व ( घोड़ा ) होता है। ईशानकोणमें सफेद रंगको ध्वजा ईशानकी होती है और इसका वाहन लाल रंगका बैल होता है।

३८—ब्रह्माकी ध्वजा ईशानकोण और पूर्वके मध्यमें सफेद या लाल रंगकी होती है तथा इसका वाहन सफेद रंगका हंस होता है।

३९—अनन्तकी ध्वजा नैर्ऋत्यकोण और पश्चिम के मध्यमें सफेदरंग की या कालेरंगकी होती है और इसका वाहन गरुड़ होता है।

४०—ध्वजाओंको दस-दस हाथके लंबे बाँसमें लगाना चाहिये।

४१—हाथी, मेढ़ा, भैंस, सिंह, मछली, मृग, घोड़ा, बैल, हंस और गरुड़ ये ध्वजाओंके वाहन हैं।

४२—दश दिक्पालकी दस पताकाएँ होती है। ये चतुष्कोण (चौकोर) होती हैं।

४३—ध्वजाओंकी तरह पताकाओंका भी रंग होता है।

४४—पताका सात हाथ लंबी और एक हाथ चौड़ी होता है।

४५—पूर्व दिशाकी पताकामें आयुध वज्र होता है। अग्निकोणकी पताकामें आयुध शक्ति अर्थात् तलवार होती है। दक्षिण दिशाकी पताकामें आयुध दण्ड होता है। नैर्ऋत्यकोणकी पताकामें आयुध खड्ग होता है। पश्चिम दिशाकी पताकामें आयुध पाश होता है। वायव्यकोणकी पताकामें आयुध अङ्कुश होता है। उत्तर दिशाकी पताकामें आयुध गदा होती है। ईशानकोणकी पताकामें आयुध

त्रिशूल होता है। पूर्व और ईशानकोणके मध्यकी पताकामें आयुध कमण्डलु होता है और पश्चिम और नैर्ऋत्यकोणकी पताकामें आयुध चक्र होता है।

४६—वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अंकुश, गदा और त्रिशूल-ये पताकाओंके आयुध हैं।

४७—पताकाओंको दस-दस हाथके लंबे बाँस में लगना चाहिये।

४८—महाध्वज एक होता है और यह त्रिकोण होता है।

४९—महाध्वज दस हाथका अथवा सात हाथका अथवा पाँच हाथका लंबा होता है और पाँच हाथका अथवा साढ़े तीन हाथका अथवा तीन हाथका चौड़ा होता है।

५०—महाध्वज पंचरंगा अथवा चित्र-विचित्र रंगका होता है।

५१—महाध्वजको दस हाथ, सोलहहाथ, इकतीस हाथ अथवा बत्तीस हाथके लंवे बाँसमें लगाना चाहिये।

५२—महाध्वजको यज्ञमण्डपके मध्य में अथवा यज्ञमण्डपके ईशान कोणमें ही लगाना चाहिये।

५३—यज्ञमण्डप में चार मण्डपद्वार होते हैं। यह अढ़ाई हाथ चौड़े और तीन हाथ ऊँचे होता हैं।

५४ मण्डपके द्वार ( दरवाजे ) बल्ली आदिके बनते हैं।

५५—यज्ञमण्डपके चारों दिशाओंके चारो द्वारोंमें चार 'तोरणद्वार' होते हैं। ये चारों तोरणद्वारसे एक-एक हाथ अथवा दो दो हाथकी दूरीपर ही बनाने चाहिये।

५६—तोरणद्वारोंमें मण्डपके द्वारों की तरह नीचे की ओर लकड़ी ( देहली ) नहीं होती।

५७—तोरणद्वार बनाने के लिये पूर्वमें पीपल वट ( वरग की, दक्षिण-में गूलरकी, पश्चिममें पीपलकी अथवा पाकरकी और उत्तरमें पकार वट या ( बरगद ) की लकड़ी होनी चाहिये। यदि चारों द्वारों के लिये उपरोक्त अलग-अलग लकड़ी प्राप्त न हो सके,

तो निर्दिष्ट लकड़ियोंमें से किसी भी उपलब्ध एक लकड़ी से भी तोरणद्वार बनाये जा सकते है।

५८—पूर्वद्वारके तोरणमें पीला वस्त्र, दक्षिणद्वारके तोरणमे काला वस्त्र, पश्चिमद्वारके तोरण में सफेद वस्त्र और उत्तरद्वारके तोरण में पीला वस्त्र लगाना चाहिये।

५९—विष्णुयाग में चारों तोरण द्वारोंके ऊपर क्रमशः पूर्वमें शंख, दक्षिणमे चक्र, पश्चिममें गदा और उत्तरमें पद्म लगाना चाहिये।

६०—विष्णुयाग में उत्तम मण्डपमें १४ अंगुल लंबा और ३॥ अंगुल चौड़ा शंखतोरण पर गाड़ना चाहिये। मध्य मण्डपमें १२ अगुल लंबा और अंगुल चौड़ा शंख तोरणपर गाड़ना चाहिये। अधम मण्डपमें १० अंगुल लंबा और २॥ अंगुल चौड़ा शंख तोरण पर गाड़ना चाहिये।

उपरोक्त विष्णुयज्ञ के उत्तमादि मण्डपके शंखादिके कीलोंका पञ्चमांश तोरण पर गाड़ देना चाहिये व द्वारका पाँचवाँ हिस्सा मण्डप से एक हाथ बाहर पूर्ववत् गाड़ना चाहिये।

६१—रुद्रयागमें चारों दिशाओंमें लगे हुए चारों तोरणद्वारोंके ऊपर त्रि शूल बनाना चाहिये।

६२—रुद्रयागमें उत्तम मण्डपमें १३ अगुल लंबा और ३ अंगुल चौड़ा त्रिशूल तोरण गाड़ना चाहिये। मध्यम मण्डपमें ११ अंगुल लंबा और २॥। अंगुल चौड़ा त्रिशूल तोरणमें गाड़ना चाहिये। अधम मण्डपमें ९ अगुल लंबा और २। अंगुल चौड़ा त्रिशूल तोरणमें गाड़ना चाहिये। अधम मण्डपमें २ अंगुल त्रिशूलको तोरणमें गाड़ना चाहिये।

उपरोक्त रुद्रयज्ञके उत्तमादि मण्डपके त्रिशूलादिके कीलोंका पञ्चमांश तोरण पर गाड़ना चाहिये और द्वारका पाँचवाँ हिस्सा मण्डप से एक हाथ बाहर पूर्ववत् गाड़ना चाहिये।

६३-यज्ञमण्डपके बाहर अट्ठारह कलश होते है। इनमें चार कलश मण्डपके बाहर चारों दिशाओं चारों कोनोंमें रखे जाते हैं और चार कलश चारों विदिशाओंके चारों कोनोंमें रखे जाते है और एक कलश पूर्व और ईशानकोणके मध्यमें ब्रह्माका होता है तथा एक कलश पश्चिम और नैर्ऋत्यकोणके मध्यमें अनन्तका होता है। ये दसकलश दशदिक्पालके होते हैं।

मण्डपके चारों द्वारोंपर दो-दो कलश होते हैं, जिन्हें 'द्वार-कलश' भी कहते हैं। इस प्रकार यज्ञमण्डपके अट्ठारह कलश होते है।

६४-यज्ञमण्डप के शिखरकाप्रमाण प्रायःकिसी भी कुण्डमण्डपग्रन्थकार ने नहीं लिखा है। अतः महर्षि कात्यायनके 'अर्थात् परिमाणम्' इस प्रमाणके अनुसार मण्डपानुकूल ही शिखरका निर्माण करना चाहिये।

६५-यज्ञमंडप के भीतर ऊपर छतकी ओर चारों तरफ सफेद वस्त्रका चँदवा लगाना चाहिये।

६६-स्तभों को वस्त्रों से ढकना चाहिये। यह शारदातिलकका मत है।

६७-( क ) आठ हाथ के मण्डप को 'जय' संज्ञा ( ख ) दश हाथके मण्डप को 'विजय' संज्ञा ( ग ) बारह हाथ के मण्डप को 'भद्र' संज्ञा। ( घ ) चौदह हाथ के मण्डपको 'सुभद्र' संज्ञा। (च) सोलह हाथ के मण्डप को 'आनाक' संज्ञा। ( छ ) अठारह हाथ के मण्डप को विश्वरूप' संज्ञा। ( ज ) बीस हाथ के मण्डप को 'ध्रुव' संज्ञा। बाइस हाथ के मण्डप को सुभद्रक' संज्ञा। चौबीस हाथ के मण्डप को 'सुप्रसन्न' संज्ञा बोधायन मुनि ने कही है।

६८-चौबीस हाथ के मण्डप का नाम घन, बाइस हाथ का मण्डप दक्ष, बीस हाथ का मण्डप घर्घर, अठारह हाथ का सुघोष, कला हाथ

का कामराजक, चौदह हाथ काञ्चन, बारह का विराम, दशहाथ का घोर, आठ का धन मण्डप विधानपारिजातके मत से होता है।

६९—पन्द्रह अंगुल खात पक्ष में नव अंगुल की मेखला होगी।

७०—मुष्टिमात्र कुण्ड में मेखला की ऊचाई और लवाई दो अंगुल, एक अगुल और आधी अंगुल की होगी।

७१—अत्रिमात्र कुण्ड मेखला तीन दो और एक अंगुल की होगी।

७२—दो हाथ के कुण्ड में मेखला छः चार और अँगुल की बराबर की होगी।

७३—चार हाथ के कुण्ड में आठ, छ और चार अंगुल की मेखला होगी।

७४—छः हाथ के कुण्ड में मेखला दस आठ और छ: अंगुल की होगी।

७५—आठ हाथ के कुण्ड में मेखला बारह, दस और आठ अंगुल की होगी।

७६—दस हाथ के कुण्ड में मेखला चौदह, बारह और दसअंगुल की होगी।

७७—कुण्डकल्पद्रुममतसे कुण्ड वेदीका अन्तर सवाहाथ छोड़कर करे यह प्राय: सोलह हाथ मण्डप परक है।

७८—क्रियासार मतसे बेदी और कुण्ड का अन्तर दो हाथ का होना चाहिये। चौबीस हाथ मण्डप परक है।

७९—दिशा और विदिशा में वेदियों के लिए तेरह-तेरह अंगुल जमीन छोडकर वेदी बनानी चाहिये।

८०—चतु: कुण्डी पक्षे खात नास्मीत्युक्तं हेमाद्री—यत्रोपदश्ते कुण्डं चतुरकं तत्र कर्णगि वेदास्मसधंचन्द्रं च वृतं पद्मनिभितं तथा। पीठ वद्वर्धयेत्कुण्डं सुप्रमाणेवगर्तकम् ॥

८१ चतुरस्रकुण्ड शांति, विजय लक्ष्मी सिद्धि, स्तंभन कार्य के लिए बनाना चाहिये।

८२—अर्धचन्द्रकुण्ड—वशीकरण, प्रजावृद्धि, संताप, शान्तिकामना, मंगलकामना और मारणकामना के लिए चाहिये।

८३—त्रिकोण—आकर्षण, शत्रुनाश, और द्वेषकामना के लिए बनाना चाहिये।

८४—षट्कोण कुण्ड—मारण, स्तंभन और उच्चाटन कार्य के लिए बनाना चाहिये।

८५—वृत्तकुण्ड—अभिचार, सुख-मंगलकामना, और शान्तिकामना के लिए बनाना चाहिये।

८६—पद्मकुण्ड—मानसिद्धि, धन कामना, आरोग्य कामना, वृष्टि कामना, प्रजनन, पौष्टिककार्य तथा सब कामनाओं के लिए बनावे।

८७—योनिकुण्ड—पुत्र, ऐश्वर्य और आकर्षणकामना के लिए बनावे।

८८—अष्टास्रकुण्ड—मुक्तिकामना; शुभकामना और योनिसिद्धि कामना के लिए बनावे।

८९—पञ्चास्रकुण्ड—भूत-प्रेतादि को हटाने के लिए होता है।

९०—सप्तास्रकुण्ड—अभिचार के लिए होता है।

९१—आचार्यकुण्ड—सम्पत्ति और ऐश्वर्य को देने वाला होता है।

९२—कौशिक परिशिष्ट मत से पद्मकुण्ड सब कामना के लिए बना सकते हैं। 'सर्व कर्मसुविज्ञेयं कुण्डं पक्ष निधं तु यत्।'

९३—नित्यषोडशिकार्णवतन्त्र का मत है कि—

१—योनि कुण्ड से बोलने में चपलता और आकृति उत्तम होती है। (२) वर्तुल से लक्ष्मी प्राप्ति होता है। (३) अर्धचन्द्र

कुण्ड से उपरोक्त तीनों बातें मिलती हैं। (४) षडस्र और त्रिकोण कुण्ड से खेचरत्त्व की प्राप्ति होती है। (५) चतुरस्र से शान्ति, लक्ष्मी, पुष्टि और आरोग्यता प्राप्त होती है। (६) पद्मकुण्ड से सब प्रकार की सम्पत्ति जल्दी मिलती है। (७) अष्टकोण कुण्ड से अच्छा फल प्राप्त होता है।

विशेष-किसी का कहना है कि—जिस कुण्ड के ग्रन्थ द्वारा चतुरस्र आदि कुण्डों का निर्माण करे उसी से जितने आवश्यक हो कुण्डों को बनावे। ऐसा कोई नियम नहीं है। फिर भी उनके त्याग का कोई विधिवाक्य हो ऐसा भी नहीं देखने में आया।

९४—बारह अंगुल मेखलापक्ष में योनि की ऊचाई पन्द्रह अंगुल और चौड़ाई तेरह अंगुल होगी।

९५—मेखला कुण्ड के बाहर बनेगी कुण्ड के भीतर नहीं।

९६—कुण्ड के चारों तरफ पृथ्वी को छोड़कर बाहर-बाहर मेखला बनेगी।

९७—नवअंगुल ऊँची, तीन अंगुल ऊँची और विस्तार-अंगुल, तीन अंगुल और दो अंगुल अलग होगा।

९८—कुण्डो दधि-मेखला कण्ठ के बाहर रहती है।

'कण्ठे तद्बाध्मे मेखला स्युः,

कुण्ड कल्पद्रुम कुण्ड रूप सहशाहि मेखला।

९९-कुण्ड कौमुदी और कुण्ड रामवाजपेयी मत से पद्मकुण्ड को छोड़कर बाकी के कुण्डों में कुण्ड के आकार की या पद्माकार नाभी बनावे।

कुण्डकौमुदी—नाभी दो अंगुल ऊँची और चार अंगुल चौड़ी होती है। कुण्ड कारिका—४ अगुल चौड़ी २ अंगुल ऊँची नाभी होती है। नाभी ठीक कुण्ड के मध्य मे रहती है।

नाभी पक्षकुण्ड में नाभी ६ अंगुल लम्बी उतनी ही ऊँची होती है और वर्तुल होती है। उसके चारों तरफ केसर लगते है।

१००—गुरु ( आचार्य ) और ऋत्विज मिलकर कुण्ड की भूमि का परीक्षण करे। ( विधान पारिजात पृ० ५७८ )

१०१—यज्ञ यागादि में ब्राह्मणयुग्म रखने चाहिये।

१०२—अंग विकल धन-धान्य पहारी सर्वांग विकल आदि ऋत्विज व्रत होने से यजमान का नाश होता है।

१०३—अनुष्ठान क्रिया कुशल, यज्ञों की प्रक्रिया को जानने वाले, मन्त्रार्थ वेता, स्वस्त्रीसेवी ब्राह्मणों को यज्ञ कार्य में ग्रहण करना चाहिये।

१०४—योनी के न रहने से स्त्री किसी के मत से पुत्र का मरण होता है।

१०५—कुण्ड के बन जाने पर मण्डप के चौतरे के ऊपर लबा-लब आ जाने पर योनि बनाना चाहिये।

'स्थलदारभ्य योनिः स्यात् इति स्वायंभव वचनात्।

१०६—योनी के एक दम ऊपर आजाने पर मध्य में कुछ ऊँची रखे। प्रयोगसारमतसे मध्य में निम्न हो। क्योंकि मध्य में उच्चता रखने पर योनि के एक दम आगे जो छिद्र रहेगा। उस से आज्य का जाना असंभव होगा। यह कोटिहोमकारमत है।

१०७—योनी के ऊपर चारों तरफ परिधि पर मेखला एक अंगुल या दो अंगुल की रखे।

१०८—कुण्ड की मेखला पश्चिमदिशासे या दक्षिणदिशा के ठीक मध्य से योनी बनाना चाहिये।

१०९—रामवाजपेयी मत से—पुरुष का पाँचवां अंश ( भाग ) कर ( हाथ ) होता है।

११०—सांप्रदायिकमत से—दुगनी से मध्य अंगुली पर्वकी पूरी लंबाई तक होती है।

१११–कात्यायन मत से एड़ी और बाहुओं को ऊपर दीवाल के सहारे उठाकर या बिना एड़ी उठाए खड़े होकर नाप करावे। उसका जो पांचवा अंश हो। उसे हस्त को कुण्डप के और मण्डप के कार्य में लेवे। यह पक्ष श्येनादिचिति मात्र विषय परक है। हेमाद्रआदि ग्रन्थकार ने भी अपनी यही स्वीकृति दी है।

११२–किसी के मत से अंगूठे के पर्वपर्यन्त तक ग्रहण करना लिखा है।

११३–कुण्ड कार्य में मुष्यङ्गलं देहांगुल का ग्रहण करे। पंचरात्र मत से वैकल्पिक है।

११४—'कर्म करोऽथवा' कर्ता का हाथ पूरी अंगुली तक ग्रहण करे।

११५—घर के ईशान भाग में मण्डप बनवावे। वसिष्ठ संहिता का मत है।

११६—शिवालय, तीर्थ के किनारे पर, गोशाला अपने घर में या किसी संशोधित भूमि में मण्डप बना सकते है। यह कुण्डकल्पद्रुम का मत है।

११७—जलाशयोत्सर्गकार्य में सीढ़ी से दस हाथ छोड़कर ईशान उत्तर दिशा में मण्डप बनवावें।

११८—द्विमुख, त्रिमुख, चतुर्मुख, पंचमुख, षष्ठमुख में दक्षिणोत्तर दो कुण्ड होंगे।

११९—इसमें आचार्य कुण्ड दक्षिण दिशावाला होगा।

१२०—एक मुख में आचार्य कुण्ड मध्य का होगा। पांच कुण्डी ईशान का सात कुण्डी में ईशान और पूर्व का होगा।

१२१—शतमुख में नैऋ‍र्त्यका होगा।

१२२—नवग्रह में सूर्य प्रधान होने से आचार्य कुण्ड सूर्य काहोगा।

१२३—दस मुख में आचार्य कुण्ड नैऋ‍र्त्यका ही होगा।

१२४—'यो निमध्यगतं लिगं मृत्पिण्डो' दक्षिणोतरौ। कुण्ड मरीचिमाला।

१२५—योनि का मुख पूर्व दिशा की तरफ अधोमुख रहना चाहिये।
१२६—योनी की लंबाई एक अंगुल अग्रभाग कुण्ड के मध्य में पश्चिम दिशाकी तरफ से प्रवेश कराना चाहिये।
१२७—योनि के न होने पर अपस्मार रोग होता है।
१२८—मानकी कमी में दरिद्रता होती है।
१२९—सूत्रकी अधिकतासे मित्र से शत्रुता होता है।
१३०—न्यून खात में असिद्धि होती है।
१३१—अधिक खात में असुरों का राज्य होता है।
१३२—टूट फूट में उच्चाटन होता है।
१३३—छिद्रता में मूक होता है।
१३४—योनि का मध्य कूर्मपृष्ठोत्तर होना चहिये।
१३५—योनि के ऊपर चारों तरफ एक अंगुल मेखला बनावे।
१३६—योनि पीछे से कुछ ही ऊँची हो।
१३७-कोटिहोमकारमतसे-घर के बाहर मण्डप बनाने की आवश्यकता हो तो अपने घर की जितनी लंबाई हो उतनी जगह छोड़कर मण्डप और कुण्ड बना सकते हैं।
१३८—जमीन से एकहाथ या आधाहाथ मट्टी आदि से ऊँची करने वही मण्डप का स्थल ( भूमि ) माना जायगा। 'स्थलादर्काङ्गुलोच्छ्रायं मण्डपस्थमीरितम्' सिद्धान्तशेखर महाकपिल पञ्चरात्र मत से मण्डप भूमि एक ही हाथ ऊँची करे।
१३९ ब्राह्मणादि वर्ण के व्यक्ति अपने-अपने कार्यों के अनुसार मण्डप विस्तार कर सकते हैं।
१४०—घन, घोष, बिराज, कांचन, कामराजक, सुवोष, घर्घर, दक्ष और गहन ये नौ मण्डप के नाम हैं।

# महत्त्वपूर्ण यज्ञों की हवन सामग्री

## विष्णुयाग हवन सामग्री

| | | |
|---|---|---|
| तिल छह मन | चावल तीन मन | यव डेढ़ मन |
| चीनी एक मन | घृत दो मन | कमलगट्टा एक सेर |
| चन्दनका चूरा दो सेर | गुग्गुल एक सेर | पंचमेवा ,, सेर |
| भोजपत्र दो पाव | चन्दनका चूर दो सेर | गुग्गुल ,, सेर |
| पंचमेवा दो सेर | भोजन दो पाव | |
| आमकी लकड़ी बीस मन | | |

## रुद्रयाग हवन सामग्री

| | | |
|---|---|---|
| तिल छह मन | चावल तीन मन | यव डेढ़ मन |
| चीनी एक मन | घृत दो मन | कमलगट्टा एक सेर |
| चन्दन चूरा दो सेर | गुग्गुल एक सेर | पंचमेवा एक सेर |
| भोजपत्र दो पाव | | |
| आमकी लकड़ी बीस मन | | |

## विश्वशान्ति महायाग हवन समाग्री

| | | |
|---|---|---|
| तिल आठ मन | चावल चार मन | यव दो मन |
| चीनी एक मन | घृत दो टीन | पंचमेवा एक सेर |
| चन्दनका चूरा दो सेर | कमलगट्टा एक सेर | भोजपत्र दो पाव |
| गुग्गुल एक सेर | | |
| आमकी लकड़ी बीस मन | | |

## शिवशक्तिमहायाग हवन सामग्री

| | | |
|---|---|---|
| तिल आठ मन | चावल चार मन | यव दो मन |
| चीनी एक मन | घृत दो टीन | पंचमेवा एक सेर |
| चन्दनका चूरा दो सेर | कमलगट्टा एक सेर | भोजपत्र दो पाव |
| गुग्गुल एक सेर | | |
| आमकी लकड़ी बीस मन | | |

## गणेशयाग हवन सामग्री

| | | |
|---|---|---|
| तिल ग्यारह मन | चावल छहः मन | यव तीन मन |
| चीनी डेढ़ मन | घृत दो टीन | पंचमेवा एक सेर |
| चन्दन का चूरा दो सेर | कमलगट्टा एक सेर | भोजपात्र दो पाव |
| गुग्गुल दो सेर | | |
| आमकी लकड़ी पच्चीस मन | | |

## लक्ष्मीनारायणयाग हवन सामग्री

| | | |
|---|---|---|
| तिल ग्यारह मन | चावल साढ़े पाँच मन | यव ढ़ाई मन |
| चीनी एक मन | घृत दो टीन | पंचमेवा एक सेर |
| चन्दनका चूरा दो सेर | कमलगट्टा एक सेर | भोजपत्र दो पाव |
| गुग्गुल एक सेर | | |
| आमकी लकड़ी बीस मन | | |

## महत्त्वपूर्ण यज्ञों की आहुति का विधान

१— रुद्र यज्ञ में १८११ आहुती-लघुरुद्रयज्ञ में १९९२१ आहुति-महारुद्रयज्ञमें २१९१३१ आहुति तथा अतिरुद्रयज्ञमें २४१०४४१ आहुति का विधान होता हैं।

२— विष्णुयाग में १६००० आहुति होती हैं। इसमें १००० पुरुष सूक्त की आवृत्ति होती हैं। महाविष्णुयाग में १६०००० आहुती होती हैं। इसमें १०००० पुरुषसूक्त की आवृति होती हैं। अति विष्णुयाग ३२०००० आहुती होती हैं। इसमें २०००० पुरुषसूक्त की आवृति होती है।

३—गणेशयाग में १००००० (एक लाख) आहुति होती हैं।

४— लक्ष्मीयाग में श्री सूक्त (ऋग्वेदोक्त) मंत्रों से आहुति होती है।

५—विश्वशांति याग में शुक्लयजुर्वेद के छत्तिसवें अध्याय के सभी मंत्रों से आहुति होती हैं।

# यज्ञ-सामग्री

रोली एक पाव
मौली एक पाव
धूपबत्ती पाँच पैकेट
केसर छह मासा
कपूर चार तोला
अबीर ( गुलाब )
बुक्का ( अभ्रक )
सिन्दूर
पीसी हलदी एक पाव
यज्ञोपवीत पचास
रूई एक पाव
चावल
सुपारी पांच सेर
पान पचास प्रतिदिन
पेड़ा एक सेर प्रतिदिन
ऋतुफल दो दर्जन प्रतिदिन
बतासा डेढ़ सेर
पंचमेवा डेढ़ सेर
मिश्री डेढ़ सेर
इलायची छोटी दो तोला
लवंग दो तोला
जावित्री दो तोला
जायफल पन्द्रह
अतरकी शीशी दो
गुलाबजलकी शीशी एक

कस्तूरीकी शीशी एक
दुग्ध एक किलो प्रतिदिन
दही एक पाव प्रतिदिन
चीनी एक पाव प्रतिदिन
गो घृत
सहत एक पाव
गोबर
गोमूत्र
पीली सरसों
कच्चासूत एकपाव
पुष्पमाला दोदर्जन प्रतिदिन
पुष्प फुटकर प्रतिदिन
तुलसी प्रतिदिन
दूर्वा प्रतिदिन
बिल्वपत्र प्रतिदिन
कुशा प्रतिदिन
गंगाजल प्रतिदिन
नारियल जटादार पच्चीस
गिरिके गोले-११
चन्दनका मुट्ठा-एक
हरसा एक
रुद्राक्षकी माला एक
एक रुपये का लालरंग
" " हरारंग
" " पीला रंग
" " काला रंग

पंचरत्नकी पुड़िया सात

पञ्च-पल्लव—

आम्रपत्र

गूलरपत्र

पाकरपत्र

वटपत्र

पीपलपत्र

सर्वौषधि—

दो रुपये का मुरा

" " जटामासी

" " वच

" " कूट

" " शिलाजीत

" " आँबाहलदी और दारूहलदी

" " चन्दन का चूरा

" " चंपा

" " नागरमोथा

सप्तमृत्तिका—

हाथीके स्नानकी मिट्टी

घोड़े स्थानकी मिट्टी

बिल ( दीमक ) की मिट्टी

नदी संगमकी मिट्टी

तालाबकी मिट्टी

राजद्वार ( चतुष्पथ ) की मिट्टी

सप्तधान्य—

यव डेढ़ सेर

गेहूँ डेढ़ सेर

धान डेढ़ सेर

तिल डेढ़ सेर

ककुनी एक पाव

सावाँ दो पाव

चना डेढ़ सेर

नवग्रह समिधा—

मदारकी लकड़ी एक सौ आठ

पलाशकी लकड़ी " "

खैरकी लकड़ी " "

अपामार्गकी लकड़ी " "

पीपलकी लकड़ी " "

गूलरकी लकड़ी " "

शमीकी लकड़ी " "

दूर्वा " "

कुशा " "

मृगचर्म नवीन एक

कंबल नवीन एक

सूतकी डोरी मोटी दस हाथकी

रूई एक पाव

लोहेकी कटिया चार

तांबेका तार पचीस हाथ

काष्ठकी चौकी नूतन दो

काष्ठका पीढ़ा नूतन चार

काला उड़द डेढ़ सेर

यज्ञपात्र—
प्रणीता
प्रोक्षणी
स्रुवा
स्रुची
स्फ्य
वसोर्धारा
अरणि-मन्था
शंख एक
घण्टा एक
घड़ौल एक
आरती दानी एक
प्रधान कलश चाँदीका अथवा
ताम्रका एक
वास्तु कलश ताम्रका एक
क्षेत्रपाल कलश ताम्रका एक
योगिनी कलश ताम्रका तीन
अथवा एक
रुद्र कलश ताम्रका एक
प्रवेश कलश ताम्रका एक
कलश ताम्रके अठारह
पुण्याहवाचन कलश कमण्डलु एक
पूर्णपात्र(बधोना) ब्रह्माके लिये एक
प्रधान कुण्डका ताम्रका एककलश
थाली मुरादाबादी चार
परांत बड़ी एक
आज्यस्थाली ( कटोरा बड़ा )
हवनार्थ एक
चरुस्थाली ( बघोना ) एक
अभिषेकपात्र एक
काँसेकी थाली एक
कड़छुल पीतल एक
सड़सी पीतल एक
चिमटा पीतल एक
छायापात्र (कांसेकी कटोरी) दो
कटोरी पूजनार्थं ग्यारह
बालटी पीतल की एक
गंगासागर एक

देवताओंको चढ़ाने के वस्त्र—
भगवान् के लिये रेशमी
पीतांबर एक
रेशमी जनानी साड़ी एक
कब्जा जनाना एक
रेशमी चुदड़ी एक
सौभाग्य पिटारी एक
शृङ्गारदान एक
दुशाला अथवा ऊनी चादर एक
धोती पन्द्रह अथवा ग्यारह
दुपट्टा ,, अथवा ,,
अंगोछा ,, अथवा ,,
ध्वजा-पताका तथा वेदी आदि-
के लिये वस्त्र—
सफेद कपड़ा पचीस गज
लाल कपड़ा पन्द्रह गज

हरा कपड़ा पन्द्रह गज
काला कपड़ा,, गज
पीला कपड़,, गज
चँदवा पचरंगा बड़ा एक
चंदवा छोटे पाँच
मण्डपाच्छादनार्थ वस्त्र सफेद थान दो
देवताओंकी तस्वीर बड़ी सोलह
शीशा बड़ा एक
घुँघरू पीतलके पचास
प्रतिमा सुवर्ण की
४ तोलेकी अथवा १। तोलेकी १

प्रधान देवी की प्रतिमा सुवर्णकी १। तोलेकी एज
भगवान्के लिये सुवर्णकीएकमाला
वास्तुकी प्रतिमा सुवर्णकी छह मासेकी एज
क्षेत्रपालकी प्रतिमा सुवर्णकी ६ मासेकी एक

योगिनीकी प्रतिमा सुवर्णकी ६ मासेकी एक
नवग्रहकी प्रतिमा सुवर्णकी ६ मासेकी एक

रुद्रकी प्रतिमा सुवर्णकी ६ मासेकी एक
सुवर्णकी शलाका ३ मासेकी एक
सुवर्णकी जिह्वा ३ मासेकी एक
सुवर्ण खण्ड इक्यावन
गरुडकी प्रतिमा चाँदीकी एक
नन्दीकी प्रतिमा चाँदीकी एक
चाँदीका सिंहासन एक
चाँदीका छत्र ,,
चाँदीका चंवर ,,
चाँदीकी थाल ,,
चाँदीकी कटोरी दो
चाँदीका गिलास एक
चाँदीकी तस्तरी ,,
चाँदीका पंचपात्र ,,
चाँदीकी आचमनी ,,
चाँदीका अर्घा ,,
चाँदीका तष्टा ,,
चाँदीकी धूपदानी ,,
चाँदीकी आरतीदानी ,,
चाँदीका चोकोरपत्र ( १६ अंगुल लंबा और चौड़ा ) एक

वस्त्र-सामग्री—

धोती रेशमी सूती
दुपट्टा ऊनी, रेशमी अथवा सूती

अंगोछा
लोटा
गिलास
पंचपात्र
आचमनी
गोमुखीमाला
खड़ाऊँ
यज्ञोपवित
आसन
अंगूठीसुवर्णकी

**आचार्य-वरणसामग्री—**

पीतांबर रेशमी एक
दुशाला एक
शिल्क रेशमी एक
अंगोछा एक
लोटा चाँदीका एक
गिलास चाँदीका,,
पंचपात्र चाँदीका एक
आचमनी चाँदीकी एक
अर्घा चाँदीका एक
तष्टा चाँदीका ,,
सुवर्णकी अँगूठी ,,
सुवर्णकी माला ,,
रुद्राक्षकी माला,,
ऊनी गलीचे का अतरदान,,
गोमुखी माला ,,
खड़ाऊँ एक जोड़ा
यज्ञोपवीत एक

**शय्यादान-सामग्री —**

पलंग नेवारका एक
दरी एक
रूईका गद्दा एक
चाँदनी
चदरा एक
सुजनी एक
मसहरी एक
रजाई एक
कंबल एक
तकिया दो
धोती एक
दुशाला एक
शिल्क एक
पीतांबर एक
जनानी साड़ी एक
कमीज एक
साफा ( पगड़ी ) एक
छाता एक
जूता ( स्वदेशी ) एक जोड़ा
घड़ी एक
पानदान ,,
पीकदान ,,
अतरदान ,,
भोजनके पात्र पन्द्रह या ग्यारह
लालटेन ,,

सभी प्रकारके अन्न
गोघृत टीन एक
शीशा बड़ा एक
सौभाग्यपिटारी एक
शृंगारदान एक
अंगूठी सुवर्ण की एक
सिकड़ी सुवर्ण की एक
कण्ठी सुवर्ण की एक
चाँदीके बर्तन पाँच
गीताकी पुस्तक एक
वेद और पुराणकी पुस्तकें